"हिन्दी कहानियों में नारी का स्वरूप एवं शोषण का विश्लेषण"

पी0के0 विश्वविद्यालय, शिवपुरी (म0प्र0)

हिन्दी विषय से पी-एच0डी0 उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध प्रबन्ध

द्वारा

चित्रलेखा

नामांकन सं0–161595204531

शोध निर्देशक

डॉ0 विक्रांत शर्मा

(विभागाध्यक्ष)

कला संकाय, हिन्दी विभाग

वर्ष–2023

पी०के० विश्वविद्यालय

थनरा, पोस्ट-दिनारा, शिवपुरी(म०प्र०) पिनकोड-473551

Scanned with OKEN Scanner

P.K. UNIVERSITY

(University established under section 2f of UGC act 1956 vide mp government act no 17 of 2015)

Village- Thanra Tehsil, Karera NH 27 District Shivpuri M.P.}

CERTIFICATE OF THE SUPERVISOR

This is to certify that the work entitled "हिन्दी कहानियों में नारी का स्वरूप एवं शोषण का विश्लेषण" is a piece of research Work done by Smt. चित्रलेखा under My/Our Guidance and Supervision for the degree of Doctor of Philosophy of डॉ0 विक्रांत शर्मा University (M.P) India.

I certify that the candidate has put an attendance of more than 240 day with me. To the best of my Knowledge and belief the thesis:

I – Embodies the work of the candidate himself/herself.

II – Has duly been completed.

III – Fulfill the requirement of the ordinance relating to the Ph.D. degree of the University.

Signature of the Co-Supervisor

Date: .....

Signature of the Supervisor

Date: .....

P.K. University SHIVPURI (M.P.)

Scanned with OKEN Scanner

P.K. UNIVERSITY

(University established under section 2f of UGC act 1956 vide mp government act no 17 of 2015)

Village- Thanra Tehsil, Karera NH 27 District Shivpuri M.P.}

DECLARATION BY THE CANDIDATE

I declare that the thesis entitled "हिन्दी कहानियों में नारी का स्वरूप एवं शोषण का विश्लेषण" is my own work conducted under the supervision of डॉ0 विक्रांत शर्मा (Supervisor) at विभागाध्यक्ष, कला संकाय, हिन्दी विभाग, पी0के0 विश्वविद्यालय, शिवपुरी (म0प्र0)।

Approved by Research Degree Committee. I have put more than 240 days of attendance with Supervisor at the center.

I further declare that to the best of my knowledge the thesis does not contain my part of any work has been submitted for the award of any degree either in this University or in any other University Without proper citation.

Chitralekha

Signature of the candidate

Date: .....

Place: .....

Scanned with OKEN Scanner

P.K. UNIVERSITY

(University established under section 2f of UGC act 1956 vide mp government act no 17 of 2015)

Village- Thanra Tehsil, Karera NH 27 District Shivpuri M.P.}

FORWARDING LETTER OF HEAD OF INSTITUTION

The Ph.D. thesis entitled "हिन्दी कहानियों में नारी का स्वरूप एवं शोषण का विश्लेषण"

Submitted by Smt. चित्रलेखा is forwarded to the university in six copies. The candidate has paid the necessary fees and there are no duesoutstanding against him/her.

Name ......Dr. Vikrant Sharma......Seal

....

Date: ....

Place: ....

HOD
Department of Art
P.K. University
Shivpuri (M.P.)

....

(Signature of Head of Institution where the Candidate was registered for Ph.D degree)

Signature of the Supervisor Date:

Date: .... Address: ....

Place: ....

Scanned with OKEN Scanner

आभार

"हिन्दी कहानियों में नारी का स्वरूप एवं शोषण का विश्लेषण"

यह मेरे लिए मात्र शोध कार्य अथवा शोध का विषय मात्र नहीं हैं, अपितु मेरे जीवन में एक बहुत बडा परिवर्तन है। जीवन में किसी भी बडे कार्य को करने के लिए मजबूत इच्छा शक्ति एंव अन्य लोगों की आशाऐं , प्रेम एंव सहायता की आवश्यकता होती हैं ताकि लक्ष्य प्राप्ति आसानी से हो सके ।

इसमें सबसे पहले मैं पी.के विश्वविद्यालय के कुलाधिपति श्री जगदीश प्रसाद शर्मा एवं कुलपति प्रो. डॉ. जी. पवन कुमार (कार्यवाहक), प्रशासनिक निर्देशक श्री जितेन्द्र मिश्र, कुलसचिव श्री दीपेश नामदेव, संकाय अध्यक्ष डीन अकादमिक डॉ. एमन फातिमा सभी को हृदय से धन्यवाद करती हूँ कि सभी ने शैक्षणिक एंव प्रशासनिक रूप से मेरा सहयोग एवं मार्ग दर्शन किया।

पी.के. विश्वविद्यालय की शोध शाखा अध्यक्ष डा. भास्कर नल्ला एवं उनके सहयोगी आशीष गुप्ता सभी का आभार व्यक्त करती हूँ जिन्होंने मुझे शोध सम्बंधी जानकारियों से अवगत कराया।

आभार के इस क्रम में मैं अपने परम श्रृद्धेय गुरू, निर्देशक एव शोधशाखा उपाध्यक्ष डॉ. विक्रांत शर्मा जी की हृदय से आभारी रहूगीं जिन्होंने अपने व्यस्ततम कार्यालीन समय में से समय निकाल कर मेरे अध्यायों का अवलोकन कर समस्त प्रकार की त्रुटियों का नियोजन किया और मुझे कृतार्थ किया।

पी.के. विश्वविद्यालय की पुस्तकालय प्रभारी मिस निशा यादव का धन्यवाद करती हूँ जिन्होंने मुझे कई प्रकार के शोध प्रबन्ध पढने हेतु पुस्तकालय में अनुमति प्रदान की।

Scanned with OKEN Scanner

आभार के इस क्रम में मुझे प्रेरणा देने वाले मेरे ससुर श्री राम गोपाल कुशवाहा जी के प्रति में सदैव ऋणी रहूंगी जिन्होंने अपना पूरा जीवन आर्थिक रूप से कमजोर बच्चों को शिक्षित करने का संकल्प लिया और छोटा सा विद्यालय राम लखन सरस्वती ज्ञान मंदिर इंटर कॉलेज हंसारी, झांसी में संचालन कर रहे हैं। मेरे शोध कार्य में सदा अपना आशीर्वाद बनाए रखा मुझे कभी भी निराश नहीं होने दिया । मेरे पिता श्री मेवालाल कुशवाहा जो स्वास्थ्य विभाग (एन.टी.पी.सी.ऊंचाहार) रायबरेली उत्तर प्रदेश में मरहम पट्टी विभाग में लोगों की सेवा निस्वार्थ भाव से करते और मेरी मां श्रीमती फूल कुंवर कुशवाहा जी जो मेरे लिए मेरी आदर्श है सबका मैं हृदय से धन्यवाद करती हूं।

आभार के इस क्रम में मैं अपने पति श्री ओमबाबू कुशवाहा जी का तहेदिल से आभार व्यक्त करती हूं जिन्होंने मेरा हर परिस्थिति में पूरा सहयोग किया और विश्वास दिलाया कि मैं शोध कार्य करने में सफल होऊँगी। उनके सहयोग के बिना मैं यह कार्य पूर्ण नहीं कर पाती। परिजनों शुभचिंतकों की शुभेक्षाएँ तथा मित्रों का सहयोग इस पावन कार्य को पूर्ण करने हेतु सदैव मिलता रहा।

कम करो ऐसा की पहचान बन जाये,
हर कदम चलो ऐसा कि निशान बन जाये।
यहां जिंदगी तो सभी काट लेते हैं,
जिंदगी जियो ऐसी की मिसाल बन जाये।।

Chitralekha

शोधकर्ती

चित्रलेखा

Scanned with OKEN Scanner

विषय वस्तु

1. शीर्षक पृष्ठ
2. पर्यवेक्षक प्रमाण–पत्र
3. घोषणा पत्र
4. आभार
5. कोर्स वर्क प्रमाण–पत्र
6. प्री–पीएच.डी. सबमिशन प्रमाण–पत्र
7. प्लेगरिज्म प्रमाण–पत्र
8. सेन्ट्रल लाइब्रेरी प्रमाण–पत्र
9. शोध सार
10. शोध प्रबन्ध
11. वर्कशॉप प्रमाण–पत्र
12. पुस्तकालय प्रमाण–पत्र
13. लेख
14. शोध पत्र

Scanned with OKEN Scanner

P.K.University

Ref. No. PKU/2017/07/05/RO-STUD/21 Dated 05-07-2017

To,

CHITRALEKHA

Course Work Certificate

Dear Student,

This is to certify that **CHITRALEKHA** (Reg. No PH16ART002HN) son / daughter of Mr. /Ms. **M.L.Kushwaha**, student of Ph.D. (HINDI) has successfully passed the course work examination with 'A' grade from P.K.University, Karera, Shivpuri.

05/07/17.

Registrar

Village - Thanara, Distt. Shivpuri (M.P.)
Conatct : 7241115081, 7241115082, 7241115083, www.pkuniversity.org / www.pkuniversity.edu.in

Scanned with OKEN Scanner

P.K.University
Shivpuri (M.P.)

Enrolment Number 161595204531

Select Course: Ph.D. in Hindi (Course Work)

Select Semester: 1

Result

Enrolment Number : 161595204531

Candidate Name : CHITRALEKHA

Father's Name : M L KUSHWAH

Mother's Name : PHOOLKUWAR KUSHWAHA

Course : Ph.D. in Hindi (Course Work)

Year/Sem : 1

Session : 2016-17

Subject Name	Internal T	Internal T	Internal P	Internal P	External T	External T	External P	External P	
Research Methodology	N/A	N/A	N/A	N/A	50	35	N/A	N/A	35 / 50
Subject Specialization	N/A	N/A	N/A	N/A	100	68	N/A	N/A	68 / 100

Marks Obtained 103 Result Pass Max Marks 150

- Student must pass in Theory and Practical separately.
- For pass the candidate is required to obtain 40% marks in each paper and 50% marks in aggregate.
- For pass the Ph.D candidate is required to obtain 65% marks in aggregate.

Scanned with OKEN Scanner

P.K.UNIVERSITY
SHIVPURI (M.P.)

University Established Under section 2f of UGC ACT 1956 Vide MP Government Act No 17 of 2015

Ref no: PKU/2023/03/27/RD-office/0247 Date: 27/03/2023

To
Sri/Mrs Chitralekha
Research Scholar -2016-17
Enrollment no: 161595204531
Dept. of Hindi
Faculty of Arts.

Sub: Revised R.D.C Meeting on: 06/02/2023.

Dear Shri / Mrs. **Chitralekha**

This is to inform you that this is with influence to your RDC on 11-11-2017and the topic of your Ph. D. is "हिन्दी कहानियों में नारी का स्वरूप एवं शोषण" . However on your request to change the Title of your Ph.D. work a revised RDC meeting was held on 6-02-2023 to partially modified your thesis as "हिन्दी कहानियों में नारी का स्वरूप एवं शोषण का विश्लेषण".

However the date of start of your Ph. D. work will remain 11-11-2017.

1. Guide / Supervisor **Dr.Vikrant Sharma**
2. Start of Research work 11-11-2017.

27.03.2023
Registrar
P.K.University
Shivpuri –M.P

ADDRESS: VILL: THANRA, TEHSIL: KARERA, NH-27, DIST: SHIVPURI, M.P. 473665,
MOB: 7241115088, Email:registrar.pkuniversity@gmail.com

Scanned with OKEN Scanner

P.K.UNIVERSITY
SHIVPURI (M.P.)

UniversityEstablished Under section 2F of UGC ACT 1956 Vide MP Government Act No 17 of 2015

CENTRAL LIBRARY

Ref. No. C.LIB/PKU/2023/Ph.D Scholar/104 Date: 24.07.2023

CERTIFICATE OF PLAGIARISM REPORT

1. Name of the Research Scholar	:	Chitralekha
2. Course of Study	:	Doctor of Philosophy (Ph.D.)
3. Title of the Thesis	:	हिंदी कहानियों में नारी का स्वरुप एवं शोषण का विश्लेषण
4. Name of the Supervisor	:	Dr Vikrant Sharma
5. Department	:	Hindi
6. Subject	:	Hindi
7. Acceptable Maximum Limit	:	10% (As per UGC Norms)
8. Percentage of Similarity of Contents Identified	:	1%
9. Software Used	:	Ouriginal (Formerly URKUND)
10. Date of Verification	:	09.08.2022

Signature of Ouriginal Coordinator
(Librarian, Central Library)
P.K.University, Shivpuri (M.P.)

LIBRARIAN
P.K. University
Shivpuri (M.P.)

ADD: VIL: THANRA, TEHSIL: KARERA, NH-27, DIST: SHIVPURI (M.P.) -473665
MOB: 7241115902, Email: library.pku@gmail.com

Scanned with OKEN Scanner

P.K.UNIVERSITY
SHIVPURI (M.P.)

UniversityEstablished Under section 2F of UGC ACT 1956 Vide MP Government Act No 17 of 2015

CENTRAL LIBRARY

Ref. No. C.LIB/PKU/2023/LIB-SCH/ 106 Date: 11.08.2023

TO WHOM IT MAY CONCERN

This is to certify that Chitralekha, Research Scholar in Department of Hindi under Faculty of Art, constituent unit of P.K.University, Shivpuri (M.P.) has visited the Central Library of P.K.University for collecting the literature reviews for her research work.

Her Research topic is **"हिंदी कहानियों में नारी का स्वरुप एवं शोषण का विश्लेषण"**.

I wish her all the best for all future endeavors.

Librarian
Central Library

LIBRARIAN
P.K. University
Shivpuri (M.P.)

ADD: VIL: THANRA, TEHSIL: KARERA, NH-27, DIST: SHIVPURI (M.P.) -473665
MOB: 7241115902, Email: library.pku@gmail.com

Scanned with OKEN Scanner

P.K. UNIVERSITY

(University established under section 2f of UGC act 1956 vide mp government act no 17 of 2015)

Village- Thanra Tehsil, Karera NH 27 District Shivpuri M.P.}

COPYRIGHT TRANSFER CERTIFICATE

Title of the Thesis: "हिन्दी कहानियों में नारी का स्वरूप एवं शोषण का विश्लेषण"

Candidate's Name: चित्रलेखा

COPYRIGHT TRANSFER

The undersigned hereby assigns to the P.K. University, all copyrights that exists in and for the above thesis submitted for the award of the Ph.D. degree.

Chitralekha

CHITRALEKHA

Date: .....

Place:.....

Note: However, the author may reproduce/publish or authorize others to reproduce, material extracted verbatim from the thesis or derivative of the thesis for author's personal use provided that the source and the University's copyright notice are indicated.

Scanned with OKEN Scanner

अनुक्रमणिका

प्रथम अध्याय 01-48

(क) कहानी का संक्षिप्त विकास

- हिन्दी कहानी प्रारम्भिक युग (सन् 1800 से 1911 तक)
- प्रेमचन्द युग (सन् 1912 से 1937 तक)
- प्रेमचन्दोत्तर युग (सन् 1937 से 1950 तक)
- हिन्दी कहानियों में नारी के विविध रूप
- हिन्दी कथा साहित्य में नारी

द्वितीय अध्याय 49-74

हिन्दी कहानियों में नारी शोषण का विश्लेषण

- प्रेमचन्द पूर्व की कहानियों में नारी शोषण का विश्लेषण
- प्रेमचन्द की कहानियों में नारी शोषण का विश्लेषण
- जयशंकर प्रसाद की कहानियों में नारी शोषण का विश्लेषण
- जैनेन्द्र कुमार का कहानियों में नारी शोषण का विश्लेषण
- यशपाल की कहानियों में नारी शोषण का विश्लेषण

तृतीय अध्याय 75-93

हिन्दी कहानियों में नारी का आर्थिक शोषण का विश्लेषण

कुछ कहानीकारों द्वारा .....

1.फणीश्वर नाथ 'रेणु'

2.शिवप्रसाद सिंह

3.धर्मवीर भारती

Scanned with OKEN Scanner

4.हिमांशु जोशी
5.मन्नु भण्डारी
6.रामदरश मिश्र

चतुर्थ अध्याय 94-113

हिन्दी कहानियों में नारी के पारिवारिक शोषण का विश्लेषण

कुछ कहानीकारों द्वारा .....

1.प्रेमचन्द
2.शिवप्रसाद सिंह
3.कमला देवी चौधरी
4.उषा देवी मिश्रा
5.भगवती प्रसाद बाजपेयी
6.यशपाल
7.मेहरून्निशा परवेज
8.कृष्णा सोवती
9.ममता कालिया
10.रवीन्द्र कालिया
11.ज्ञान रंजन
12.श्रीकान्त वर्मा

पंचम अध्याय 114-131

हिन्दी कहानियों में नारी के सामाजिक शोषणका विश्लेषण

कुछ कहानीकारों द्वारा .....

- प्रेमचन्द
- भगवती प्रसाद बाजपेयी
- जैनेन्द्र

Scanned with OKEN Scanner

- इलाचन्द्र जोशी
- उपेन्द्रनाथ 'अश्क'
- विष्णु प्रभाकर
- यशपाल
- भगवती चरण वर्मा
- राजेन्द्र यादव
- मोहन राकेश
- कमलेश्वर
- धर्मवीर भारती

षष्टम अध्याय 132-151

उपसंहार और उपलब्धि

- यथार्थवाद की देन, कहानियों में शोषण का विश्लेषण
- बदलते परिवेश में संस्कृति का मोह भंग
- नारी जागरण और शोषण का प्रतिरोध
- नारियों में स्वाभिमान एवं चेतना का विकास
- पुरूषों के प्रति विभिन्न मान्यतायें

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची 152-156

Scanned with OKEN Scanner

"हिन्दी कहानियों में नारी का स्वरूप एवं शोषण का विश्लेषण"

प्रथम अध्याय

(क) कहानी का संक्षिप्त विकास

- हिन्दी कहानी प्रारम्भिक युग (सन् 1800 से 1911 तक)
- प्रेमचन्द युग (सन् 1912 से 1937 तक)
- प्रेमचन्दोत्तर युग (सन् 1937 से 1950 तक)
- हिन्दी कहानियों में नारी के विविध रूप
- हिन्दी कथा साहित्य में नारी

Scanned with OKEN Scanner

प्रथम अध्याय

(क) कहानी का संक्षिप्त विकास

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। अतः जहाँ वह अपनी अनेकानेक आवश्यकताओं की पूर्ति समाज द्वारा करता है, वहीं अपनी भावनाओं और संवेगों को भी संप्रेषित करने की अपेक्षा रखता है। जब–जब मनुष्य की चेतना में भावना और संवेगों ने तनाव उत्पन्न किया है और उसे एकाकीपन के संयास ने तोड़ा है तब–तब उसने कहानी कही और सुनी है।

भारत में कथा साहित्य की परम्परा प्राचीन है। वेदों, उपनिषदों, पुराणों और जैन साहित्य में भारत का प्राचीन कहानी साहित्य बिखरा हुआ है। साहित्य में भी अनेक प्रसिद्ध कथायें मिलती है। इसके अतिरिक्त कारणों के साहित्य में भी इतिहास 'बात' 'प्रसंग' और 'दास्तान' आदि के रूप में कथा साहित्य की सृष्टि हुई है। मध्य युगीन हिन्दी साहित्य में जायसी, दुरावन, मैदान, नूर मुहम्मद तथा कासिमवाद आदि के प्रेमाख्यान प्राप्त होते हैं। बृजभाषा गद्य साहित्य में भी चौरासी वैष्णय की वार्ता और दो सौ वावन वैष्णय की वार्ता के रूप में कहानी साहित्य उपलब्ध होता है।[1]

इसके अतिरिक्त साहित्य के समानान्तर जन जीवन में भी कथाओं की विपुल सम्पत्ति मौखिक परम्परा के रूप में प्राप्त होती है।[2]

उपर्युक्त लिखित व मौखिक कथा साहित्य उत्तम शिक्षा, राष्ट्रदेश एवं मनोरंजन के उद्देश्य को लेकर ही प्रचलित हुआ, सामाजिक यथार्थ से इसका कोई सम्बन्ध नहीं रहा, फिर भी अपनी सरलता और सहजता के कारण कालांतर में यह पौराणिक एवं लोक साहित्य हिन्दी कहानी की आधार भूमि के रूप में प्रयुक्त हुआ। डॉ. इन्द्र के कथनानुसार इसने कथा साहित्य के विकास में भरपूर योगदान दिया।[3]

हिन्दी कहानी ने विकास के रूप में एक और परम्परागत कहानी का अनुगमन किया और दूसरी ओर अत्याधुनिक तकनीकी दृष्टि से बंगला, अंग्रेजी एवं

[1] प्रसाद और प्रेमचन्द्र के कथा साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन पृ.8
[2] समीक्षा शास्त्र पृ.657
[3] प्रसाद और प्रेमचन्द्र के कथा साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन पृ.8

अन्य पाश्चात्य प्रभावों को भी अंगीकार किया है। वस्तुतः हिन्दी मातृभाषा वर्तमान एवं पाश्चात्य कहानी की ही देन है, किन्तु उसका रूप परम्परागत कहानी से ही उद्‌भुत है। हिन्दी कहानी अपने उद्‌भव काल से ही सतत् परिवर्तन शील रही है और उत्तरोत्तर विकास की ओर उन्मुख रही है। हिन्दी कहानी के इस रूप को अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से हम निम्न रूपों में विभाजित कर सकते हैं– 1. प्रारम्भिक युग, 2. प्रेमधन युग, 3. प्रेमचन्दोत्तर युग, 4. स्वातन्त्रयोत्तर युग।

हिन्दी कहानी प्रारम्भिक युग (सन् 1800 से 1911 तक)

हिन्दी समालोचकों ने इसे अभ्यास युग की संज्ञा दी है। इसमें अनेक कहानीकारों ने कहानी लिखने का अभ्यास किया। अतः यह कहानी का उत्पत्तिकाल था। 19वीं शताब्दी के आरम्भ में इशा उल्ला खां की 'रानी केतकी की कहानी' प्रकाश में आयी। इसके पूर्व लल्लू लाल जी की 'प्रेम सागर' 'सिंहासन बत्तीसी' तथा 'बेताल पच्चीसी' आदि कहानियां लिखी जा चुकी थी, परन्तु ये सभी कहानियां अनुदित थी और संस्कृत की छाया मात्र थी।[4] इन कहानियों में सामाजिक उद्‌देश्य कहीं दृष्टिगोचर नहीं होता, और कहीं भी नारी शोषण की अभिव्यक्ति नहीं दिखाई देती है। ये कहानियां स्पष्ट रूप से प्राचीन कथा परम्परा के अन्तर्गत आती है।[5]

द्विवेदी जी के शब्दानुसार ''इनमें लेखकों का अपना कोई वैयक्तिक दृष्टिकोण नहीं है और उनकी घटनाओं में किसी प्रबल वैयक्तिक मन के समर्थन का लक्ष्य नहीं है।[6] अतः इन कहानियों को हिन्दी गद्य के उदाहरण हेतु कहानियों की श्रेणी में ही रखा जा सकता है। इनसे हिन्दी कहानी के स्वरूप पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।

अधिकांश आलोचकों ने 'रानी केतकी की कहानी' को हिन्दी की सर्वप्रथम मौलिक कहानी होने का गौरव प्रदान किया है। किन्तु इसमें कथा को छोड़कर कहानी के अन्य तत्वों का पूर्ण अभाव है।

---

[4] प्रसाद और प्रेमचन्द्र के क्या साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन पृ.8
[5] प्रसाद और प्रेमचन्द्र के क्या साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन पृ.93
[6] हिन्दी साहित्य उसका तद्‌भव और विकास, पृ.415

सदल मिश्र द्वारा रचित 'नासिकेतोपाध्याय' पर यद्यपि पौराणिक कहानी साहित्य का पूर्ण प्रभाव है फिर भी उद्देश्य की दृष्टि से इस रचना का एक अलग महत्व है।

इंशा अल्ला खां, लल्लू लाल और सदल मिश्र की रचनाओं के साथ कहानी साहित्य का विकास एक लम्बे समय तक रूक गया। डॉ. लक्ष्मी नारायण लाल ने इस व्यवधान पर प्रकाश डालते हुए लिखा है– वह लम्बा व्यवधान दो दिशाओं से प्रस्तुत हुआ– प्रथम, गद्य कथा के पाठकों की अत्यन्त कमी थी और कोई भी गद्य कथा पढ़ने से दूर भागता था। दूसरी दिशा में राजनीतिक व्यवधान था।[7]

इसके उपरान्त राजा शिव प्रसाद 'सितारे हिन्द' की 'राजा भोज का सपना' और 'वीर सिंह वृत्तान्त' को भी पूर्ण रूप से कहानी नहीं माना जाना चाहिए। इनमें चरित्र चित्रण और कथोपकथन का अभाव है।

कहानी का वास्तविक रूप में प्रारम्भ भारतेन्दु युग से ही हुआ है। भारतेन्दु हरिशचन्द्र की 'एक अद्भुत अपूर्व स्वप्न' पंडित गौरी शंकर की 'देवरानी–जिठानी' और 'कहानी टका कमानी' आदि कहानियाँ प्राप्त होती है। 'राजा भोज का सपना' और 'एक अद्भुत अपूर्व स्वप्न' यद्यपि कहानियों की कोटि में नहीं आती किन्तु इनमें मौलिकता के दर्शन अवश्य होते हैं। इनमें कथानक विकसित नहीं हुआ। कहानी मानते हुए वस्तु विन्यास का अविकास इन रचनाओं में खेलता है।[8]

पंडित गौरी शंकर जी 'देवरानी–जिठानी' की कहानी और 'कहानी टका कमानी' में उपदेशात्मकता और मनोरंजन के ही तत्व मिलते हैं। इसी समय की अन्य कहानियाँ है– मुंशी शादी लाल की 'किस्सा शाह रूप' हरिकृष्ण जौहर की 'शीरी परहाद' गोपाल राम महमरी की 'चतुर चंचला' मुंशी देवी प्रसार की 'इंसाप संग्रह' आदि। ये सभी कहानियाँ मौखिक परम्परा के अधिकांशतः निकट है। ठाकुर प्रसाद सिंह ने इन कहानियों की विवेचना करते हुए लिखा है कि हम रचनाओं में संस्कृत महाकाव्यों की दर्शन परम्परा, उर्दू का कथानकों की विलम्बित शैली देखने को मिलती है। ठीक वैसे ही जैसी उस पीढ़ी का आदमी अपने रहन–सहन,

[7] हिन्दी कहानी की शिल्प विधि का विकास, पृ.36
[8] हिन्दी कहानी, पृ.82

वेश–भूषा तथा मानसिकताहीन में एक अजीव सम्मिश्रण था। उसका मन अभी पीछे की की ओर दौड़ता था। यही कारण था कि कहानी यथार्थ से कटी रही। फिर भी भारतेन्दु युगीन कहानी साहित्य का हिन्दी कहानी के विकास में अपूर्ण योगदान रहा है। उपन्यासों की भाँति इसके मूल में भी बंगला और अंग्रेजी का प्रभाव काम कर रहा था। उस युग में बंगला, मराठी और अंग्रेजी से कहानी हिन्दी में अनुदित की गई।

हिन्दी कहानी में सर्वप्रथम कहानी लाने का श्रेय एक मात्र 'सरस्वती' मासिक पत्रिका को है। इस पत्रिका से सच्चे अर्थों में आधुनिक कहानियों का सूत्रपात हुआ।[9] इसमें सबसे पहले किशोरी लाल गोस्वामी की 'इन्द्वमशी' कहानी प्रकाशित हुई। तत्पश्चात् शुक्ल जी की कहानी 'ग्यारह वर्ष का समय', द्विवेदी जी की 'तीन देवता', पार्वतीय नन्दन की 'भूतों की हवेली', पृथ्वी पाल की 'एक अलौकिक घटना' सूर्य नारायण की 'चन्द्रहास का अद्भुत आख्यान', यंग महिला की 'दलाईवासी' वृन्दावन लाल वर्मा जी 'राखी चन्द्र भाई' मैथिली शरण की 'नकली किला' महामंगल की 'भूत की कोठरी', श्रीलाल की 'एक ज्योतिषी की आत्मकथा', मैथिली शरण की 'निन्यानवें का फेर', भगवान दास की 'प्लैग की चुडैल' तथा गिरजादत्त बाजपेयी की 'पंडित और पंडितानी' नामक कहानियाँ प्रकाशित हुई। इनमें से मार्मिकता की दृष्टि से 'इन्द्वमती' 'ग्यारह वर्ष का समय' और 'दलाईवासी' इन तीन भाव प्रधान कहानियों की पहली मौलिक और साहित्यिक कहानियाँ माना जाता है।

किशोरी लाल की 'इन्द्वमती' कहानी को आचार्य शुक्ल, डॉ. श्रीकृष्ण लाल और डॉ. बृह्मदत्त शर्मा ने हिन्दी की सर्वप्रथम मौलिक कहानी स्वीकार किया है। परन्तु यह कहानी अपने रूप और कथानक में शेक्सपियर के 'टैम्पेस्ट' की छायानुवाद बताई जाती है। अतः डॉ. लक्ष्मी नारायण लाल ने शिल्पविधि की दृष्टि से आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की 'ग्यारह वर्ष का समय' कहानी को हिन्दी की प्रथम मौलिक रचना माना है। डॉ0 भोलाराम की दृष्टि में यह कहानी आधुनिकता के

[9] भारतीय कहानियों का स्वरूप यहां आकर एक विराम पाता है और उसकी आत्मा विदेशों से चली आ रही परमात्मा से मिलकर एक नया स्वरूप ग्रहण करती है, तब हिन्दी के आधुनिक कहानी का सूत्रपात होता है। राजेन्द्र यादव, कहानी, स्वरूप और संवेदना, पृ.11

लक्षणों से परिपूर्ण अवश्य है। फिर भी 'दलाईवासी' कहानी में जैसा निखार है वैसा इसमें नहीं।[10]

तात्कालिक दृष्टि से ये तीनों ही कहानियां मौलिकता से युक्त हैं, फिर भी इन तीनों कहानियों को लेकर निरन्तर विवाद होता रहा है। भारतेन्दु कालीन कहानियों की अपेक्षा ये कहानियां आधुनिक अवश्य है, परन्तु उनका आधार मात्र सत्य ही रहा है। इनका उद्देश्य मात्र मनोरंजन प्रतीत होता है। डॉ0 राधेश्याम गुप्त के अनुसार इसका मुख्य कारण यह था कि कहानीकार कल्पना पर निर्भर था। उसका वस्तुतः जीवन से कोई वात्तभ्य नहीं था। जैसा कुछ यह अपने मानस में कर सका, यही कहानी बन गया।[11]

प्रेमचन्द्र युग (सन् 1912 से 1937 तक)

प्रेमचन्द्र युग से पूर्व कहानी साहित्य सामन्तवादी युग की देन कहा जा सकता है, क्योंकि इसमें युग संघर्ष का प्रभाव था। कोरी काल्पनिकता के कारण मनोरंजन ही एक मात्र उद्देश्य था। प्रेमचन्द्र युग में औद्योगिक विकास तथा विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं के निरन्तर प्रकाशन ने कहानी साहित्य को जनमानस से जोड़ दिया है। सरस्वती के प्रकाशन के बाद सन् 1911 में जयशंकर प्रसाद ने 'इन्द्र' नामक पत्रिका में अपनी 'ग्राम' नामक कहानी छपवायी। इलाचन्द्र जोशी ने 'गज्यमाता' तथा प्रेमचन्द्र ने 'सप्त सरोज' के द्वारा 'एक नवीन कहानी युग' का पटारा खोला। जहां पहले की कहानियों में पौराणिक, ऐतिहासिक, जासूसी, वीरताप्रधान, उपदेशात्मक एवं प्रेम सम्बन्धी कथानक होते थे, वहां ये विश्व व्यापक और समाज सापेक्ष हो गये। समाज के निकट सम्पर्क में आने से कहानीकार यथार्थ समस्याओं का चित्रण करने लगे। प्रसाद की अन्य उच्च कोटि की कहानियों 'छाया' 'प्रतिध्वनि', 'आकाश दीप', 'बिसाती', 'इन्द्र लाल', 'स्वर्ग के कठहर', हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि मानी गई है। वे कहानियां अत्यधिक प्रभावोत्पादक, अन्तद्वन्द्व और भाषानुकूल प्रकृति का चित्रण करने में समर्थ है।

[10] हिन्दी कहानियों का विवेचनात्मक अध्ययन, डॉ. बृहम् दत्त शर्मा, पृ.113
[11] प्रेम चन्द्रोत्तर कहानी साहित्य, डॉ. राधेश्याम गुप्त, पृ.6

प्रसाद की कहानियों में नाटकीय रमणीयता भी मिलती है। इसी समय हास्परस सम्राट जी.पी. श्रीवास्तव ने हास्य रस प्रधान कहानियां लिखना प्रारम्भ किया। राजा राधिकारमण प्रसाद सिंह की 'कानों' में कंगना भी अत्यन्त लोकप्रिय हुई। विश्वम्भर नाथ शर्मा 'कौशिक' की कहानी 'रक्षाबन्धन' सरस्वती में प्रकाशित होने वाली उनकी पहली कहानी थी। इस काल के कहानी लेखकों में पं. ज्वाला प्रसाद शर्मा, आचार्य चतुर सेन शास्त्री और पाण्डेय वेचन शर्मा 'उग्र' के नाम उल्लेखनीय है। कौशिक जी की कहानियों में पारिवारिक जीवन का चित्रण विशेष रूप से मिलता है। उनकी 'ताई' नामक कहानी हिन्दी की सर्वश्रेष्ठ कहानियों मे परिगणित है, जिसमें कौशिक जी के पारिवारिक जीवन के अध्ययन, निरीक्षण और मनन की सूक्ष्मता का परिचय मिलता है। 1915 में गुलेरी जी की प्रथम कहानी 'उसने कहा था' प्रकाशित हुई। यह कहानी पवित्र प्रेम के लिए किये गये निस्वार्थ बलिदान की कहानी है। शुक्ल जी के शब्दों में– 'इसमें यथार्थवाद के बीच सुरूचि की परम मर्यादा के भीतर भावुकता का चरम उत्कर्ष अत्यन्त निपुणता के साथ सम्युटित है.... इसकी घटनायें ही बोल रही है। पात्रों के बोलने की अपेक्षा नहीं।'[12]

हिन्दी कहानी साहित्य में गुलेरी जी ने सन् 1911 में 'सुखमय जीवन' कहानी के साथ पर्दापण किया। 1995 तक 'उसने कहा था' और 'घुघुआ का कांटा' इन दो कहानियों ने कथा साहित्य क्षेत्र में एक खलबली उत्पन्न कर दी। डॉ. लक्ष्मी नारायण लाल के शब्दों में.... जिस समय प्रेमचन्द्र और प्रसाद अपनी कहानी कला के प्रारम्भिक काल में कहानी लिख रहे थे, उस समय गुलेरी जी ने इन कहानियों की सृष्टि करके कहानी कला के विद्यार्थी और पाठक दोनों के सामने आश्चर्य खड़ा कर दिया था.... सुखमय जीवन के 'जयदेव' 'घुघुआ का कांटा' के रघुनाथ तथा 'उसने कहा था' के सहना सिंह आदि के चरित्रों में मानवीय पक्ष इतने सहज रूप में आया है कि ये चरित्र पूर्ण वैयक्तिक होते हुए भी सामाजिक हो गये है।[13]

उनकी 'उसने कहा था' कहानी ने हिन्दी कहानी क्षेत्र में अपूर्व ख्याति अर्जित की थी। डॉ. इन्द्र नाथ मदान का कहना है कि 'हिन्दी कहानी' जब घुटनों के बल

[12] हिन्दी साहित्य का इतिहास, आचार्य राम चन्द्र शुक्ल।
[13] हिन्दी कहानियों की शिल्प विधि का विकास, डॉ. लक्ष्मी नारायण लाल, पृ.84

चल रही थी तब ये पावों के बल खड़ी होकर चलने लगी थी।[14] शायद इसीलिए समालोचकों ने इसे 'हिन्दी की सर्वश्रेष्ठ कहानी'[15] होने का गौरव प्रदान किया है।

'उसने कहा था' में लहना सिंह के त्याग की कथा में गुलेरी जी का प्रौढ़ अनुभव दृष्टिगत होता है। उनके जैसा शिल्प–कौशल, बंगला जैसी सशक्त भाषा में भी दृष्टिगोचर नहीं होता। इसे जीवन्त चेतना और परिवेश की कहानी कहा जा सकता है। 'कहानी की चेतना को जीवन्त परिवेश मिला है और चेतना तथा परिवेश दोनों अपरिहार्य भाव से जुड़े हुए है। जिससे कहानी इतनी जीवन्त और सशक्त हो उठी है।[16]

इस कहानी की सबसे बड़ी विशेषता निर्भीकता पूर्ण प्रेम है। उस अन्य विश्वासी युग में प्रेम का ऐसा जीवन्त चित्रण कहानीकार के लिए जोखिम का विषय था, लेकिन गुलेरी जी ने अपनी दूर दर्शिता और आधुनिकता की दृढ़ता का परिचय देते हुए इस जोखिम को स्वीकार किया। डॉ. नगेन्द्र ने इसकी पुष्टि में लिखा है, 'गुलेरी' जी के साहित्य का आधार छायानुभूति नहीं है; जीवन की मांसल अनुभूतियां है। वे सेक्स के नाम पर झिझकने वाले आदमियों में से नहीं थे।[17] समाज की परवाह किये बिना 'उसने कहा था' कहानी के माध्यम से सदियों से अंधविश्वास में जकड़ कर दम तोड़ने वाले मानवीय सत्यों को बेहिचक उद्‌घाटित किया है, जो उनकी आधुनिकता का प्रबल मानदण्ड है।

जब हिन्दी कहानी अपनी प्रारम्भिक अवस्था में ही थी तथा बंगला साहित्य हिन्दी साहित्य के विकास को पूरी तरह प्रभावित कर रहा था। उसी समय 'इन्द्व' पत्रिका में 'ग्राम' कहानी के प्रकाशन से प्रसाद जी के रूप में उत्तरदायी अभिभावक हिन्दी कहानी साहित्य को प्राप्त हुआ। उन्होंने द्विजेन्द्र लाल राय और रवीन्द्र नाथ टैगोर जैसे सशक्त बंगला साहित्यकारों के प्रभाव से हिन्दी कहानी को मुक्त रखते हुए नवीन प्रतिमानों की स्थापना की। प्रसाद जी ने बंगला कहानी साहित्य के समानान्तर पाठकों में कहानी के प्रति रूचि जागृत की किन्तु प्राचीन संस्कृति और

[14] हिन्दी कहानी अपनी जबानी, डॉ0 इन्द्र नाथ मदान, पृ.82
[15] हिन्दी कहानी उद्‌भव और विकास, डॉ. सुरेश सिन्हा, पृ.36
[16] हिन्दी कहानी दो दशक की यात्रा, डॉ. राम दरश मिश्र, डॉ. नरेन्द्र मोहन, पृ.19
[17] विचार और अनुभूति डॉ. नगेन्द्र, पृ.46

इतिहास के मोह में घिरे हुए प्रसाद यथार्थ से दूर चले गये क्योंकि वे मूलतः कवि थे। कहानी के क्षेत्र में भी उनके कवि रूप ने ही निरन्तर अपना प्रभाव बनाये रखा, जिससे भाव और भाषा अत्यन्त ट्रस्ट होगी। उनके पात्रों में नारी पात्रों की बहुलता है, लेकिन यथार्थ के अभाव में उनकी कहानियों की नारी आदर्श प्रतिमा बनकर रह गयी है। परिणामतः प्रसाद जी के कथा साहित्य में व्यवहारिकता एवं सामाजिकता का नितान्त अभाव है उनकी कहानियों में सामाजिक उद्देश्य नगण्य है। उन्होंने भाव, भाषा और कल्पना से परिपूर्ण कौतूहल प्रधान कहानियां लिखी जिसमें मानव मन के अन्तर्द्वन्द्व का सजीव चित्रण हुआ है।

जब भारतीय सामाजिक व्यवस्था के अन्तर्गत कुटुम्ब टूट रहे थे, समाज के कुछ विरस्कृत और शोषण वर्ग आहें भर रहे थे, हिन्दी कहानी ऐयूयारी का चमत्कारी चश्मा बढ़ाये तिलज्मी गुफाओं में जासूसी कर रही थी अथवा कल्पना और भावुकता के पंख लगाकर धरती से दूर प्राचीन संस्कृति और इतिहास के किसी आदर्शमय आकाश में उड़ रही थी, उसी समय प्रेमचन्द्र जी ने युग और जीवन के उदात्त आदर्शों को स्वीकार करते हुए एवं परमेश्वर (1916) कहानी के माध्यम से हिन्दी कहानी जगत में प्रवेश करते हुए कहा– हमने जिस युग को अभी पार किया है उसे जीवन से कोई मतलब न था। प्रेमचन्द्र जी की प्रथम हिन्दी कहानी 'पंचपरमेश्वर' ने ही हिन्दी कथा साहित्य पर अपना प्रभाव अंकित कर दिया था। द्विवेदी जी के मतानुसार इस कहानी में यथार्थोन्मुख आदर्श का ऐसा सुन्दर चित्रण था कि इसमें उस समय की लिखी जाने वाली कहानियों का रंग फीका कर दिया।[18]

इस युग में भारतीय जीवन मूर्ति पूजा, बहुदेववाद, पशुपति, जादूटोना आदि अन्धविश्वास और आडम्बरों में घिरकर पतनोन्मुख हो रहा था। समाज में जाति–पांति, बहुविवाह, बाल–विवाह, दहेज–प्रथा, पर्दा–प्रथा आदि कुरीतियां पूरी तरह से अपनी जड़े फैला रही थी, वह चहारदीवारी के अन्दर रहने वाली मात्र पुरूष की भोग्या थी। समाज में भगवान का पूरा प्रभाव था कितने ही परिवार शराब में गाढ़ी कमाई के बह जाने से जीवन की आवश्यकताओं के लिए तरसते रहते थे, इस भयावह स्थिति ने प्रेमचन्द्र को नई सुधारवादी विचार धारा प्रदान की। राजेन्द्र यादव

[18] हिन्दी साहित्य : उसका उद्भव और विकास, पृ.425–426

की दृष्टि में व्यक्ति मूलतः दोषहीन है पर असद प्रवृत्तियों के प्रभाव में वह अपना विवके खो देता है, विषम परिस्थितियों का निर्माण करता है और उसे जब इस बात का ज्ञान होता है, तब वह अपनी गलती सुधार लेता है, सारी विषमतायें शामिल हो जाती है।[19]

प्रेमचन्द्र जी की दूरदर्शिता गांधीवाद से प्रभावित थी इसीलिए कहीं–कहीं ऊचें आदर्शों और महान संदेशों के कारण उनकी कहानी मात्र उपदेश बनकर रह गयी। वे निरन्तर समाजवादी समाज के निर्माण के स्वप्न देखते रहे। शोषित वर्ग की सहानुभूति के साथ शोधक वर्ग की विवशता के प्रति भी उनकी सहानुभूति मिलती हे। जबकि उस युग की मांग के अनुसार केवल गरीबों और असहायों के प्रति सहानुभूति और उनके उत्थान पर ध्यान दिया जाना चाहिए था। यथार्थ की मरूभूमि से पात्रों का चयन कर सुधारवादी विषयवस्तु प्रस्तुत कर प्रेमचन्द्र जी ने हिन्दी कहानी को प्रसाद जी की अपेक्षा जन–जीवन के अधिक निकट ला दिया। प्रेमचन्द्र जी ने कहानी का आधार मनोवैज्ञानिक अनुभूति को माना है। अपने अन्तिम दिनों में उन्होंने 'कफन', 'पूस की रात' और 'नशा' आदि कहानियों में आदर्शवाद से हटकर मानवीय संवेदना को उभारा है। अतः ये कहानियां पूर्णतः यथार्थवादी है। मानवीय सत्य और संवेदना इन कहानियों में स्पष्ट रूप से दिखाई देती है।

प्रेमचन्द्र जी की कहानियों की घटनायें प्रायः वास्तविक घटना प्रधान है। सांसारिक जीवन के विस्तृत और सूक्ष्म ज्ञान के परिणामस्वरूप थे सामाजिक समस्याओं, आन्दोलनों तथा समसामयिक, राजनीतिक समस्याओं का सफल चित्रण करने में समर्थ हो सके। 'कामनातरू' 'आत्माराम' और 'शतरंज के खिलाड़ी' इनकी सफलतम कहानियां मानी जाती है। इनमें चरित्र चित्रण, स्वरूप कथानक, उद्‌देश्य की सफल अभिव्यक्ति, कथोपकथन, सभी प्रभावपूर्ण है। इनकी कहानियां हिन्दी साहित्य की कला और विषयवस्तु की दृष्टि से विश्व की श्रेष्ठ कहानियों के समकक्ष रखी जा सकती है। प्रेमचन्द्र के इसी समय में हिन्दी साहित्याकाश में 'सुदर्शन' पद्‌मलाल मुन्नालाल बख्शी, शिवपूजन सहाय आदि उज्जवल नक्षण उदीप्त हुए।

[19] कहानी : स्वरूप और संवेदना, राजेन्द्र यादव, पृ.23

प्रेमचन्द्रोत्तर युग (सन् 1937 से 1950 तक)

गांधी के सत्याग्रह और असहयोग आन्दोलन से स्वतन्त्रता संग्राम के आरम्भ होते ही देश में नवीन चेतना का सूत्रपात हुआ, जिसने तत्कालीन राजनीति, धर्म, समाज और साहित्य सभी क्षेत्रों में क्रान्तिकारी परिवर्तन की नींव डाली। जलियांवाला बाग का हत्याकांड, द्वितीय विश्वयुद्ध और सन् 1942 के आन्दोलन आदि घटनाओं ने भारतीय जनमानस के सम्मुख अनेक चुनौतियां खड़ी कर दी। पराजय कुण्ठा और घुटन से भटकती हुई पीढ़ी टूटने लगी। इसी बीच 1947 में देश स्वतन्त्र भी हो गया। हिन्दी कहानी के विकास पर भी तत्कालीन परिस्थितियों, देश और देशवासियों की विचारधारा का प्रभाव परिलक्षित होता है। इस युग के लगभग सभी कहानीकारों में तात्कालिक समस्याओं को अतिपेनी दृष्टि से देखा।

इस युग में हिन्दी कहानी क्षेत्र में दो भावधारायें दृष्टिगोचर होती है प्रथम तो मनोविश्लेणवादी मनोवैज्ञानिक भावधारा जिसमें जैनेन्द्र, अधैय इलाचन्द्र जोशी और पहाड़ी जी सम्मिलित है। इन चारों कहानीकारों ने अपनी कहानी में मनोविज्ञान के आधार पर मनुष्य की आन्तरिक प्रवृत्तियों का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत किया है। दूसरी की सामाजिक यथार्थ को प्रस्तुत करने वाली भावधारा जिसमें यशपाल, अवध, भगवती चरण वर्मा, भैरव प्रसाद गुप्त, अमृत लाल नागर, अमृतराय, उषा देवी मिश्रा, रागव राघव आदि कहानीकार सम्मिलित किये जा सकते हैं। यह भाव धारा मूलतः प्रेमचन्द्र जी की कहानी कला से सम्बद्ध है। इनमें से कुछ कहानी कारों पर कार्लमार्क्स का प्रभाव देखा जा सकता है।

हिन्दी कहानी में मनोविज्ञान का सूनपात्र प्रेमचन्द्र युग से हो चुका था, परन्तु इस युग में मनोविज्ञान का पूर्ण विकास नहीं हो पाया था, इसलिए कहानीकारों ने आरम्भ से व्यक्ति के वैदान रूप को ही अपनी कहानियों का आधार बनाया। ये उनके अचेतन रूप से पूर्णतयाः अनभिज्ञ रहे। डॉ. वृह्मदत्त शर्मा के शब्दों में, 'अगेतन रूप को न समझना व्यक्ति को जाये से कहीं क्या समझना है।[20] किन्तु कुछ समय उपरान्त जैनेन्द्र अज्ञेय और इलाचन्द्र जोशी ने इस मनोवैज्ञानिक सत्य

[20] हिन्दी उपन्यासों का मनोवैज्ञानिक मूल्यांकन, पृ.6

को आत्मसाद किया और मनोवैज्ञानिक विप्रेशण प्रस्तुत करके उस भावधारा की सार्थकता सिद्ध करने की चेष्टा की।

जैनेन्द्र प्रेमचन्द्र जी का शूभाशीय लेकर इस क्षेत्र में प्रविष्ट द्वारा प्रारम्भ में उनकी कहानियों पर प्रेमचन्द्र जी का ही प्रभाव पड़ा। कुछ समय उपरान्त उनकी घोर प्रतिमा, प्रबल महात्वाकांक्षा और अहम् ने उस प्रभाव से उन्हें दूर कर दिया। कथानुसार, 'प्रेमचन्द्र औसत आदमियों की बातें औसत आदमियों के लिए लिखते थे तो जैनेन्द्र विशिष्ट जनों की बातें विशिष्ट जनों के लिए लिखने लगे।[21] आज स्थिति यह है कि स्वयं जैनेन्द्र यह स्वीकारने से कतराते हैं कि अतीत में यह कभी प्रेमचन्द्र जी से प्रत्यक्ष रूप से सम्बद्ध रहे थे। आज वह प्रायडियन मनोविज्ञान के द्वारा व्यक्ति की आत्म साधना को जागृत करने में व्यस्त है। कहानी में समष्टिगत चिन्तन के स्थान पर व्यक्तिगत चिन्तन के पक्षधर बन बैठे है।

आरम्भ में जैनेन्द्र की इस दार्शनिकता की खूब धूम रही, लेकिन आगे चलकर जय कहानी के पाठकों का मानसिक स्तर बढ़ा और जैनेन्द्र जी के अहम् ने छत दर्शन की उत्तरोत्तर और भी अशैक्षिक तथा गुढ़ बना दिया तो उनकी कहानियों के विषय में लोगों की धारणायें बदलने लगी। आज तो आलोचकों का यहां तक कहना है कि जैनेन्द्र आरम्भ से ही जीवन की उलझनों से बचते रहे हैं और अपनी कल्पना, भावुकता और मनोविज्ञान को भारतीय दर्शन का कवच पहनाकर दूर से ही हवा में तलवार भांजते हुए दृष्टिगोचर होते रहे हैं। उनकी कहानियां शिल्प की दृष्टि से महत्वपूर्ण हो सकती है सामाजिक दृष्टि से नहीं।[22]

संप्रदायवादी होने के कारण जैनेन्द्र की समाज के प्रति धारणा भी अजीवोगरीब है। उनका कहना है कि 'आप समाज के विषय में कुछ न पूछिये। मैं उसे जानता ही नहीं। वह धारणात्मक संज्ञा है। वस्तु या तत्व की दृष्टि से भावक और बोधक संज्ञा नहीं है। इसलिए समाज है तो मेरे लिए वह अपनी बीबी या पड़ोसी से शुरू हो जाता है अन्यथा मुझे कहीं उपलब्ध नहीं होता। पड़ोसी को छोड़ दे, तो समाज की कोई स्थिति बनती है.... ऐसा भी मुझे नहीं लगता। तब यदि यह

[21] हिन्दी कहानी एक अनारंग परिचय, पृ.151
[22] हिन्दी कहानी की मूल संवेदना, पृ.84

है तो इसी अर्थ में कि जैसे देवता होता है– है भी, नहीं भी है।[23] जैनेन्द्र जी के इस संप्राय के विषय में मार्कण्डेय ने शायद उचित ही लिखा है– 'जैनेन्द्र उस मदारी की तरह है जो हथेली पर पैसा रखकर उसे मन्त्रपूर्ण कर गायब करते हैं और फिर हथेली पर ला देते हैं। उसे स्वयं अपनी हथेली पर संदेह है कि वह है या नहीं।[24] निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि जैनेन्द्र जी सामाजिक कहानीकार नहीं है– वह दार्शनिक है और दार्शनिक भी ऐसे जो है भी और नहीं भी है।

जैनेन्द्र की भांति अज्ञेय ने कभी भी अपनी कहानियों को बनावटी दार्शनिकता का लबादा नहीं ओड़ने दिया। ऐसा नहीं है कि उनमें दार्शनिकता का अभाव है, लेकिन उन्हें व्यर्थ के आडम्बर से घृणा है। वह पूर्णतः आधुनिक है, इस आधुनिकता की चुनौती को उन्होंने वैयक्तिक धरातल पर स्वीकार करने का प्रयास किया है। उनकी कहानियों के भूल में व्यक्ति सत्य ही जीवन की जटिलताओं का सत्य है। यह कहना असंगत लगा अनुचित होगा कि उनकी कहानियों में सामाजिक चेतना का नितान्त अभाव है। डॉ0 मदान के शब्दों में, 'यह कहना अधिक संगत होगा कि इनका कहानीकार जीवन तथा जगत का चित्रण एवं मूल्यांकन वैयक्तिक संवेदना के धरातल पर करता है और सामाजिक मान्यताओं को भी इसी कसौटी पर परखता है।'[25] अज्ञेय की कहानियों में 'बौद्धिकता तथा मनोवैज्ञानिकता का गहरा पुट'[26] होते हुए भी जैनेन्द्र की अपेक्षा सरलता और व्यवहारिकता है। उन्हें मनोवैज्ञानिक तथ्यों के प्रकाशन के लिए जैनेन्द्र जैसी खींचातानी नहीं करनी पड़ती। इलाचन्द्र जोशी ने विशुद्ध रूप से मनोविज्ञान को ही अपनी कहानियों का आधार बनाया है। समुचित मनोवैज्ञानिक अध्ययन के अभाव में कभी–कभी जैनेन्द्र और अज्ञेय कहानी को खींचते हुए प्रतीत होते हैं, किन्तु जोशी जी एक कदम भी आगे नहीं बढ़ते। आरम्भ में जोशी जी की कहानियों का सिक्का खूब चला, बाद में यह धीरे–धीरे पिसने लगा। 'चोर, जुआरी' 'लम्पट मध्य' और हथ्यारों का मनोविश्लेषण करते–करते उनकी कहानियों ने कैसाहिस्ट्रियों' का रूपधारण कर लिया। मानवीय सम्बन्धों तथा सामाजिक

[23] हिन्दी कहानी उद्भव और विकास, पृ.491
[24] हिन्दी कहानी अपनी जवानी, पृ.99
[25] निबन्ध और निबन्ध, पृ252
[26] निबन्ध और निबन्ध, पृ252

संवेदना के अभाव में ये सभी 'कैसाहिस्ट्रिया' मनोविज्ञान के विद्यार्थियों की तो सहानुभूति प्राप्त कर सकी है, कहानी के पाठक की नहीं।

पहाड़ी जी आत्म विश्लेषण वादियों की अन्तिम कड़ी है। 'टमिस काम भावना' की कहानियों में उनकी कहानियों का अलग स्वर है। डॉ. बृहमदत्त शर्मा कहते हैं– 'इनकी कहानियों में एक ओर देश की पुरानी रूढ़ियों और रीतिरिवाजों की आलोचना उपलब्ध होती है और दूसरी ओर समाज पर पड़े पश्चिमी सभ्यता के अनैतिक प्रभाव की नग्न झाँकी।'[27]

निष्कर्षतः मनोविश्लेषणवादी कहानी भावधारा ने प्रथमतः हिन्दी कहानी को किसी सीमा तक कल्पना भावुकता और आदर्शवादी ढाँचे से मुक्ति दिलाकर व्यक्ति सत्य की ओर उन्मुख किया, जिससे कहानी में बौद्धिकता का विकास हुआ और इसे विश्व कहानी साहित्य के समकक्ष खड़े होने की प्रेरणा मिली। दूसरे इस भावधारा ने कहानी को सूक्ष्मता प्रदान की और कहानी में मनोवैज्ञानिक मान्यताओं का समावेश करके पाठक के मानसिक स्तर को ऊँचा किया। तीसरे सामाजिक चेतना की दृष्टि से मनोवैज्ञानिक सूझबूझ के आधार पर नैतिकता सम्बन्धी कुछ ऐसे भ्रमों का निराकरण किया, जिनसे तत्कालीन समाज में अवरोध उत्पन्न हो रहे थे। वस्तुतः मनोविश्लेषण के इन साहित्यकारों ने व्यक्ति के अवचेतन मन की ओर संकेत किया जो कालांतर में 'नयी कहानी' का मुख्य विषय बना।

हिन्दी कहानी साहित्य को उपन्यासों के समान ही प्रेमचन्द्र ने समृद्धि प्रदान किया था। लगभग साढ़े तीन सौ कहानियों में एक आदर्श प्रस्तुत करके प्रेमचन्द्र ने हिन्दी साहित्य को आगे बढ़ाया था। कहानियों में उनका सामाजिक यथार्थवादी दृष्टिकोण मनोविश्लेषणात्मक पद्धति के साथ उभर कर सामने आया। इस पद्धति का प्रेमचन्द्र के परवर्ती कहानीकारों ने भी अपनी कहानियों में प्रयोग किया। मार्क्सवाद का प्रभाव भी कहीं–कहीं दिखाई देने लगा। द्वितीय महायुद्ध के पश्चात् उत्पन्न बेकारी, मँहगाई, अनैतिकता, देश का विभाजन आदि से उत्पन्न नई समस्याओं और जिम्मेदारियों से समाज में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुआ, जिसका प्रभाव कहानीकारों पर भी पड़ा। प्रेमचन्द्र युगीन मान्यताओं में अन्तर आ गया।

[27] हिन्दी कहानियों का विवेचनात्मक अध्ययन, पृ.326

प्रेमचन्द्र वास्तव में परम्पराओं से जुड़ते और टूटते हुये कहानी की एक लीक छोड़ गये थे, जो सामाजिक यथार्थ, आदर्श और युग बोध की लीक थी। कुछ अन्य कहानीकारों ने अनुसरण करके हिन्दी कहानी को नयी दिशा देने का प्रयास किया। इसके अन्तर्गत यशपाल राघव, अमृतराय तथा भैरों प्रसाद की प्रगतिशील कहानियां आती है। सियाराम शरण गुप्त, विष्णु प्रभाकर, उषा देवी मिश्रा आदि की यथार्थोन्मुख आदर्शवादी कहानियां गांधीवादी विचार धारा से प्रभावित है। चन्द्रगुप्त विद्याशंकर, भगवती शरण वर्मा, उपेन्द्र नाथ आदि कथाकारों ने समन्वय वादी कहानियों की रचना की। प्रेमचन्द्र जी के बाद उन्हीं की विचार धारा को लेकर जैनेन्द्र कहानी के क्षेत्र में आगे बढ़े। धीरे–धीरे अहम् और महत्वकांक्षा के परिणामस्वरूप हिन्दी कहानी टूट गयी। प्रेमचन्द्र लौकिक के कथाकार थे तो जैनेन्द्र अलौकिक के कथाकार हो गये। प्रेमचन्द्र औसत आदमियों की बातें औसत आदमियों के लिए लिखते थे तो जैनेन्द्र विशिष्टजनों की बाते विशिष्ट जनों के लिए लिखने लगे।[28] अन्यंत्र ये लिखते हैं 'इस अंधेरे में लगता था कि हिन्दी कहानी जैनेन्द्र के साथ बैठ पायेगी।'[29] लेकिन टूटती हुई हिन्दी कहानी से बौद्ध को प्रेमचन्द्र जैसी सीधी–साधी भाषा और अनुभूति के द्वारा आधुनिकता का समावेश करते हुए यशपाल ने अपने कन्धों पर ले लिया। कालान्तर में रगिय राघव, अमृतराय और भैरो प्रसाद गुप्त इस पीढ़ी को समर्थता प्रदान की। यशपाल ने समाज में व्याप्त अन्धविश्वासों, रूढ़ियों और परम्पराओं के मूल कारणों को ढूँढ़ने का प्रयास किया। उनकी कहानियों में पूँजीवादी वर्ग के प्रति आक्रोश भी मिलता है। डॉ. रामदरश मिश्र के अनुसार, 'उनके यथार्थ में कसक और उपहास, बेबसी और आक्रोश, व्यथा और अस्वीकृति का एक मिला जुला अहसास होता है।'[30]

यशपाल के बाद भी परम्परा में रगिय राघव कहानी लेखन में मानवीय संवेदना तक ही सीमित रहे, इसीलिए उनकी कहानियों में वर्णनात्मकता अधिक है। अमृतराय रस साहित्य से प्रभावित रहे हैं। अतः उनकी अधिकांश कहानियां विदेशी सी प्रतीत होती है। भैरव प्रसाद गुप्त की कहानियों में ग्रामीण परिवेश ही अधिक

[28] हिन्दी कहानी, एक अन्तरंग परिचय से, अश्क, पृ.51
[29] हिन्दी कहानी, एक अन्तरंग परिचय से, अश्क, पृ.45
[30] हिन्दी कहानी दो दशक की यात्रा से, डॉ. रामदरश मिश्र, पृ.22

दिखाई देता है। इस दृष्टि से प्रेमचन्द्रोत्तर कहानी को सामाजिक संचेतना की कहानी कहा जा सकता है। स्वतन्त्रता पूर्व की हिन्दी कहानी में जीवन की प्रतिबद्धता का अभाव है। जड़ मूल्यों बंधे–बंधाये रिश्तों और मुर्दा आदर्शों की लम्बी लक्ष्मण रेखा में जकड़ी हुई कहानी पाप–पुण्य, सुख–दुःख, सौतेले रिश्तों, सौत–कुलटा, शरार्थी ओर चरित्रहीन पात्रों के इर्दगिर्द घूमती हुई उपदेशस्य में सर्जन की वैयक्तिक मान्यताओं को प्रतिविम्बित करती है। आदर्शवाद से ग्रस्त होने के कारण इन कहानियों में आधुनिकता और यथार्थ का अभाव है। समाज सुधारों के प्रति सजग होने के कारण नैतिकता और आदर्श के प्रतिमानों को वहन करता हुआ कहानीकार पर्दा प्रथा, सती प्रथा, बाल विवाह, विधवा विवाह वैश्यावृत्ति तथा स्त्री शिक्षा की समस्याओं तक ही सीमित रहा। ये कहानी मजबूत जड़ों के अभाव में जीवन और जीवन की यथार्थ गहराइयों तक पहुँचने में पूर्ण रूपेण समर्थ नहीं हो सकी।

स्वातन्त्रयोत्तर युग– स्वतन्त्रता के पश्चात् हिन्दी कहानी के बदलाव को संकेतित करने का श्रेय श्रीपतिराय को है और इस बदलाव को नयी कहानी नाम देकर इसे स्थापित करने का श्रेय डॉ. नामधर सिंह को है। उन्होंने सर्वप्रथम स्वायन्त्रयोत्तर कहानी को नयी कहानी के नाम से मान्यता प्रदान की।[31]

नव, अभिनव, नूतन और नवीन 'नये' के ही पर्याय है। इनका कोषगत अर्थ है जो जीर्ण नहीं है, जो ताजा है, अद्‌भुत है, मौलिक है और आधुनिक है तथा जिसके सौन्दर्य में गति है ओर स्फूर्ति है।

अंग्रेजी में 'नये' का पर्याय 'न्यू' है, जिसका कोषगत अर्थ है– रीसेंट हालका, ओरिजनल, मौलिक, फ्रेश, ताजा, मॉडर्न, आधुनिक।

इस प्रकार हिन्दी और अंग्रेजी दोनों ही अर्थों में 'नये' के सम्बन्ध में तीन तत्व सामने आते थेः– ताजा, मौलिक और आधुनिक विषयवस्तु की स्पष्टता के लिए इन तीनों पर विचार करना अनिवार्य है।

[31] स्वातन्त्रयोत्तर हिन्दी साहित्य, पृ.30

ताजा से अभिप्राय जीवन्तता से है। मौलिकता वह नैसर्गिक प्रतिभा या शक्ति है जो साहित्य–सृजन के लिए अनिवार्य है। वेवस्टर्स कोष पृष्ठ 522 के अनुसार मौलिकता से अभिप्राय उस तत्व से है जो प्रथम कोटि की नवीनता को प्रस्तुत करता है।

आजकल आधुनिक और नये को एक ही अर्थ में लिया जा रहा है लेकिन आधुनिक की सीमायें संकीर्ण है और नये की विस्तृत आधुनिकता का सम्बन्ध केवल वर्तमान से है, जबकि नया किसी भी युग, समय या स्थान का हो सकता है। नये का आधार लेखकों की नवीन जीवन दृष्टि, नवीन विचार भाव तथा नवीन चेतना के स्वर है। स्वतन्त्रता के साथ जीवन की सहज धारा में गतिशील परिवर्तन हुए। नयी कहानी ही इस नयी परिवर्तित नयी चेतना को पकड़ पायी। कहानी के इसी परिवर्तित रूप को इंगित करने के लिए नयी विशेषण लगाया गया। वस्तुतः नयी कहानी ताजगी, अपूर्वता, मौलिकता, आधुनिकता तथा गतिशील सौन्दर्य व स्फूर्ति से युक्त परम्परा के प्रति विकास व विद्रोह की यह भावना है जो निरन्तर बदलते हुए परिवेश की सूचक है।

स्वतन्त्रता के पश्चात् मानव–चेतना में जो नया विकास हुआ उसकी झलक नयी कहानी में स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। नयी कहानी केवल उस सर्वण भिन्न जीवन और जीवन दृष्टि की तस्वीर है जिसे अपूर्व कहा जा सकता है। ज्ञान रंजन क शब्दों में, 'इसे हम कहानी की शुरूवात भी मान सकते हैं' और 'नयी' शब्द की सार्थकता के एक अभूत पूर्व नवीन मार्ग का प्रारम्भ भी।[32]

स्वतन्त्रता के पश्चात् युगीन परिस्थितियाँ बदलने से देश में वैचारिक परिवर्तन हुआ। देश की सुखद तस्वीर की परिकल्पना वास्तव में स्वार्थपरता, जाति भेद, भाई–भतीजावाद, काला–बाजारी, बेईमानी, भुखमरी, गरीबी और बेरोजगारी के परिवेश में सहसा धूमिल हो गयी। चारों ओर आपाधापी, भटकाव और अस्थिरता व्याप्त हो गयी। कमलेश्वर लिखते हैं, 'सन् 1950 के आस–पास यही स्थिति थी... देश की बौद्धिक चेतना और जनमानस जबरदस्त संक्रान्ति से बोझिल थे... हर तरफ एक संकट व्याप्त था। वैयक्तिक और सामाजिक आचरण के दो मानदण्ड बने थे

[32] नयी कहानी : दशा, दिशा, सम्भावना, सम्पादक सुरेन्द्र, पृ.334

और ये गूल जो नापुसंख्यक व्यक्तियों द्वारा पोषित थे, सामाजिक सम्बन्धों के स्तर पर अपनी सार्थक स्थापना के लिए प्रयत्नशील थे।[33]

बदलती हुई सामाजिक चेतना के स्तर पर सन् 1950 के आसपास कहानी के क्षेत्र में परिवर्तन प्रारम्भ हुए और 1954–55 तक उसके परिणाम सामने आने लगे। कहानी के क्षेत्र में एक नयी और सशक्त पीढ़ी जन्म ले चुकी थी।[34]

कमलेश्वर, मारूण्डेय, मोहन राकेश, राजेन्द्र यादव, भीष्म साहनी, शिवप्रसाद सिंह और अमरकान्त आदि कहानीकारों ने क्रमशः कस्बे का आदमी 'ऐसा जायी अकेला', 'मलबे का मालिक', 'जहां लक्ष्मी कैद है', 'बीच में दावत', 'कर्मनाशा की सार' और 'दोपहर का भोजन' आदि कहानियों के माध्यम से व्यक्ति को उसके उस परिवेश में देखना आरम्भ किया, जिसमें वह घुट–घुट कर सांस ले रहा था। इस पीढ़ी के उदय के बाद इसका निरन्तर विकास होता गया। फणीश्वर नाथ 'रेणु' कृष्णा सोबती, निर्मल वर्मा, धर्मवीर भारती, हरीशंकर परसाई, मन्नू भण्डारी, उषा प्रियबदा, शैलेश भाटियानी, शेखर जोशी, रामकुमार, नरेश मेहता, रघुवीर सहाय आदि ने नयी कहानी के क्षेत्र में प्रवेश करके आधुनिक जीवन के सभी लोगों को अभिव्यक्ति प्रदान की। कथाकार निर्मल वर्मा नयी कहानी की परम्परा का विकास नहीं मानते। उनका कहना है, 'जहाँ परम्परागत कहानी की मृत्यु होती है वहीं नयी कहानी का जन्म हुआ है।[35] कमलेश्वर ने 'नयी कहानी की भूमिका' में स्वीकार किया है कि 'नयी कहानी उस विकास की प्रक्रिया से गुजरी है जिसके वस्तुबीज प्रेमचन्द्र, प्रसाद और यशपाल में है। उपेन्द्र नाथ 'अश्क' के शब्दों में, 'कफन' 'नशा', मनोवृत्ति तथा 'बड़े भाई साहब' में पात्रों का चरित्र चित्रण कथा की कथानक हीनता और यथार्थ की पकड़ आज के किसी भी नयी कहानी की उपलब्धि मानी जा सकती है।[36]

निष्कर्ष रूप में स्वातन्त्रयोत्तर कहानी नयी पीढ़ी द्वारा यथार्थ को प्रामाणिक स्तर पर ग्रहण करने की अकुलाहट थी। वैचारिक स्तर पर प्राचीन रूढ़ियों, मूल्यों

---

[33] नयी कहानी की भूमिका, कमलेश्वर, पृ.33
[34] नयी कहानी : दशा, दिशा, सम्भावना, सम्पादक सुरेन्द्र, पृ.124
[35] नयी कहानी : लेखक के धर्मयुग 19 जनवरी, 1964
[36] नयी कहानी : संदर्भ और प्रकृति, सम्पादक–डॉ0 देवीशंकर अवस्थी, पृ.49

और विश्वासों के विरुद्ध नवीन चेतना की प्यास से परिपूर्ण एक चुनौती थी, जिसे यथार्थ रूप में लम्बे अन्तराल और गतिरोध के बाद शान्त किया जा सका। नयी कहानी परिवर्तित संदर्भों में युग बोध तथा भावबोध की कहानी है, एक रास्ता है, एक दिशा है।

कहानी तथा नयी कहानी में अन्तर– कहानी तथा नयी कहानी के स्वरुप से अवगत होने के पश्चात् इसके अन्तर को जानना भी आवश्यक है।

पुरानी कहानी, कथावस्तु, कथोपकथन, चरित्रचित्रण, वातावरण तथा उद्देश्य नामक तथ्यों में बंधा हुआ गद्यात्मक 'विचार' होती थी। नयी कहानी ने इस छह तत्वीय कहानी के स्वरूप को तोड़ा है तथा पुराने 'विचार' से मुक्त हुई है। अब कहानी बनायी नहीं जाती, स्वयं अपना रूप ग्रहण करती है, क्योंकि अब कहानी खुद एक जीवित रूप है।[37] अब कहानी अपने में जीती है और उसमें भी जो उसे पढ़ता है। यह अभिभूत ही नहीं करती, वरन् अनुभव में से गुजर कर ले जाती है। अ बवह एक सम्पूर्ण अनुपस्थिति है और यही उसकी शैली है कि वह जीवित रूप में पाठक के सामने आती है।[38]

नयी कहानी भोगे हुए यथार्थ की कहानी है। पुरानी कहानी के रचनाकारों के सामने जीवन का कोई स्पष्ट स्वरूप नहीं था। नयी कहानी ने सामाजिक दायित्वों में प्रत्यक्ष रूप से भागीदारी की है। नयी कहानी ने समय और समाज दोनों की चुनौतियां स्वीकार की है, जबकि पुरानी कहानी शाश्वत मूल्यों की खोज में भटकती रही है। नयी कहानी में समकालीन समाज का चित्रण करते हुए पात्रों को यथार्थ रूप में समाज की असंगतियों को भोगते हुए सहज रूप से चित्रित किया गया। भीष्म साहनी की 'चीफ की दावत' की माँ, शरद जोशी की 'तिलस्म' का नौकरी पेशा बाबू, मन्नू भण्डारी की 'यही सच है' की वह औरत, कृष्ण बलदेव वैध की 'मेरा दुश्मन' का पति आदि पात्र अपने माध्यम से समय से अवगत कराते हैं।

पुरानी कहानी मनोरंजन प्रधान होती थी, उसमें यथार्थ की अपेक्षा काल्पनिक समस्यायें अधिक थी। नयी चेतना के उदय होने से पुरानी कहानी के आदर्श पात्रों

[37] नयी कहानी की भूमिका, कमलेश्वर, पृ.193
[38] नयी कहानी की भूमिका, कमलेश्वर, पृ.193

के स्थान पर नये समाज की आधुनिक तस्वीर की मांग होने लगी। नये कहानीकारों ने इस आधुनिक तस्वीर को अनेकानेक सामाजिक विशेषताओं के साथ प्रस्तुत किया। फणीश्वर नाथ 'रेणु' की 'डुमरी', मोहन राकेश की 'एक और जिन्दगी' राजेन्द्र यादव की 'बिरादरी बाहर', कमलेश्वर की 'खोयी हुई दिशाये', उषा प्रियम्बदा की 'वापसी' भीष्म साहनी की 'थीफ की दावत' अमरकान्त की 'जिन्दगी और जौक', कृष्ण बलदेव की 'बीच का दरवाजा', नरेश मेहता की 'तथापि', रामकुमार की 'एक चेहरा' निर्मलयामी की 'परिन्दे', प्रयाग शुक्ल की 'अकेली आकृतियाँ' आदि कहानियां अलग–अलग स्तरों पर नयी है। किसी में तीव्र संवेदना है तो किसी में युगबोध का स्पर्श, किसी में तीक्ष्ण व्यंग, किसी में सूक्ष्म शिल्प, किसी में संघर्षरत 'जिजीविषा' तो किसी में जीवन के कांटे गये, किसी एक समय का चित्रण है। इन कहानियों में आम आदमी को इसके सही रूप में यथार्थ परिवेश में सांस लेते हुए जीवन से पूछते हुए आदमी के रूप में.... चित्रित किया गया है। कमलेश्वर के अनुसार नयी कहानी ने हमें मानवीय संकट, आदमी की अपनी दुनियां और अस्तित्व बोध के रूबरू लाकर बड़ा कर दिया है।[39]

पुरानी कहानी अधिकांशतः हिन्दू रहस्य वाद से जकड़ी हुई हिन्दू–संस्कारों का चित्रण करती थी। नयी कहानी ने हिन्दू रहस्यवाद की इस मनोवृत्ति को त्याग कर धर्म निरपेक्षता की नीति अपनाते हुए मानवीय संवेदना को मूल आधार मानकर अपने स्वरूप को हर जाति हर प्रान्त और हर भाषा तक प्रसारित किया। नयी कहानी ने आधुनिक से वैज्ञानिक दृष्टि को ग्रहण करते हुए प्राचीन मान्यताओं, मूल्यों, परम्पराओं, रूढ़ियों और विश्वासों को तोड़ा है।

पुरानी कहानी में रिश्तों के दृढ़ बन्धन की मर्यादा थी जबकि नयी कहानी में बदलती हुई परिस्थितियों के कारण मानवीय सम्बन्धों का संघर्ष दिखाई देता है। रिश्तों के नाम तथा सम्बन्ध भले ही पुराने हैं, किन्तु उनके भीतर की मानवीय संवेदना समाप्त हो चुकी है। व्यक्ति के बीच में तेजी से होने वाले परिवर्तन खोजकर उसको व्यक्त करना ही नहीं कहानी की एक बड़ी विशेषता है।

[39] नयी कहानी की भूमिका, कमलेश्वर, पृ.62

अध्यात्म में माया की तरह नारी हर युग में एक समस्या रही है, कभी उसे देवताओं की श्रेणी में रखा गया तो अभी मात्र सम्पत्ति समझा गया। नारी कभी बृद्धा के रूप में स्वीकार की गई और कभी पुरुष के हाथों का खिलौना मानी गयी वही नारी कभी पुरुष की प्रेरणादायिनी बनी और कभी गर्ल में से लाने वाली उसकी कमजोरी। पुरानी कहानी में नारी का एक सीधा, सामान्य, लज्जा से युक्त सहनशील, मर्यादा में जकड़ा, कदाचित ही क्रोध को स्वीकारने वाली नारी का चित्रण मिलता है। नयी कहानी में आज की नारी पुरुष की बराबरी करने में समर्थ है। पुरुष की भांति वह भी हर सम्मान की अधिकारिणी है। संघर्षशील नारी आप किसी की दया का पात्र नहीं बनना चाहती। इतने प्राचीन रूढ़ियों को त्याग कर सहयोगी जीवन पद्धति को अपनाया है। उसे एक नई जिन्दगी की तलाश है। जहां वह सम्पत्ति के बजाय व्यक्ति की पहचान बन सके।

पुरानी कहानी में प्रेमचन्द्र को छोड़कर शायद ही किसी अन्य कहानीकार की पैनी दृष्टि ग्रामीण जीवन की जटिलताओं तक पहुँची हो। पुरानी कहानी की तुलना में नयी कहानी के लेखकों ने नगरों के दुर्दम और भीषण चित्रण के साथ ग्रामीण एवं आंचलिक कथाओं का सूत्रपात भी किया है। 'इन ग्राम अथवा आंचलिक कथाओं में हिन्दी कहानीकारों ने जहां एक ओर लोक जीवन की कहानियों के माध्यम से लोक संस्कृति के लोकतत्वों को उजागर किया है, ... वहीं लोकवाणी तथा लोककथा शैली से कहानी की भाषा और शैली को भी नयी समृद्धि प्रदान की है।'[40]

स्वतंत्रता पूर्व एवं स्वतंत्रोत्तर कहानियों में नारी– भारतीय साहित्य में नारी का एक विशिष्ट स्थान रहा है। इस देश की नारियों ने साहित्य में सम्यानित स्थान प्राप्त किया है। स्वतन्त्रतापूर्व हिन्दी कहानी में शाश्वत मूल्यों को निभाती हुई समस्या ग्रस्त नारी का चित्रण मिलता है। स्वातन्त्रयोत्तर कहानी में शाश्वत मूल्य समाप्त तो नहीं हुए, किन्तु भौतिकतावादी दृष्टिकोण के कारण समाज–सापेक्ष मूल्यों की अभिव्यक्ति मिलती है। नारी केवल नारी, प्रेयसी, पत्नी ही नहीं, माँ भी है। प्रायः स्वातन्त्रयोत्तर कहानीकारों ने माँ का परम्परागत आदर्श स्वरूप ही दिखाया है। मोहन राकेश की कहानी 'आर्द्रा' ममता में जकड़ी हुई उस माँ का उदाहरण है, जो देश विभाजन के

[40] आधुनिक हिन्दी साहित्यः डॉ. रामगोपाल, पृ.193

बाद टूटते और बिखरते परिवार के बीच शोषण का माध्यम है। कमलेश्वर की कहानी 'देवा की माँ पति द्वारा वंचित स्वावलम्बी माँ का स्वरूप है।

आज के समाज के बदलते हुए आर्थिक स्तर के दबाव के कारण नौकरी, नारी के जीवन की मजबूरी बन गयी है और उसे इसका मूल्य भी चुकाना पड़ रहा है। नैतिकता की विघटनकारी परिस्थितियों में भाई बहन की कमाई लेने में संकोच नहीं करता। भले ही वे कमाई उसके नारीत्व को दांव पर लगाकर क्यों न अर्जित की गई हो। पाप–पुण्य की बदलती हुई परिभाषा में पुत्री द्वारा अर्जित धन के उपभोग में आज का पिता हिचकिचाता नहीं। गिरिराज किशोर की कहानी 'प्रपक वाला घोड़ा' और 'निकट वाला साहस' इसका उदाहरण है। आत्मनिर्भरता के वातावरण में नारी भले ही अपने पंखों को खुला हुआ अनुभव करती हो, लेकिन सामाजिक नीतियों, मानसिक ग्रन्थियों से लगातार जूझने के प्रयत्न में उसके डैने भी टूट गये है। ... 'खुले पंख टूटे डैने' राजेन्द्र यादव। आर्थिक दबाव के कारण ग्रामीण नारी भी परिवार की भूख मिटाने के लिए अपना सौदा करती है। पति निर्विकार भाव से पत्नी एवं बेटी के शारीरिक मूल्य की रोटी बेहिचक ग्रहण करता है। मणि मधुकर की 'धर्मरिश्ते' कहानी ऐसी ही दर्द भरी नारी के आत्म समर्पण की कहानी है। कमलेश्वर की 'राजा निरूबंसिया' कहानी भी आर्थिक दबाव के कारण नारी के समर्पण की कहानी है।

मोहन राकेश, धर्मवीर, भारती, कमलेश्वर, निर्मल वर्मा, दूधनाथ सिंह, अमर काना, कृष्ण बलदेव वैद्य, भीष्म साहनी, रमेश पक्षी, उषा प्रियम्बदा, मन्नू भण्डारी, कृष्णा सोबती आदि कथाकारों का ध्यान विशेषरूप से मध्यम एवं निम्न वर्ग की नारी की ओर रहा है। स्वतन्त्रयोत्तर कहानी में नारी के अन्तर्मन, वृत्तियों, प्रवृत्तियों, रूधियों आदि की यथार्थ अभिव्यक्ति मिलती है। आर्थिक संघर्ष, टूटते हुए संयुक्त परिवार और पग–पग पर आने वाली जीवन की कठिनाइयां बदलते हुए मूल्यों का प्रमुख कारण है। यद्यपि स्वतन्त्रता के पश्चात् नारी के व्यक्तित्व के विकास को नया मोड़ अवश्य मिला, फिर भी आज भी नारी पुरुष द्वारा शोषण का साधन बनी हुई है। एक ओर जहाँ नारी को नई चेतना नई वैचारिकता एवं अधिकार बोध प्रदान किया गया है, वहीं नयी समस्या भी उत्पन्न कर दी गई है। नारी–जीवन शाश्वत

परम्पराओं तथा नैतिक मर्यादाओं में आने वाले परिवर्तन के फलस्वरूप अनेक समस्याओं, विषमताओं, द्वन्द्वों और संघर्षों से भर गया है।

स्वतन्त्रता पूर्व एवं स्वतन्त्रयोत्तर कहानियों में नारी– साहित्य में समाज की व्यष्टिगत एवं समष्टिगत अनुभूतियों की कलात्मक अभिव्यक्ति होती है। साहित्यकार यथार्थ चित्रण के साथ समाजहित को ध्यान में रखता हुआ दृष्टा और सृष्टा के दायित्व का निर्वहन करता है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के लक्ष्य और आदर्श को सामने रखकर निष्ठापूर्वक कदम से कदम मिलाती हुई भारतीय नारी भी इस महायज्ञ में घर की चहारदीवारी से बाहर आकर आहुति देने के लिए तत्पर हुई।

स्वतन्त्रता से पूर्व लिखा गया साहित्य सामाजिक दायित्व से पूर्ण था इसलिए तत्कालीन साहित्य में नारी के आदर्श स्वरूप को प्रतिष्ठित किया गया। माँ, पत्नी, पुत्री, बहन आदि सम्बन्धों में जी रही नारी की मान्यताएं एवं अपना व्यक्तित्व भी है। इसकी झलक तत्कालीन साहित्य में देवी जा सकती है। स्वतन्त्रता के पूर्व रचे गये कथा साहित्य में ऐसी नारियों का भी चित्रण है, जो विदेशी चकाचौथ में अपनी संस्कृति को भुला बैठी है या अपने स्वार्थ में कर्तव्यच्युत हो गई है। किन्तु आदर्शोन्मुख साहित्यकारों ने उनके मन को पश्चाताप की अग्नि में तपाकर कुन्दन बना दिया है। आदर्शोन्मुख साहित्य में नारी देशप्रेमी की जननी, आजादी की वेदी पर बलिदान होने वाले भाई की बहन, कर्तव्यपथ पर अग्रसर कराने वाली पत्नी तथा समाजसेवा में निरत सहयोगी के रूप में कोमल, सहिष्णु, कर्तव्यपरायण, विवेकशील नारी के रूप में चित्रित की गयी। पन्द्रह अगस्त सन् सैतालीस को स्वतन्त्रता प्राप्ति की सुखद घटना के साथ देश के विभाजन और विघटन की पीड़ा ने सभी के हृदय हिला दिए। इतिहास साक्षी है कि नारी की यही नियति रही कि जब कहीं भी संघर्ष होता है, दण्ड उसे ही भुगतना पड़ता है। स्वतन्त्रता के तुरन्त बाद लिखे गए कथा साहित्य में नारी की इसी बिडम्बना का चित्रण है। पाकिस्तान में रहने वाली स्त्रियों को विवश होकर इस्लाम धर्म स्वीकार करना पड़ा तथा मुसलमानों के साथ गृहस्थी बसानी पड़ी। सरकारी प्रयत्नों से जब देशी नारियां भारत आयी तो सगे–सम्बन्धियों की उपेक्षा से उन्हें अपना जीवन गुमनामी में बिताना पड़ा। नारी के इस संघर्ष प्राप्ति रूप का चित्रण एक दशक तक होता रहा। अभावों में बीती हुई नारी कहीं

परिस्थितियों से समझौता करती हुई दिखाई पड़ती है तो कहीं चुनौतियों का सामना करती हुई पहाड़ी नदी के समान आगे बढ़कर अपना मार्ग बनाती हुई दिखाई देती है।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् त्याग, निस्वार्थभाव और स्वदेशी का मोह सभी तिरोहित होने लगे। भाषा और संस्कृति का प्रेम ओझल हो गया। अधिकार सुख की आकांक्षा में व्यक्ति अंग्रेजों के जाने पश्चात् अंग्रेजी दास्ता में जकड़ता गया। देश में अंग्रेजी की अनिवार्यता के कारण दोहरी शिक्षा पद्धति का जन्म हुआ। बढ़ती हुई आबादी, निरंकुश मंहगाई और स्पर्धा में, आधुनिक मशीनी युग में भारतीय दर्शन के पार पुरूषार्थो– धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष के स्थान पर केवल अर्थ और काम को प्रधानता मिलने लगी। अर्थ के बल का शोषण अधिकार सुख बन गया। ऐसी परिस्थिति में नारी को परिवार की आवश्यकताओं के लिए नौकरी की प्रतियोगिता में कूदना पड़ा। गरीब किसान और मजूदर परिवारों में तो पहले ही नारी, पुरुष के साथ काम करती थी और अब मध्यम वर्ग में भी निम्न वर्ग की स्थिति आ गई। निम्न आय वर्ग की स्थिति आ गई। निम्न आय वर्ग की स्त्रियां बाहर काम करने कारण उत्तरदायित्व का दोहरा बोझ उठाने लगी। उनकी कार्य परिधि तो बढ़ी, परन्तु स्थिति में विशेष सुधार नहीं हुआ। परिवार का आर्थिक संतुलन बनाये रखने के लिए पुरुष यह तो चाहता है कि नारी बाहर काम करें, किन्तु उसके कार्य से जुड़े हुए उत्तरदायित्व के प्रति अपेक्षा भाव रखता है। पुरूष स्त्री को यह स्वतन्त्रता भी नहीं देना चाहता कि यह अपनी कमाई से कुछ भी खर्च कर सके। वह प्रायः स्त्री को संदेह की दृष्टि से देखता है। परिणाम स्वरूप घर के बाहर काम करने की कीमत स्त्री को चुकानी पड़ती है। नौकरी पेशा स्त्री की दशा और भी शोचनीय है। उसकी या तो माँ बाप शादी ही नहीं होने देते या कोई उसके शादी करने को तैयार नहीं होता, या वह खुद ही शादी को तैयार नहीं होती या शादी के बाद ससुराल वाले उसे सताते हैं या चाहते हैं कि यह कमा कर भी लाये और नौकर की तरह घर का काम भी करें।[41] लेकिन आज वह परिवार में अपने व्यक्तित्व को पूर्ण

[41] नई कहानी : पृ.125

रूप से नष्ट करके दासी की तरह जीवन व्यतीत करने को राजी नहीं।[42] शिक्षित एवं आधुनिक नारी के साथ सबसे बड़ी समस्या यह भी है कि जहाँ वह कार्य करती है, उसका फर्नीचर तो आधुनिक अवश्य है, लेकिन व्यवस्था पर सामन्तद्राही का लबादा बढ़ा हुआ है। उसके पास और सहयोगी अस्तित्व को नगण्य समझकर उसकी बोटी–बोटी नीचकर खा जाना चाहते हैं। पुरूष मात्र से उसे घृणा होने लगी है। दूसरी ओर घरेलू नारी की स्थिति में भी बदलाव दिखाई देता है। आर्थिक संतान से पीड़ित नारी पुरूष वर्ग पर निर्भर वर्ग पर निर्भर होने के कारण हीन भावना में मजबूती आ रही है। उसके ह्रदय में घरेलू स्थिति के पलायन की आकांक्षा उसे आर्थिक स्वतन्त्रता प्राप्त करके इस छोर संकट से छुटकारा पाने को प्रेरित कर रही है।

सामाजिक असमानता और दोहरे मानदण्डों में जकड़ी हुई प्रथम नारी का मन असन्तोष, विद्रोह एवं कुण्ठाओं से स्वतन्त्र होने के लिए स्वयं अपना मार्ग ढूंढने लगा, अतः हर धरातल पर नारी अपने स्वत्व के उन्मीलन के प्रयत्न में लग गई। परम्परा से चले जा रहे पुरूष–सत्तात्मक समाज के नैतिक मूल्यों में सहसा बदलाव आने लगा। इस परिवर्तन ने जहाँ नारी को एक ओर नई चेतना, नई वैचारिकता एवं अधिकार बोध प्रदान किया है, वहीं कुछ समस्यायें भी उत्पन्न कर दी है। गहरी जड़ों वाली परम्पराओं और नैतिक मर्यादाओं में जकड़ी हुई नारी अपना परिवर्तन नहीं चाहती। अतः आज उसका जीवन अनेक समस्याओं, विषमताओं, विसंगतियों, द्वन्द्वों और संघर्षों से भर गया है। युगीन संदर्भों में बदलते जीवन मूल्यों की सहज स्वीकृति, महानगरीय जीवन तथा आर्थिक दबावों के बीच उभरते हुए नये संघर्षों से जूझती नारी वस्तुतः साहित्यकारों के लिए चुनौती बनकर कथा साहित्य में तथ्य बन गई है। स्वातन्त्रयोत्तर हिन्दी कहानी साहित्य में प्रेम विवाह तथा स्त्री–पुरूष के टूटते–बनते सम्बन्धों की पृष्ठभूमि में जितनी कहानियां इस युग में लिखी गई, उतनी पहले नहीं। एक कहानीकार ने तो कहा है, 'तमाम दुनिया' की भाषा कुल मिलाकर स्त्री पुरूष की बातचीत है, जो उनके सम्बन्धों के मुताबिक बदलती रहती है।' मोहन राकेश राजेन्द्र यादव, कमलेश्वर, निर्मलवर्मा, मन्नू भण्डारी, कृष्णा सोबती, उषा

[42] भारतीय सामाजिक संस्थाएं : रवीन्द्र नाथ मुखर्जी, पृ.447

प्रियम्वदा, मृदुला गर्ग, शशि प्रभा शास्त्री, कमलेश्वरी आदि समकालीन कथाकारों ने स्त्री पुरूष के पारस्परिक सम्बन्धों में होने वाले इसी परिवर्तन का चित्रण किया है।

स्वतन्त्रयोत्तर भारत में सामाजिक दृष्टि से नारी का घर की चहारदीवारी के बाहर निकलना एक महत्वपूर्ण परिवर्तन है। आज की नारी का जीवन एकांगी न होकर बहुमुखी हो गया है। वह धार्मिक, सामाजिक, नैतिक आदर्शों और मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों के बन्धनों से अलग जीवन के बीच घुल घुलाते यथार्थ का साक्षी है। शिक्षा, हिन्दू कोड दिल पाश्चात्य प्रभाव ने नारी की भावनाओं के साथ प्रेम और विवाह के प्रति उसकी दृष्टि में भी परिवर्तन ला दिया है। स्त्री पुरूष के बीच सम्बन्धों के आधार पर प्रेम के विभिन्न रूप निर्धारित किए जा सकते हैं, यथा– पति–पत्नी, प्रेमी–प्रेमिका, मित्र–मित्र के बीच का प्रेम, इनमें से यर्थादित अर्थों में केवल विवाहित प्रेम को ही मान्यता प्राप्त है। प्रेम का आदर्श वादी रूप अब यथार्थवाद का चोला धारण कर चुका है। प्रेम अब भी जीवन्त शब्द है और उसे सुनते ही अब भी हमारी धड़कन में एक और ही धड़कन सुनायी देती है। अन्तर केवल उतना ही है कि अ बवह भावुकता से भरा हुआ एक पीला, बीमार और एकांगी शब्द नहीं रह गया, बल्कि वह एक भयानक मगर मनुष्य के सबसे कीमती अनुभव के रूप में स्पष्ट होता जा रहा है, उसकी जटिलतायें सामने आ रही है।[43] भारतीय परिवेश में प्रेम विवाह की परिणति के रूप में मान्यता। आधुनिक नारी अपनी व्यक्ति चेतना को सर्वप्रथम स्थान देते हुए इस बन्धन को तभी तक निभाने को तैयार है, जब तक उसका 'स्व' संतुष्ट होता हो। इस प्रेम में भावना के साथ बौद्धिकता ने प्रवेश कर लिया है।

नारी हर युग में एक समस्या रही है। कभी उसे देवताओं की कोटि में रखकर पूज्य माना गया और अपूज्य मानने पर समस्त कर्मकाण्ड क्रिया के निष्पक्ष होने का कारण बना दिया गया। मनु के युग में नारी आदर्श थी किन्तु आदर्श का धरातल नहीं है।

यत्र नार्यस्तुपूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता।

[43] सम्भावना, श्रीकान्त वर्मा, पृ.229 नई कहानी, दशा–दिशा, सम्भावना, सम्पादक–सुरेन्द्र

यत्रेतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तनापलाः क्रियाः।।[44]

आज कलह का साम्राज्य होने से निश्चय ही सभी कर्म निष्पक्ष हो गये है। आज से 2500 ई.पू. से 1500 ई.पू. तक वैदिक काल में नारी पुरूष को समान अधिकार थे। पुत्र के समान कन्या का भी अपनयन संस्कार होता था। वह पूर्ण शिक्षा ग्रहण करती थी, शिक्षक का कार्य करती थी। वह पक्ष सपनों आदि में मंत्रोच्चारण करती थी, शास्तार्थ भी करती थी। नारी को गृहलक्ष्मी स्वीकार करते हुए 'गृहम् हि गृहिणीहीनम् अरण्यसहजं सतम्' की घोषणा की गई थी। प्राचीन भारत की नारी को देवी का स्थान प्राप्त है। 'मातृदेवों भव' की शिक्षा उस युग की प्रथम शिक्षा थी।[45] 1500 ई.पू. से 500 शताब्दी तक आर्यों ने अपने पड़ोसी राज्यों पर प्रभुत्व जमा कर वहा की स्त्रियों से विवाह किया। वे स्त्रियां संस्कृत भाषा से अनभिज्ञ थी, अतः मन्त्रोध्वारण में असमर्थ होने के कारण उनसे वेदाध्ययन का अधिकार छीन लिया गया, न स्त्री न शूद्रो वेदम् पीयेताम्। एक ओर– एकाकी रमते स द्वितीय मेहसूस कहकर नारी रूप माया को अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान दिया गया और दूसरी ओर 'द्वार किमेक' नरकस्य नारी कहकर नारी को नरक का द्वार मानकर अतिनिन्दित बताया गया। पुराण काल में नारी रूप के बिना भगवान की पूजा का निषेध है। 'गौर तेजो बिना प्रायः भक्तः श्याम तेजो न पूज्यते' राधेकृष्ण सीताराम में नारा की पुरूष से पहले प्रतिच्छित देखकर एक कवि ने कृष्ण की पूर्णतः में राधा की सहभागिता सिद्ध कर दी।

'आदि में न होती यदि राधे की रकार तो,

मेरे जान राधे कृष्ण आधे कृष्ण रहते।'

मार्कण्डेय पुराण के अनुसार देवी विधाएं ही स्त्रियों के रूप में चराचर जगत में व्याप्त है 'विद्याः समस्तास्तव देवि मेदाः स्त्रियः समस्ताः सकता जगत्सु' आश्चर्य यह है कि स्त्रियों को एक ओर देवी का रूप बताया गया है और दूसरी ओर उसे भांग की वस्तु बताकर पुरूष के हाथ का खिलौना मात्र समझा गया है। भतृ हरि ने 'श्रृंगार शतक' में उसे एक ओर सम्मानित किया है और वैराग्य शतक में उसे

[44] मनुस्मृति, पृ.13/561
[45] तैन्तिरीय उपनिषद् में आचार्य का दीषान्तोपदेश, पृ.1/11

सम्मान के घड़े के समान बताया है। कुछ विद्वानों की दृष्टि में स्त्री सदैव संरक्षण की आकांक्षणी है, उसे स्वातन्त्रय की कामना नहीं है–

'पिता रक्षति कोमारे भत्ता रक्षति पांवने।

पुत्रस्तु स्थचिरे भावे न स्त्री स्वातन्त्रय महंति।'

इस प्रकार पुरूष प्रधान समाज ने नारी को असहाय और पराधीन मान कर स्वतन्त्रता से वंचित कर दिया है। स्वार्थी पुरूष कभी नारी को प्रेरणा की देवी कहता है तो कभी उसे पुरूष की कमजोरी मानता है। पुरूषों के मध्य नारी वास्तव में अजीब प्रकार के विरोधाभासों का शिकार रही है। पुरानी कहानी में उसके केश होते हैं, ललाट पर बिन्दी, नासिका कभी–कभी क्रोध, प्रतिक्षा से फड़कती है... गर्दन के नीचे कोई हिस्सा नहीं होता, बस पैर होते हैं। जिसका अंगूठा धरती कुरेदता है।[46]

हिन्दी कहानियों में नारी के विविध रूप

जहाँ तक नारी स्थितियाँ, प्रवृत्तियों के सदस्य भावनात्मक, मानसिक, सामाजिक विश्लेषण व उनके शोषण की प्रस्तुति का प्रश्न है, कहना होगा कि इस दिशा में अभी हमारा साहित्य बहुत पीछे है। भारतीय सन्दर्भ में समाज शास्त्रीय दृष्टि हमारे यहाँ विकसित ही नहीं की गई। इसी कारण भारतीय नारी की कोई एक समूह छवि दी ही नहीं जा सकती। परन्तु भारत में नारी की सांस्कृतिक छवि अवश्य है, जिसे उभारना हमारे साहित्य के लिए जरूरी है। भारतीय साहित्य में वर्णित औरतों का एक वर्ग अपने प्रति पुरातन मूल्यों से प्रेरित दृष्टि रखने वाले समाज का विरोध नहीं कर सकता। पुरूषों से पूछकर निर्णय लेने वाली नारी अपना व्यक्तित्व प्रमाणित नहीं कर सकती। परमुखापेक्षी होने के कारण उसका व्यक्तित्व संशय, अविश्वास, अनिश्चयता और अन्तर्विरोधी से भरा होता है। पुरूषों की तमाम दवलन्दाजी को बेवजह सहते रहने के कारण नारी जीवन की स्वाभाविकता नष्ट हो जाती है।

स्वतन्त्र भारत में विकास के तारतम्य में शिक्षा के बढ़ते प्रभाव के कारण नारी अब प्रत्येक स्तर पर समाज की बनाई पारम्परिक मान्यताओं को तोड़कर अपनी

[46] नई कहानी की भूमिका, कमलेश्वर, पृ.35

अस्मिता को पाना चाहती है। संवेदनशील नारी की परम्परा के साथ अपनी सारी परिभाषा, अमूर्त, परस्पर विरोधी और एकाकी लगती है। आज के इस यंत्रवादी युग में मूल्य विघटन एक महत्वपूर्ण समस्या है। हिन्दी कहानीकारों ने मूल्यों के इस संकट को बहुत देर से पहचाना। स्वतन्त्रता पूर्व की हिन्दी कहानी में इनका स्वर ही नहीं मिलता। ये सत्य है कि स्वातन्त्रयोत्तर कहानीकारों ने ही मूल्यों के संकट को सर्वप्रथम रचनात्मक स्तर पर सही ढंग से आंकने का प्रयास किया है।

स्वातन्त्रयोत्तर हिन्दी कहानी में दोनों पीढ़ियों का प्रतिनिधित्व है। एक ओर अभी तक परम्परागत जीवन मूल्यों से चिपटे हुए पात्र हैं तथा दूसरी ओर परम्परागत जीवन मूल्यों के प्रति भौह को स्थान कर साहस पूर्वक विरोध करने वाले पात्र है। इस सन्दर्भ में नई कहानियों में 'तलवार पंच हजारी', 'जहां' लक्ष्मी कैद है, 'बिरादरी बाहर', 'मलवे का मालिक', 'ये मेरे लिए नहीं', 'एक यात्रा सतह के नीचे', 'चीप की दावत', 'जिन्दगी और गुलाब के फूल', 'वापसी', 'यही सच है', 'मित्रों' मरजानी तथा साठोत्तरी कहानियों में 'पिता', 'रक्तपात', 'पेड़', 'नौ साल छोटी पत्नी', चिट्ठियों के बीच' 'प्रथक वाला पीड़ा' और 'निकर वाला साहस', 'छुटकारा', 'स्वस्ति', 'घेरे' आदि कहानियां उल्लेखनीय है। इन सभी कहानियों में परम्परागत जीवन मूल्यों के प्रति विद्रोह और मुक्ति के लिए छटपटाहट के साथ नये जीवन मूल्यों की स्थापना की ललक स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। राजेन्द्र यादव की कहानी 'तलवार पंच हजारी' और मदन छावड़ा के 'घेरे' कहानी इसके उदाहरण है। ये सभी कहानियां समाज में व्याप्त परम्परागत जीवन मूल्यों के प्रति पितृष्णा अभिव्यक्त करती है तथा नये जीवन मूल्यों की स्थापना के लिए संघर्षरत है। स्वतन्त्रयोत्तर हिन्दी कहानी पुराने मूल्यों के टूटने और नवीन मूल्यों के निर्माण की कहानी है। इसमें परम्परागत मूल्यों के प्रति आक्रोश के स्तर के साथ ही नवीन मूल्यों की दृष्टि के संकेत भी दिखाई देते हैं।

स्वतन्त्रता पूर्व एवं स्वातन्त्रयोत्तर कहानियों में नारी शोरूम की अभिव्यक्ति विविध रूपों में हुई है। भारतीय समाज में पुरूष स्वयं स्वतन्त्र रहकर नारी स्वतन्त्रता का निरन्तर विरोध करते आये हैं, परिणामतः नारी की स्थिति अत्यन्त विवशता और लाचारी से परिपूर्ण है। आर्थिक दृष्टि से असमर्थ होने के कारण वह सदा पिता, भाई

या पति पर आश्रित रहती है। नारी को पतिव्रता, सती, तथा देवी जैसे आदर्शों से विभूषित कर उसे घर की चहारदीवारी में रखा गया है। परिस्थितियों से विवश नारी को कहीं कहीं अनैतिक आवरण के लिए बाध्य किया गया। प्रेमचन्द्र एवं उनके समकालीन अनेक कहानीकारों ने इस तथ्य को स्वीकार किया है। इन कहानीकारों ने नैतिकता की धारणा को पुराने आधारों पर आश्रित नहीं माना। यशपाल लिखते हैं 'अगर नैतिकता और आचरण का प्रयोजन मनुष्य को बेहतर व्यवस्था और विकास की ओर ले जाना है तो यह मानना पड़ेगा कि यह उद्देश्य हमारी वर्तमान नैतिकता और आधार सम्बन्धी धारणा से पूरा नहीं हो पा रहा है।[47] उनका कथन है कि नैतिकता का सामाजिक, आर्थिक व्यवस्था से अटूट सम्बन्ध है और इस सम्बन्ध में परिवर्तन अनिवार्य है।

भारतीय समाज में नारी अधिकांशतः विविध सम्बन्धों में बीती है। वह कहीं माँ–बेटी के रूप में है, कहीं चाची–ताई, कहीं बहन–बुआ, कहीं ननद–भाभी, देवरानी जेठानी प्रेयसी, सास–बहू, कहीं विधवा, कहीं तलाकशुदा, कहीं वैश्या। नारी का इन सभी सम्बन्धों की आड़ में पारिवारिक तथा सामाजिक शोषण होता ही रहता है। कभी पुत्र तथा पुत्री के अन्तर का बोध कराते हुए पुत्री को अशिक्षित रखना, कहीं बचपन में ही अबोध बालिका को विवाह बन्धन में बांधना, कहीं देवयांग से बचपन में ही विधवा होने की व्यथा को न समझते हुए भी बार–बार समाज द्वारा प्रताड़ित होना, कहीं पारिवारिक सदस्यों की सुविधाओं के लिए स्वयं त्याग करते हुये आन्तरिक पीड़ाओं को झेलना, अभावों से लड़ना, टूटते हुए दाम्पत्य जीवन को बिखरने से बचाने के प्रयास में मानसिक तनाव तथा कलेश सहते हुए तलाक की विभीषिका को झेलना, कहीं उचित दाव के अभाव में असमय में ही दहेज की चिता पर जलते हुए सती हो जाना आदि विडम्बनाएं नारी शोषण की अभिव्यक्ति के विविध रूप है। हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में सदा ही परिवर्तित समय की प्रति छवि अंकित की जाती रही है। स्वतन्त्रता पूर्व की कहानियों में नारी को घर की चहारदीवारी में सीमित रखकर समाज में उसकी महत्ता पुरूष सापेक्ष चित्रित की गई। परन्तु स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त देश की सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक

[47] यशपाल : दादा कामरेड, दो शब्द, पृ.6

तथा धार्मिक परिस्थितियों में अनेक परिवर्तन आये है। आज परिवार एवं समाज विषयक अनेक मान्यतायें टूटती जा रही है और उनका स्थान नई मान्यतायें लेती जा रही है। विगत दो दशकों का समय नारी की पारिवारिक और सामाजिक मान्यताओं में होने वाले शोषण तथा परिवर्तनों का काल रहा है। वैसे तो ये परिवर्तन स्वतन्त्रता संग्राम के समय से ही दृष्टिगोचर होने लगा था। सन् 1960 से सन् 1975 तक की प्रवधि नारी मुक्ति आन्दोलन की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। परिवार और समाज से संदर्भित नारी की मानसिकता तत्कालीन कहानीकारों ने अनेक स्तरों पर चित्रण किया है जैसे–

1. नयी पीढ़ी और पुरानी पीढ़ी की समस्या।
2. पारिवारिक महत्व का आधार आर्थिक।
3. दाम्पत्य जीवन में असंतोष होने से पारिवारिक विरक्ति।
4. सम्मिलित परिवार की अपेक्षा व्यक्ति परिवार में सुख की कल्पना।
5. परिवार के प्रति अवशेष आसक्तिभाव।

'अनाम स्वामी' की उदिता, 'प्रेम अपवित्र नहीं' की शिवानी, 'एक इन्च मुस्कान की अमला, 'पैरो के छाले' की तबा, दण्ड–दीप की मनीषा, अपने स्वतन्त्र अस्तित्व को लेकर परिवार से विरोध कर देती है। वे पारिवारिक बन्धन और रीतिरिवाज उन्हें अपने बन्धन में नहीं बांध पाते। नारी के वैयक्तिक पारिवारिक और सामाजिक महत्वांकाक्षाओं एवं परिवर्तित दृष्टिकोण को लेकर यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता कि नारी शोषण समाप्त हो गया है। सम्भवतः इसी आशय को ध्यान में रखकर 'रे मैयर' ने कहा है कि परिवार के द्वर्दिन अवश्य है परन्तु इनके लोभ की कोई आशंका नहीं है। व्यक्तिगत परिवार इतने अधिक टूट जायेगे कि उनकी कभी भी मरम्मत नहीं की जा सकेगी, परन्तु उनका स्थान लेने के लिए नये परिवार उत्पन्न हो जायेंगे और अनेक बाधाओं और प्रहारों के बाद भी विवाह लोकप्रिय रहेगा।'[48]

[48] रे ई. बेवर, मैरिज एण्ड दि पैमिनी आहूटर दि वार, पृ.168

प्रेमचन्द्र ने विशेष रूप से नारी की हीन स्थिति पर गहरी पैठ की तथा अपनी कहानियों में नारी का पवित्र एवं उदात्त रूप उभार कर उसे समाज द्वारा पुनः सम्मान जनक रूपों में अंकित किया। भगवती प्रसाद बाजपेयी, विश्वम्भर नाथ कौशिक, सियारामशरण गुप्त आदि ने नारी के देवी और मानवीय रूपों का चित्रण विस्तार से किया। किन्तु नारी मन की अन्तर्तम गहराइयों में वास्तविक पैठ जैनेन्द्र, अक्षेय, इलाचन्द्र जोशी आदि द्वारा ही हो सकी। वास्तव में उन्होंने नारी के वाह्य पक्ष की अपेक्षा उसकी मानसिकता का विराट अंकन किया। तात्पर्य यह है कि सृजन के केन्द्र में नारी को रखकर साहित्य यात्रा सतत् गति प्राप्त करती रही है। इसमें सन्देह नहीं कि प्रारम्भ में नारी केवल काव्य सृजन के उत्सव के रूप में कार्य करती रही, किन्तु कालान्तर में साहित्य की अन्य विधाओं में भी उसके विभिन्न रूपों का चित्रण होने लगा। गद्य में विवेचनात्मक और व्याख्यात्मक शैलियों के कारण नारी रूप के चित्रण में वैविध्य आया मनोविज्ञान के विकास के परिप्रेक्ष्य में नारी को भावुक, रोमान्टिक और भावनात्मक धरातल से उठाकर तर्क सम्मत बनाने का प्रयास किया गया। अद्यतन युग में यही प्रयास कहानी में दृष्टिगोचर होता है।

बीसवीं शताब्दी के 15 वर्ष कहानी के शंशय वर्ष है, परन्तु प्रेमचन्द्र व उनके समकालीन कहानीकारों में चतुरसेन शास्त्री, जयशंकर प्रसाद, भगवती चरण वर्मा, विश्वम्भर नाथ कौशिक आदि ने कहानी साहित्य में भावनात्मक पक्ष को प्रतिष्ठित किया है। इन कथाकारों की प्रमुख कहानियों जैसे प्रेमचन्द्र की 'स्रोत' 'बड़े घर की बेटी', 'बेटो वाली विधवा', शास्त्री जी की 'दुःखवा में कासे कहूं मोरी सजनी', चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी' की 'उसने कहा था', प्रसाद की 'पुरस्कार' 'आकाश दीप' सुदर्शन की 'एक रमणी', भगवती प्रसाद बाजपेयी की 'निदिया लागी' में भावनात्मक पत्र का विवेचन किया गया है। उपरोक्त कहानीकारों के अतिरिक्त इलाचन्द्र जोशी, यशपाल, जैनेन्द्र, उपेन्द्र नाथ 'अश्क' अक्षेय आदि ने अपनी रचनाओं में नारीगत समस्याओं के वाह्य आंकलन के साथ–साथ उनके भावनात्मक द्वन्द्व को भी स्थापित किया है।

आधुनिकता की दृष्टि से नई कहानी की शुरूआत डॉ0 नामवर सिंह के अनुसार उन्नीस सौ पचपन के पश्चात् मानी जाती है। किन्तु नई कहानी को

आन्दोलन स्तर पर व्यापक परिप्रेक्ष्य मिला मोहन राकेश से।[49] पिछले कुछ वर्षों में कहानी के स्वत्व विकास में उत्तरोत्तर वृद्धि होने के कारण नई कहानी अपने आप में विरोधाभास बनती गई।[50] कमलेश्वर ने नई कहानी और पुरानी कहानी में अन्तर दर्शाते हुए कहा है– 'पुरानी कहानी में व्यक्ति शारीरिक रूप से आता था और वैचारिक रूप से कथाकार। नई कहानी में यह विचार उसी शरीर में अवस्थित वृद्धि से उपजता है, जिसे प्रस्तुत किया जाता है... तब विचारों की हाड़मास प्रदान किया जाता था, अब हाड़मास के इन्सान के विचारों को प्रस्तुत किया जाता है।[51] अतः नई कहानियों का स्वर व्यक्ति वादी स्तर पर जीवन, परिवार और व्यक्ति के विघटन का स्वर था।

प्रायः कहानीकारों द्वारा नारी के मानसिक, सामाजिक एवं पारिवारिक शोषण को अपनी कहानियों में चित्रित किया गया है। फणीश्वर नाथ रेणु की 'तीसरी कसम' तथा 'साल पान की बेगम' आंचलिक स्पर्शानुभूति कराने वाली विशेष नारी चरित्रों की कहानियाँ है। 'आदिम रात्रि की महक' तथा 'रसिक प्रिया' कहानियों में नारी शोषण के सन्दर्भ में घृणा, क्षोभ एवं कोमलतय भावाभिव्यज्जना के दर्शन होते हैं।

मोहन राकेश की कहानियों में नारी की मानवीय मन्त्रणा एवं शोषण का प्रमुख स्तर है। जीवन की विषमता और मन की जटिलता में उनके नारी पात्र पाठक के मन में गहरी करूणा का उद्रेक करते हैं। 'मिस्र पान' उनके इसी दृष्टिकोण की चमकती कहानी है।

डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल ने ग्रामीण परिवेश में विवशता का जीवन जीने वाली नारियों को अपनी कथा का केन्द्रीय स्वर बनाया है। 'द्रोपदी' 'सूरच्छुण्ड की हिरणी', 'राम लीला', 'गुल बदन' आदि ऐसी कहानियां है, जो स्त्री पुरूष के सामाजिक समझौते, विवाद रोश को शोषण का सन्दर्भ बनाती है।

---

[49] आधुनिक साहित्य विशेषांक, जनवरी, 1967
[50] नई कहानी अपने में ही एक विरोधाभास है, निर्मल वर्मा, धर्मयु, 9 जनवरी, पृ.64
[51] कमलेश्वर : खोई हुई दिशाएं, भूमिका

बलवन्त सिंह ने नारी को पत्नी, प्रेमिका, वैश्या आदि विभिन्न रूपों में नारी–शोषण का विषय बनाया है। निर्मल वर्मा ने अपनी कहानियों में आधुनिक भावबोध पिरौते हुए नारी–पात्रों की मानसिक कुण्ठा, संयास तथा एकाकीपन को उभारा है। 'परिन्दे' की ललिका इसका श्रेष्ठ उदाहरण कही जा सकती है।

शिवप्रसाद सिंह ने भी नारी के विविध पक्षों का उद्‌घाटन किया है। 'एक कहानी' में उन्होंने सास के उस विकृत स्वभाव का वर्णन किया है, जिसके कारण वह बहू पर घर के भीतर पहरेदारी करती है।

राजेन्द्र यादव की कहानियों में नारी के मानसिक अर्न्तद्वन्द्व के दर्शन होते है। स्त्री का पत्नी होकर अन्य की पत्नी होने का द्वन्द्व पति द्वारा अन्य स्त्री के प्रति लगाव को अनुभव कर ईर्ष्या में जलती नारी, पति के विरोध में समान स्तर पर उभर कर नया साथी चुनने की धुन में सामाजिक विसंगतियों में जूझती नारी राजेन्द्र यादव की कहानियों का पतिपाथ विषय है। एक दुनिया समानान्तर जहां लक्ष्मी कैद है, रचनाओं में इनके रचनात्मक कौशल को इस दृष्टि से आंका जा सकता है।

मार्कण्डेय ने भी कहानी की पृष्ठभूमि में गांव को सजाया है। इनकी कहानियों में अपने अधिकार के लिए लड़ने वाली 'मैगी' स्थिति के अनुसार जीवन को अस्तत्व देने वाली रीतियां, व्यवभिधारिणी कहलाकर भी पाठकों की सहानुभूति अर्जित करने वाली हंसा तथा शरीर और पवित्रता के आधार पर सम्बन्ध विच्छेद का कलेश भोगती प्रिया सैनी ऐसी ही नायिकाएं है।

मन्नू भण्डारी मूल रूप से नारी जीवन की ही कहानीकार है। लेखिका ने आधुनिक नारी को घर की चहारदीवारी से निकालकर काम में लाकर खड़ा किया है। यहां पर स्थितियों का दबाव भी है और मुक्ति का उल्लास भी। उन्होंने शिक्षित युवती के जीवन की आन्तरिक ट्रेजडी की सूक्ष्म पहचान अंकित की है। 'यही सच है', 'मैं हार गई', 'एक प्लैट सैलाव', 'तीन निगाहों की एक तस्वीर' कहानियों में मन्नू जी का भावबोध समझा जा सकता है।

कमलेश्वर जी ने नारी पात्रों का मार्मिक अंकन किया है जिसमें कुछ नारी चरित्र तो अविश्वसणीय रहेगें जैसे– 'देवा की माँ' और मसीजन दोनों अपने ढंग की

महान मातायें एवं महान नारी है। बयान तथा अन्य कहानियाँ 1972 में प्रकाशित। कहानी संग्रह में इनकी अनेक कहानियाँ नारी शोषण के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डालती है।

उषा प्रियम्बदा की अधिकांश कहानियों का विषय आधुनिक परिवेश में नयी नारी है। इन्होंने अपनी कहानियों में नारी के जटिल स्वभाव का विश्लेषण करते हुए उसके अकेलेपन की प्रतिक्रिया को अभिव्यक्ति दी है। किराना बड़ा झूठ, मोड बन्ध, 'पिघलती हुई बर्फ', 'टूटे हुए' और 'वापसी' कहानियाँ इस दृष्टि से उल्लेखनीय है। इसके अतिरिक्त शिवानी, शशिप्रभा शास्त्री, कृष्णा सोबती, नारी कथाकारों ने भी नारी मन की जटिल गुत्थियों को सुलझाने की प्रक्रिया अपनी कहानियों में संचरित की है।

नारी के आर्थिक शोषण का यथार्थ चित्रण अमृत लाल नागर ने किया है। नागर जी कहते हैं– 'नारी होना आज की सामाजिक स्थिति में अभिशाप है– स्त्री और पुरूष आमतौर पर एक दूसरे की इज्जत नहीं करते है। स्त्री आमतौर पर आर्थिक दृष्टि से पुरूष की आश्रित है। उसका व्यक्तित्व स्वतन्त्र नहीं।[52] आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न और आत्म निर्भर हुए बिना नारी को परिवार और समाज उचित सम्मान नहीं देना। लेखक का विश्वास है कि आर्थिक परतन्त्रता ही नारी के शोधन का एक मात्र कारण है।

अमृत राय ने अपने कथा साहित्य में भौतिक आवश्यकताओं के लिए अर्थ के महत्व को स्वीकार किया है।

आधुनिक परिवेश में नौकरी पेशा नारी भी सामाजिक असमायोजन की शिकार है। उसकी समस्त आकांक्षाएं दिवा स्वप्न सी धूल सुसरित हो चुका है। आज की परिस्थितियों में वह इतनी दिग्भ्रमित और निराश हो चुकी है कि आज उसके पास कुंठाओं के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं।

नारी शोषण का प्रथम कारण है उसकी आर्थिक परावलम्बता। आज तक पुरूष वर्ग ने नारी का जो शोषण किया है उसका कारण नारी की आर्थिक

[52] अमृत लाल नागर : बूंद और समुद्र, पृ.47

विपन्नावस्था है। नारी की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ किये बिना उसका उद्धार होना असम्भव है। 'नागार्जुन' नारी को आर्थिक स्वतन्त्रता देने के पक्षधर है। आज की नारी जीवन के हरेक क्षेत्र में पुरूष को आवाहन दे रही है, इसका कारण सुधरी हुई नारी की आर्थिक स्थिति है। साठोत्तर कहानी लेखिकाओं में मेहरून्निता परवेज, मृद्धला गर्ग, भूकाल पाण्डे, दीप्ति खण्डेलवाल, मालती जोशी, निरूपमा सेवती तथा कृष्णा अग्निहोत्री की कहानियों में नारी जीवन की अनेक झाांकियां प्रस्तुत की गई है। इनमें माँ, बहिन, बेटी, पत्नी, प्रेमिका तथा मित्र के रूप में नारी के मार्मिक पक्षों का उद्घाटन हुआ है। मेहरून्निता परवेज की 'शिनाख्त', 'भोगे हुए दिन', 'खाली आंखों की पीड़ा' तथा 'आदम और हब्दा' कहानियों में नारी के अर्न्तमन की पीड़ा को विविधाभिव्यक्ति मिली है। 'दीप्ति खण्डेलवाल' तथा भूकाल पाण्डे की कहानियों में नारी पुरूष के बदलते सम्बन्ध मूल्यों की शिनाख्त है। इस प्रकार हिन्दी कथा यात्रा प्रेमचन्द्र से लेकर बीसवीं शताब्दी के आठवें दशक के पूर्वार्द्ध तक, अनेक पड़ाव तय करती हुई नारी के वाह्य एवं आंतरिक परिवेशगत घटनाक्रम को शब्दों में बांधती आयी है।

हिन्दी कथा साहित्य में नारी

भारतीय समाज में नारी की बृद्धामयी छवि रही है। वेदिक युग से ही यद्यपि विवाह के पवित्र बन्धन में बंधी नारी पुरूष पर आश्रित थी, फिर भी नारी को पर्याप्त सम्मान प्राप्त था। उच्च शिक्षा प्राप्त करना, सभा गोष्ठियों में भाग लेना तथा समाज सेवा के कार्य में हाथ बटाना आदि स्त्री की अधिकार सीमा के अन्तर्गत थे। गार्गी, मैत्रेयी, अपाला, मदालता जैसी विद्वनियों ने बड़े–बड़े ऋषि मुनियों को तर्क शास्त्र में परास्त किया तथा सीता, सावित्री, अनुसुइया एवं सुलोचना जैसी परिद्रता एवं सचरित्र स्त्रियों ने नारी धर्म के बल से देवी शक्तियों को पराभूत किया था। युद्ध के क्षेत्र में भी स्त्रियां पीछे नहीं रही। हमारा इतिहास इन सौरव्यपी स्त्रियों के चरित्र से भरा हुआ है। ऋग्वेद संहिता के विविध श्लोकों की रचना करने वाली नारियों में नाम उल्लेखनीय है। समाज में जब–जब नारी की उपेक्षा की गई है, तब–तब मानव अयोगति को प्राप्त हुए है। हिन्दी साहित्य के रीतिकाल में हिन्दी कवियों ने नारी के वाह्य सौन्दर्य तक ही अपने काव्य को सीमित रखा और नारी को मात्र वासना की

तृप्ति का साधन माना। परिणाम स्वरूप देश की सामाजिक तथा राजनीतिक परिस्थितियों में पराभव एवं परिवर्तन आया और देश पराधीनता की बेढ़ियों में जकड़ता गया।

समाज में उच्च सम्मान की अधिकारिणी नारी वास्तव में साहित्य में भी उसी रूप में स्वीकृत की गयी। हिन्दी साहित्य में कवि प्रसाद नारी को श्रद्धा का प्रतीक माना गया है।

नारी, तुम केवल श्रद्धा हो, विश्वास–रजत–नग–पगतल में।

पीयूष स्त्रोत सी वहा करो, जीवन के सुन्दर सम्मान में।

हिन्दी साहित्य में आधुनिक युग के सुप्रभात के साथ ही भव साहित्य का युग प्रारम्भ हुआ, जिसमें निबन्ध, कहानी, उपन्यास, रेखाचित्र, संस्मरण जैसी अनेक विधाओं ने स्थान प्राप्त किया। इन सभी विधाओं में लेखकों ने यद्यपि नारी के चरित्रांकन का प्रयास किया है, फिर भी कथा साहित्य की दृष्टि से उपन्यास एवं कहानी विधाओं में नारी की मनोदशा के चित्रण का यथेष्ट अवसर हिन्दी साहित्यकारों को मिला है। साहित्य में नारी के विविध सम्बन्धों को लेकर समाज से जुड़ी हुई मानमर्यादा के सन्दर्भ में नारी के अस्थिता को ही अनवरत प्रश्नांकित किया गया है तथा पुरूषों द्वारा अपने–अपने दृष्टिकोण से उनका समाधान भी किया गया है, किन्तु सामाजिक सन्दर्भ में नारी प्रकृति के मूलभूत मूल्यों के परिप्रेक्ष्य में उसका सही मूल्यांकन करने के प्रयत्न नगण्य हो रहे है। यहाँ परिवेश, सन्दर्भ एवं मूल्य के परिप्रेक्ष्य में नारी की रूचि का तात्पर्य उसके परम्परा पोषण या परम्परा विरोपी प्रतिमानों से न होकर उसे सामाजिक परिवेश में पुण्य के बराबर देखने से है।

मानवीय जीवन में नर से नारी का महत्व अधिक माना गया है। वस्तुतः मानव जीवन का प्रारम्भ नारी की ममतामयी गोद में ही होता है। यह अपने कर्तव्य के गुरार भार को मथन करती हुई मानव को संसार यज्ञ चलाने के लिए सक्षम बनाती है। नारी केवल माँ नहीं, किसी की पत्नी, किसी की पुत्री, किसी की बहिन भी है। सामाजिक दायित्वों का भार उस पर अधिक ही रहा है।

भारतीय अस्मिता स्त्री पुरूष को अलग–अलग पत्रिकाएं सौंपकर भी समानता के धरातल पर रखकर देखती है। अपितु नारी को जननी के रूप में पुरूष से ऊँचा ही स्थान दिया गया है। आधुनिक काल से पहले मध्य काल की विविध स्थितियों के दबाव से उत्पन्न बुराई के साथ ही स्वस्थ्य परम्पराओं में पनपे नारी के रूप में विकृतिमूलक अवांछिक स्थितियों को देखा जाना बाधिर। स्वतन्त्रता के पश्चात् उन अवान्छित परिस्थितियों का निराकरण हो चुका है और उन दबावों से मुक्ति मिल चुकी है। अतः समान संवैधानिक अधिकारों के इस युग में आवश्यकता है कि पूर्व उपलब्धियों के आधारभूत मूल्यों की फिर से स्थापना की जाय। इस प्रयोजन को प्रेरणा देने का सम्पूर्ण दायित्व साहित्य पर ही है।

हमारे साहित्य में प्रायः देवी या दासी, साध्वी या कुलटा दलिता दासी का प्रतिशोध चरित में जलती हुई उज्जंलता की मूर्ति आदि रूपों में नारी की पथपर विरोधी छवियाँ ही मिलती है। स्वतन्त्रता का पोषक होते हुए भी स्वामिनी नहीं है, साहसी होते हुए भी अपने चारों ओर ऐसी हुई रूढ़ियों ओर कुरीतियों को बदलने में असमर्थ है और पुरूष के कथनों का सहारा खोजते है। यदि नारी बलसाली है तो सहकर्मी और मानवीय स्तर पर वह अधूरी मित्र नहीं, अपितु परस्पर प्रतिद्वन्दी शोषित एक शोधक है। यदि साहित्य में उसे शिक्षिता पत्नी का स्थान मिला है तो अपने व्यक्तित्व के गुणों के द्वारा विभिन्न परिस्थितियों का समाधान करने वाली सहयोगी, सहधर्मिगी, कृपाल गृहिणी और सुयोग्य पूर्ण होने की अपेक्षा प्रायः हर तरह के अन्याय असमानता को झेलती हुई वह एक कमजोर नारी है या प्रतिक्रिया स्वरूप झगडालू पारिवारिक विघटन को बढ़ावा देने वाली औसत मध्य कालीन नारी है। यदि वह एक बेटी है तो वह उसी परम्परागत लड़के लड़की के भेदभाव को शिकार होकर पुरातन संस्कारों में बंधी, भली ही उसे ससुराल में आत्महत्या ही वर्षो न कहती पड़े। यदि वह परम्पराओं को तोड़कर कोई नया मार्ग निकालना चाहती है तो उसकी शिक्षा दीक्षा और नये पैमाने को उत्तरदायी ठहराया जाता है।

साहित्य समाज का प्रतिबिम्ब है। अतः समाज की परम्परायें संस्कृति और सभ्यता, शिक्षा दीक्षा, परिस्थितियों और प्रवृत्तियों, लेखक या कवि को कथानुसार साहित्य सृष्टि की प्रेरणा होती है। लेखनी के माध्यम से काव्य नाटक, उपन्यास

अथवा कहानी के रूप में साहित्यकार की भावनायें समाज के सम्मुख आती है। समाज उन्हें सुनता, पढ़ता, देखता और प्रभावित होता है। जिन रचनाओं में संवेदन शीलता है वे रचनायें समाज की स्थायी साहित्यिक धरोहर बन जाती है। साहित्य से व्यक्ति समाज और राष्ट्रीय जीवन से जुड़ा हुआ है– 'साहित्य का सम्बन्ध राष्ट्रीय जीवन है। साहित्यकार शून्य है रचना नहीं कर सकता। वक्त की परिस्थितियों से प्रभावित हुए बिना वह रह नहीं सकता इसलिए कि वह स्वयं जगत का एक अंग है। लेखक के ऊपर परिस्थितियाँ निरन्तर अपना प्रभाव डालती रहती है। लेखक उनसे अपने का प्रयत्न करें, तो भी नहीं बच सकता और न वह यही कह सकता है कि मैं अपनी बुद्धि के अनुसार इतने बजे से इतने बजे तक अपनी चारों ओर की परिस्थितियों से प्रभाव ग्रहण करेगा और इसके बाद नहीं। लेखक चाहे या न चाहे परिस्थितियां उस पर प्रभाव डालेगी। जीवन में जो क्रियायें हो रही है, साहित्यकार में उनकी प्रतिक्रिया होना स्वाभाविक और अनिवार्य है।

किसी देश या जाति के साहित्य को देखकर उसकी सभ्यता, संस्कृति और उन्नति का पता लग जाता है। जो जाति जितनी उन्नत होती है उसका साहित्य भी तदनुकूल ही उन्नत होता है। हिन्दी साहित्य के विकास पर दृष्टि डालने से हमें ज्ञात होता है कि समय और परिस्थितियों में अन्तर आने के साथ–साथ साहित्य में निरन्तर परिवर्तन होता रहा है।

हिन्दी के प्रारम्भिक दिनों में सारा देश छोटे–छोटे राज्यों में बंटा था। राजा का अधिपति एक राजा था जो पूर्णतया निरंकुश और स्वतन्त्र था। इन राजाओं का काम प्रायः छोटी–छोटी बातों पर एक दूसरे से युद्ध करना और शान्ति के समय भोग विलास के रंग में डूबना था। सारा देश इन परिस्थितियों से प्रभावित था। हर जगह तलवारों की खनक और पायलों की खनखन सुनायी पड़ती थी। अतः इस बात का साहित्य युद्ध के अतिरंजना पूर्ण वर्णनों, राजाओं की काम क्रीड़ाओं तथा काटुकारिता और अतिज्ञयोवितपूर्ण प्रशंसाओं से भरा पड़ा है।

ईसा की चौदहवीं शताब्दी के आते–आते देश में भवनों का शासन साम्राज्य स्थापित हो चुका था। हिन्दुओं पर घोर अत्याचार हो रहे थे। उनकी देवी देवताओं को अपमानित किया जा रहा था, मंदिर गिराये जा रहे थे, हर प्रकार से अपमानित

पक्ष दलित हिन्दु जनता घुल कर सकने में असमर्थ होकर चुपचाप देख रही थी। ऐसे समय में जनता को दीन–दुखियों के रक्षक और रावा और कंस जैसे दुष्टों के संहारक राम और कृष्ण की आवश्यकता थी। फलतः उस समय विज्ञान का साहित्य राम और कृष्ण के चरित्र गान से भर गया और जहां तहां विघन धेनु सुर संत हित, लीन अनुज अवतार '2 की बयां' होने लगी। आक्रमणकारी कथन यहीं के निवासी बनकर रहने लगे। चिरकाल तक साथ रहने से उनमें और हिन्दुओं में स्नेह की मात्रा बढ़ने लगी। परिणाम स्वस्थ राजा और प्रजा तभी विलापी हो गये। कविता, कंचन और कामिनी से तारा वातावरण, अनुप्राणित था। अतः साहित्य में घोर श्रृंगारिकता आ गयी। श्रृंगार अपने रस–राजत्व को खोकर वासनाओं को उद्दीप्त करने वाला सस्ता साधन बन गया। नारी आदर और श्रद्धा का पात्र न बनकर केवल भोग्या रह गयी। कवियों को उसके अंग्र प्रत्यंग में केवल विसासिता का रंग दिखाई देने लगा।

देश की दशा बदलती गयी। धीरे–धीरे पवनों को परास्त कर अंग्रेज यहां के अधिपति बन बैठे। टैक्स, अकाल और महामारी की विभीषिका से जनता त्राहि–त्राहि करने लगी। भारतेन्दुकाल के कवियों और लेखकों ने इस दशा का सजीय चित्रण करना प्रारम्भ किया। धीरे–धीरे भारतीयों की सुप्त राष्ट्रीय भावनायें जाग उठी। समस्त जनता विदेशी शासन से मुक्ति पाने के लिए छटपटाने लगी। राजा राम मोहन राय के विधवा विवाह आन्दोलन और गांधी जी के असहयोग आन्दोलन का प्रभाव अनेक साहित्यकारों की रचनाओं में दिखायी देने लगा।

दीर्घ संघर्ष के बाद भारत स्वतंत्र हुआ किन्तु पूँजीवादी शोषण व्यवस्था के कारण दीन दुखियों की संख्या बढ़ती गयी। आर्थिक विषमता के कारण धनी और निर्धन के बीच बढ़ते हुए अन्तर से प्रगतिवादी साहित्य का सृजन होने लगा। परिणामतः शिक्षा के प्रसार और विज्ञान के प्रभाव से देश में कुरीतियों के प्रति पूजा का खण्डन और राष्ट्रीयता की भावनायें साहित्य में पनपने लगी। वास्तव में हिन्दी कथा साहित्य में विशेषतः उपन्यासों एवं कहानियों को ही परिगणित किया गया है। शोध प्रबन्ध में शोध प्रविधि की सीमाओं को ध्यान में रखते हुए उपन्यास एवं कहानियों में ही नारी का अवलोकन आवश्यक है।

हिन्दी उपन्यासों में नारी– उपन्यासों की चर्चा में सर्वप्रथम उपन्यास सम्राट प्रेमचन्द्र का नाम आता है। सामाजिक यथार्थवाद के पोषक प्रेमचन्द्र ने अपने 'गोदान' उपन्यास में सैद्धान्तिक स्तर पर सामाजिक यथार्थवाद को सामने रखा। प्रेमचन्द्र के बाद हिन्दी कथा साहित्य ने करवट बदली। नवीन कला सिद्धान्तों के समावेश से स्वयं में सिमटा हुआ व्यक्ति समाज से दूर होता गया। जैनेन्द्र, इलाचन्द्र जोशी, अज्ञेय आदि नवीन विचार धारा के प्रतिनिधि उपन्यासकार है। नवीन उद्देश्य विधान तथा मनोविश्लेषण शासन के चमत्कार से इन लेखकों को लोकप्रियता तो मिली, परन्तु जीवन के बहुमुखी पक्षों के चित्रण के अभाव के कारण यह लोकप्रियता स्थायी न रह सकी। प्रेमचन्द्र के बाद और स्वतन्त्रता से पहले के दस ग्यारह वर्ष हिन्दी कथा साहित्य के इतिहास में मानसिक कुण्ठावाद और मनोवैज्ञानिक यथार्थवाद के नाम से जाने जायेंगे। इस अवधि के उपन्यासों ने प्रेमचन्द्र की स्वस्थ सामाजिक यथार्थवाद की परम्परा को भंग कर बहुत बड़ा अहित किया। यद्यपि शुद्ध कला की दृष्टि से जैनेन्द्र, अज्ञेय और जोशी ने उपन्यास सुन्दर और सफल हुए, लेकिन जिस प्रकार निर्जीव सौन्दर्य की कोई प्रभावशाली विशेषता नहीं होती वैसे ही इन कृतियों ने सामाजिक प्रकृति में कोई विशेष योगदान नहीं दिया।

स्वतन्त्रता के पश्चात् नयी चेतना ने पुराने तथा नये उपन्यासकारों को पुनः स्वस्थ दिशा प्रदान की। परिणामतः प्रेमचन्द्र के सामाजिक यथार्थवाद की लुप्त हुई परम्परा पुनः जागृत होकर आज भी साहित्य में मुखरित हो रही है। इस दशक में हिन्दी उपन्यास ने काफी प्रगति की। वृन्दावन लाल वर्मा, इलाचन्द जोशी, आचार्य चतुर सेन शास्त्री, भगवती प्रसाद बाजपेयी, भगवान चरण वर्मा, जैनेन्द्र, अज्ञेय, उपेन्द्र नाथ 'अश्क', यशपाल आदि ने अनेक सुन्दर और नवीन उपन्यास लिखे। वृन्दावन लाल वर्मा ने कथनार, मृगनयनी, झाँसी की रानी, माधव जी सिंधिया, तोगा आदि ऐतिहासिक उपन्यास लिखकर हिन्दी उपन्यास की समृद्धि प्रदान की। आचार्य चतुर सेन शास्त्री ने वैशाली की नगर वूथ, सोमनाथ, गोली, वर्धरधामः जैसे ऐतिहासिक और सामाजिक उपन्यास लिखकर अपने विषय के उपत्यापन सामर्थ्य का परिचय दिया। स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व भारतीय साहित्य में विशेषकर हिन्दी उपन्यास साहित्य में नारी का स्वस्थ परम्परागत नारी आदर्शों पर आधारित रहा। पूर्व प्रेमचन्द्र

युग तक नारी के व्यक्तित्व को कोई महत्वपूर्ण स्थायित्व नहीं मिल पाया। प्रेमचन्द्र के उपन्यासों ने उसे एक स्थिरता प्रदान की है। तत्कालीन विभिन्न परिस्थितियों से जूझती नारी अपने अस्तित्व के प्रति सजग हो रही है। सेवा सदन की सुमन, भवन की आख्या व योगदान की मालती में नारी शोषण के प्रति विद्रोह तथा स्वतंत्रता की आकांक्षा निरन्तर विद्यमान रही है। माता, बहन, बेटी, पत्नी और प्रेयती के सम्बन्धों के विविध आयाम तत्कालीन सामाजिक व राष्ट्रीय आन्दोल के परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत हुए। गरिमामयी नारी की प्रेरक शक्ति विशेष लक्ष्यसे अनुप्राणित थी। देश के स्वातन्त्रय एवं विभाजन के परिणामस्वरूप तत्कालीन नारियों की समस्या कठिन थी। समाज के परम्परागत मानदण्डों ने स्त्रियों के अस्तित्व पर प्रश्न चिन्ह लगा दिए। विभाजन के दौरान पुरूष की वीभत्स, पाशविकता की शिकार सर्वाधिक नारी हुई थी। यशपाल का 'झूठा–सच', 'उखड़े हुए लोग' व अमृता प्रीतम की कृतियों में विभाजन के इस दर्द के बीच नारी शोषण एवं उसकी छटपटाहट को देखा जा सकता है।

स्वतन्त्र भारत के संविधान में स्त्रियों को पुरूषों के बराबर वैधानिक अधिकार अवश्य दिए गये किन्तु सामाजिक स्तर पर रूढ़ियों और परम्पराओं में जकड़ी नारी को एक स्वतंत्र स्वरूप प्रदान करने की प्रक्रिया में वह गति नहीं आ सकी जो अपेक्षित थी। बदलती हुई परिस्थितियों ने नारी–जीवन को भी प्रभावित किया। शिक्षा के निरन्तर प्रचार और प्रसार से राष्ट्रीय आन्दोलन की सहयोगिनी और सहचरी बनकर नारी घर की चहारदीवारी से बाहर तो आ गई थी, परन्तु वह अपनी अत्मिता को स्थापित करने में लगी हुई थी। इलाचन्द्र जोशी के उपन्यास, 'जहाज का पंछी' की लीला अभ्यागत महिला का परिचय नायक से कराते हुए कहती है, 'जब से वो विधवा हुई तब से विविध सामाजिक क्षेत्रों में बड़े–बड़े महत्वपूर्ण कार्यों का संचालन और संगठन करती आ रही है और पीड़ित एवं शोषित नारियों की सध्वी उन्नति और प्रगति को ध्यान में रखकर ठोस कार्य कर रही है। 1. इसके विपरीत 'उखड़े हुए लोग' की जया शरद से कहती है– 'स्त्री घर की रानी है– उसकी दुनियां चहारदीवारी के भीतर है।' 2. यद्यपि हिन्दी उपन्यासों में नारी के विविध आयाम प्रस्तुत हुए है, तथापि स्वावलम्बन की दिशा में आर्थिक स्वतन्त्रता नारी को पूरी तरह

नहीं मिल सकी है। यद्यपि 'बूँद औ समुद्र' 'सूरज का सातवां घोड़ा', 'झूठा–सच' आदि उपन्यासों में नारी स्वतन्त्रता एवं आत्मनिर्भरता प्रगति का परिचायक है फिर भी इसका प्रतिशत बहुत कम है। पाश्चात्य प्रभाव एवं बदलती एवं आरोत्पतियों ने भी नारी को स्वाधीन होने की दिशा में प्रेरित किया। हमारे सामाजिक दृष्टिकोण का विरोधाभास नारी स्वातन्त्रय की विचारधारा में भी है। भारतीय पुरूष का अहं अभी तक स्त्री को समाज में पुरूष की सम्पत्ति समझता है इसीलिए व्यक्ति का मानवीय दर्जा नहीं दे पाया है। वैचारिक स्तर पर यही भेट अनजाने ही पुरूष को नारी के प्रति असहनशील और आक्रामक बनाये रखता हैं। मोहन राकेश का 'अंधेरे बन्द कमरे' भीष्म साहनी की 'रूढ़ियां' उपन्यास रजनी पनिकर का 'महानगर की मीना', डॉ0 नीलिमा सिंह का 'स्वीकार से मुझे', 'सत्य का शेषांश' आदि उपन्यास पारिवारिक विघटन के विभिन्न पक्षों को उभारते हैं। स्त्री के आर्थिक शोषण की ओर उपन्यासकारों का ध्यान कम केन्द्रित हुआ है। पिता की सम्पत्ति में संविधान द्वारा बराबर का अधिकार पाकर भी वह छोड़ रही है, क्योंकि उसके विचार में उसके विवाह पर काफी खर्च कर दिया जाता है जो उसके हिस्से के बराबर या अधिक है। ऐसे अनेक पक्ष है जिनका अंकन साहित्य के माध्यम से समाज तक पहुंचना चाहिए। तब कदाचित समाज नारी का शोषण कम हो और नारी स्वातन्त्रय की दिशायें सार्थक हो सकें।

मार्कण्डेय का तीसरा आदमी, निर्मल शर्मा का वे दिन, मोहन राकेश का उपन्यास 'अमृतराल' आदि कृतियों में नारी की विषमता का चित्रण प्रभावशाली ढंग से किया गया है। उसकी वैयक्तिक स्वतन्त्रता के परिप्रेक्ष्य में सामाजिक तथा पारिवारिक दबाव का मनोवैज्ञानिक चित्रण इन उपन्यासों में मिलता है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् भारतीय नारी के प्रगतिशील कदमों को श्रीमती इन्दिरा गांधी के नेतृत्व में कुछ अधिक गति मिली। पाश्चात्य देशों में जन्मा नारी मुक्ति आन्दोलन वैचारिक स्तर पर भारत के उच्च वर्ग की शिक्षित महिलाओं के बुद्धि विकास एवं ड्राईगरम चर्चा का विषय अधिक रहा। भारतीय समाज में इसे एक आन्दोलन के रूप में नहीं अपनाया गया।

पूर्व प्रेमचन्द्र युग से लेकर आज तक नारी की प्रासंगिकता के सन्दर्भ में वेश्यावृत्ति समस्या मानवीय संवेदना एवं विचार का केन्द्र रही है। चाणक्य ने कोटिल्य अर्थशास्त्र में इसे व्यावसायिक मान्यता दी है। नारी शोषण के इन पक्ष जो अमृत लाल नागर का उपन्यास 'सुहाग के नुपुर', 'दुर्गाप्रसाद शुक्ल' 'जोगनी', राविन्द्रा 'पुरूष' का 'दुल्हन बाजार' आदि ऐसे अनेक उपन्यास है, जो स्त्रियों के इस शारीरिक एवं सामाजिक शोषण को उसकी सही परिस्थितियों के साथ प्रस्तुत करते हैं। बदलती हुई परिस्थितियों में नारी स्वतन्त्रता की आकांक्षा एक सहज, स्वाभाविक प्रक्रिया है साहित्य में नारी साथ पुरूष एक सहयोगी, मित्र, शुभचिन्तक के रूप में प्रस्तुत हो, सभी समाज को एक नयी दिशा प्रदान करने का श्रेय साहित्य को प्राप्त हो सकेगा।

मानव जीवन परम्परा को अक्षुण्य बनाये रखने में नारी भी नर के बराबर की भागीदार है। किन्तु पुरूष प्रधान व्यवस्था के कारण जहाँ पुरूष जीवन व्यापार में अग्रणी बना हुआ है, वहाँ नारी पृष्ठभूमि में रहकर सहायक की भूमिका का निर्वाह करती हुई गौण दिखलायी पड़ती है। जयशंकर प्रसाद ने नारी की मनोदशा को समक्ष कर ही अवयव की सुन्दर कोमलता लेकर सबसे हारने वाली और दुर्बलता से जकड़ी हुई को नारी माना है। शायद इसीलिए स्त्री पुरूष पर निर्भर है। इसीलिए उसके स्वतन्त्र अस्तित्व को नकार कर प्रायः उसे पीड़ित और प्रताड़ित किया जाता रहा है। साहित्य तो समाज के मनोभावों को प्रतिबिम्बत करता है।

उपन्यास हो या कहानी/कथा विकास यात्रा का प्रारम्भ नारी के क्षीण सूत्र को पकड़कर ही चला था, किन्तु उसके उत्तरोत्तर विकास में अनमेल विवाह, बाल विवाह, बहु विवाह, दहेज, वैश्या समस्या, यौन शुचिता की समस्या, आर्थिक समस्या, विधवाओं की समस्या, प्रेम की समस्या, घर बाहर की समस्या, व्यक्तित्व एवं हअहर की समस्या इत्यादि बिन्दुओं को सफलता पूर्वक पकड़ा गया है। यद्यपि जैनेन्द्र के नारी चरित्रों में आत्म संघर्ष और शोषण के विरुद्ध विद्रोह आदि का प्रभावकारी चित्रण किया गया है। फिर भी जैनेन्द्र की नारी एक ओर परम्परा से बंधी है तो वह दूसरी ओर परम्परा तोड़ना भी चाहती है। जैनेन्द्र की नारियां राधा तथा मीरा का आधुनिक संस्करण की जा सकती है।

अज्ञेय की नारियों आत्म बलहीन होते हुए भी प्रेम और विवाह को अलग–अलग मान्यतायें देती हुई चलती है।

नागर जी ने हिन्दी उपन्यासों में नारी हृदय में उठने वाली उत्पीड़ाओं और विवशताओं को मानवीय दृष्टि से उभारा है। नारी शोषण के विभिन्न बिन्दु एवं दृष्टिकोण उनके विभिन्न उपन्यासों में उभरे है। नागर जी स्त्रियों के दुःखों का प्रधान कारण आर्थिक पराधीनता मानते हैं। उनकी नारियां स्पष्ट रूप से कहती है, 'हिन्दुस्तान का हर घर औरतों के लिए कसाई खाना है।' इस शोषण को मात्र सहानुभूति के स्तर पर न जीकर अपने स्वतन्त्र अस्तित्व के लिए वे संघर्ष करती है, उनका स्पष्ट उद्घोष है– 'दूरकर नारी ये मोह, घूंघट क पट खोला'।

धर्मवीर भारती का 'गुनाहों का देवता' आधुनिक युवायनः स्थिति की संक्रान्ति के आकुल अटूट चित्रों की श्रृंखला है। इस उपन्यास की सभी नारियाँ किसी न किसी रूप में प्रताड़ित है और इसका मुख्य कारण स्वाभावगत कोमलता है। मेरी तेरी उसकी बात। यशपाल का उपन्यास धर्म, जाति, परम्परा, पति, नैतिकता और विवशता से संघर्ष करती हुई जूझती और सबको मोड़ती नारी के इसी रूप का उपन्यास है।

नागार्जुन ने अपने उपन्यासों में ग्रामीण अंचलों में जीने वाली विधवाओं के शोषण की गाथा को शब्द दिया है।

कमलेश्वर के 'डाक बंगला' में इराक की ऐसी युवती के शोषण की कथा है, जिसने अपने पवित्र में अनेक उतार–चढ़ाव देखे हैं। अच्छे और बुरे से होकर गुजरी और हर जगह हारती जीतती हुई आगे बड़ी नारी के जीवन के सन्दर्भ में शोषण और कष्ट दायक अनुभूतियों से ओतप्रोत 'डाक–बंगला' एक उपलब्धि है। नारी जीवन के असहाय और दयनीय परिस्थितियों तथा सांकेतिक पद्धति से सुरक्षा की कामना का आर्थिक पक्ष 'डाक बंगला' में स्पष्ट हुआ है।

राम दरई मिश्र का 'रात का सफर' उनसारी लड़कियों के शोषण की कहानी है जिन्हें विवाह के पश्चात् एक लम्बी अंधेरी रात अजगर की तरह अपने गंजलक में

लपेट देती है और तब वो टूट–टूट कर पल–पल रीत कर भी जीने के लिए अभिशप्त होती है।

राजेन्द्र अवस्थी की 'जाने कितनी आंखे' की 'सुवेगा' और 'बतिया' दोनों ही समातन भारतीय नारी की छट–पटाहट से युक्त है। समाज की लक्ष्मण रेखा से घिरी ये नारियाँ अपनी–अपनी तड़प से घुट रही है।

लक्ष्मी कान्त वर्मा की 'टेराकोटा' की 'मिति' की सारी लड़ाई परम्परागत मूल्य और मुक्त वातावरण की लड़ाई से। उसका संघर्ष कई स्तर पर है। वह घर–परिवार की दरिद्रता से लड़ रही है, नारीत्व की तीव्र मांग से लड़ रही है, अपना स्वतन्त्र अस्तित्व बनाए रखने के मार्ग में आने वाली बाधाओं से लड़ रही है, नौकरी की कठिनाईयों से लड़ रही है और अपने को समझने के प्रयास में रोहित से लड़ रही है। वह सधे अन्दाज में वैयक्तिक और सामाजिक स्थितियों से जूझने वाली नारी है।

मोहन राकेश के 'अंधेरे बन्द कमरे' की नीलिमा के जवीन के कमरे में अंधेरा इतना अधिक हो गया है कि वह चाह कर भी मुक्त नहीं हो पाती है। धीरे–धीरे रिसता सम्पन्न वैवाहिक जीवन के विश्वास सेतु को भीतर ही भीतर धरमरा देता है। ये नारी के भावनात्मक शोषण का जीता–जागता उदाहरण है।

शैलेश मटियानी की 'सर्पगन्धा' की नाविका अपने पुराने संस्कारों को छोड़कर नये संस्कारों से नाता नहीं जोड़ पाती है। और मानसिक तनाव का शिकार रहती है। नारी के सामाजिक एवं मानसिक शोषण का चित्रण इस उपन्यास में हुआ है।

रवीन्द्र शलिया के 'खुदा सही सलामत है' में नारी पुरूषों के दमन तथा अविश्वास की धारा के बीच जी रही है। पुरानी पुस्तक में नारी शोषण का एवं उसकी विवशता का सजीव चित्रण हुआ है।

राजेन्द्र यादव के 'उखड़े हुए लोग' और 'कुलटा' जैसी हमलावर रचनाएं स्त्री जीवन के केन्द्र में कुछ नई समस्याओं का उद्घाटन करती है। अनदेखे अनजाने पुल में नारी के आत्म संघर्ष को मानवीय गहराई में देखा गया है। 'उत्तरकथा' में नरेश मेहता ने हिन्दु समाज में सवर्ण जाति की लड़कियों की शादी की समस्या पर

प्रकाश डाला है। राजेन्द्र यादव के उपन्यास में यह पाया गया है कि नारी का शोषण नारी धर्म से ही अधिक होता है।

अछूता प्रीतम की नारी मन की कामना और समाज के समक्ष, उसकी विवशता का सुन्दर चित्र अपने उपन्यासों में प्रस्तुत करती है। नारी को अपनी अस्मिता की पहचान का मोह उसे समाज के लोहे के हाथ से लहु–लुहान होकर चुकाना पड़ता है। अमृता जी ने अपनी नारी के माध्यम से कौख से कब्र तक के इसी संघर्ष को दिखाया है।

'शिवानी' की नारी उच्च कुलीनता के पद पर ही अधिकांशतः आसीन है, किन्तु उनके हृदय की व्यथा, अपनी पूर्ण स्वाभाविकता के साथ उजागर हुई है। नारी–जीवन के विविध सतर उनके उपन्यासों में खुले है। 'चौदह फेरे' की अहल्या का चरित्र एक पढ़ी–लिखी आधुनिक तरूणी की अधूरी मानसिकता का चरित्र है। उनके उपन्यासों में सामाजिक विषमता, पति–पत्नी के सम्बन्धों और प्रेम के विविध पक्षों का उद्‌घाटन प्रायः हर रचना में हुआ है। नारी–जीवन की परिवर्तित मनः–स्थितियों की ओर उनकी दमित इच्छाओं को खुले रूप में बड़े साहस के साथ, किन्तु एक विशिष्ट सौजन्य से परिपूर्ण शैली में अभिव्यक्त किया गया है।

कहानी में नारी– उपन्यास के पश्चात् 'कहानी' विधा अपने आप में पूर्ण एवं समर्थ अभिव्यक्ति मानी गयी है। उपन्यासों की लम्बी कथा परम्परा कहानी के संक्षिप्त कलेवर में सिमटकर पाठक के अधिक समीप आ गयी है। कहानियों में परिवार, समाज, संस्कृति आदि के यथार्थ चित्रण होने के कारण ही नारी कहानियों से अलग नहीं रह सकी और भारत के पुरूष समाज में यथार्थतः सर्वाधिक शोषण का शिकार नारी ही बनी है।

हिन्दी साहित्य में नारी चित्रण यद्यपि विविध रूपों में किया गया है तथापि हिन्दी कहानियों में नारी शोषण की अभिव्यक्ति पर शोध की दृष्टि से विचार नहीं किया गया। यथार्थतः हिन्दी का उत्तरोत्तर कहानियों में नारी शोषण के विभिन्न पक्षों को अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया गया है। यथार्थ चित्रण की जो परम्परा प्रेमचन्द्र ने डाली है, वह इस सीमा तक स्वतन्त्र अभिव्यक्ति का आधार बनी है कि

हिन्दी के कहानीकार परिवार और समाज में होने वाले नारियों के शोषण को चित्रित करने का लोभ संवरण नहीं कर सके। परिणामतः भगवती चरण वर्मा, भगवती प्रसाद बाजपेयी, जैनेन्द्र कुमार, यशपाल, रागेय राघव, फणीश्वर नाथ 'रेणु' निर्मल वर्मा, राजेन्द्र यादव, मोहन राकेश, कमलेश्वर, शिवानी, शशि प्रभा शास्त्री, उषा प्रियर्वदा, कमलेश बख्श, श्री लाल शुक्ल आदि कहानीकारों की कहानियों में नारियों के आर्थिक, सामाजिक, पारिवारिक, भावनात्मक, मानसिक, व्यवसायिक तथा चारित्रिक शोषण की अभिव्यक्ति से मिलती है। इस दृष्टि से 'हिन्दी कहानियों में नारी शोषण की अभिव्यक्ति' अपने आप में नया व अछूता विषय है।

भारतेन्दु से पहले की हिन्दी कहानियों में ईशा उल्ला खां की 'रानी केतकी की कहानी' की विशेष चर्चा की जाती है। विद्वानों ने इसे हिन्दी की प्रथम कहानी माना है। परन्तु कहानी कला की दृष्टि से इसे आधुनिक कहानी नहीं कहा जा सकता। भारतेन्दु युग में भी उत्कृष्ट कहानी नहीं मिलती। द्विवेदी युग में किशोरी लाल गोस्वामी की 'द्वन्द्वमती', यंग महिला की 'तुलाई वाली' और रामचन्द्र शुक्ल की 'ग्यारह वर्ष का समय' कहानियों को हिन्दी की प्रथम आधुनिक कहानी का श्रेय दिया जाता है। इनमें 'द्वन्द्वमती' सबसे पुरानी है। अतः इन्द्रमती से ही मौलिक कहानी का जन्म माना जा सकता है। हिन्दी कहानी के इस प्रारम्भिक युग में लिखी गयी कहानियों में जासूसी के करिश्मों और असमय काल्पनिक घटनाओं का समावेश अधिक था। किशोरी लाल गोस्वामी, रामचन्द्र शुक्ल, यंग महिला, महावीर प्रसाद द्विवेदी, गोपाल दास गहगरी इस युग में कहानीकार है।

द्विवेदी युग के उत्तरार्द्ध में प्रसाद और प्रेमचन्द्र के आगमन के साथ हिन्दी कहानी के क्षेत्र में युगान्तर उपस्थित हुआ। प्रसाद ने भी, भाषा, कल्पना का पूर्ण उत्कर्ष दिखाते हुए कोतूहल प्रधान कहानियां लिखी, जिनमें मानव मन के अन्तर्द्वन्द्व का सजीव चित्रण हुआ। 'आकाशद्वीप', 'पुरस्कार', 'भधुआ' आदि उनकी प्रसिद्ध कहानियां है। प्रेमचन्द्र व्यावहारिक भाषा शैली में यथार्थ जीवन का मार्मिक चित्रण करने वाली आदर्शोन्मुख कहानियों की रचना की।

'शतरंज के खिलाड़ी', 'कफन', 'पंच परमेश्वर', 'पूत की रात', 'मन्त्र' आदि प्रेमचन्द्र की बहुचर्चित कहानियां है। इसी काल में चन्द्र धर शर्मा गुलेरी की 'उसने

कहा था 'कहानी को सर्वश्रेष्ठ कहानियों में गिनी जाती है। राधिका रमण सिंह, जी0पी0 श्रीवास्तव, विशम्भर नाथ शर्मा, 'कौशिक', आचार्य चतुर सैन, सुदर्शन आदि इस युग के अन्य उल्लेखनीय कहानीकार है।

सन् उन्नीस सौ पैतीस के आस–पास हिन्दी कहानी एक नयी दिशा की ओर मुड़ी। सामाजिक चेतना और यथार्थ जीवन को व्यक्त करने वाली कहानियों का भी गणेश हुआ। इस काल में सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, राजनीतिक और ऐतिहासिक कहानियां लिखी गई। इन कहानियों में विभिन्न शैलियां भी देखने में आयी जैसे नाटकीय शैली, डायरी शैली, स्वप्न शैली, प्रतीक शैली आदि।

इस युग में प्रमुख कहानीकार जैनेन्द्र कुमार, सियाराम शरण गुप्त, अज्ञेय, इलाचन्द्र जोशी, यशपाल, भगवती चरण वर्मा, उपेन्द्र नाथ 'अश्क', रागेय राघव, विष्णु प्रभाकर आदि थे।

स्वतन्त्रता के पश्चात् हिन्दी कहानी के विकास क्रम में नयी कहानी का आगमन एक युगान्तरकारी घटना है। इस युग की कहानी में भावबोध और सौन्दर्य बोध के नये द्वार खुले हैं। आज के युग की कुण्ठा, उल्झन, दिशाहीनता, मानसिक भटकाव का सूक्ष्म और सजीव चित्रण नयी शैली शिल्प में प्रस्तुत किया जा रहा है। आधुनिक जीवन का भोगा हुआ यथार्थ आधुनिक भाव बोध के धरातल पर व्यक्त करना ही नयी कहानी का उद्देश्य है। फणीश्वर नाथ 'रेणु', अमरकान्त, धर्मवीर भारती, शैलेश मटियानी, शिवानी, मोहन राकेश, कमलेश्वर, राजेन्द्र यादव, मन्नू भण्डारी, निर्मल वर्मा, भीष्म साहनी आदि इसी श्रृंखला के कहानीकार है।

भारत एक विशाल क्षेत्रफल वाला विविध भाषा भाषी देश है। यहाँ के साहित्य में तथा उसकी हर विधा में नारी का स्वरूप अंकित तो अवश्य है, परन्तु सभी भाषाओं का ज्ञान न होने से हर भाषा के साहित्य का अध्ययन कर पाना असम्भव हो जाता है। हिन्दी साहित्य की विविध विधाओं में भी इतना लिखा गया है कि सभी को हृदयगम करना कठिन है। यद्यपि मेरा विषय वहां हिन्दी कहानियों से सम्बन्धित है, फिर भी अन्य विधाओं में व्याप्त नारी जीवन और विविध परिस्थितियों के निरूपण की अवहेलना करना भी असम्भव है। अतः भूमिका में मैं नारी की समस्त हिन्दी

साहित्यक विधाओं में व्याप्त सामाजिक, पारिवारिक, आर्थिक, व्यावसायिक आदि क्षेत्रों के सामाजिक रूप को स्पर्श करने का प्रयास कर रही हूँ।

साहित्य मानवीय सामाजिक व्यवहार का एक विशिष्ट रूप है इसे न तो जीवन से अलग किया जा सकता है और न ही समाज से इसमें मनुष्य की सृजन शीलता का उसके व्यवहार सामाजिक, बौद्धिक और मानसिक चित्रण व्यक्त होता है। साहित्य को समाज के साथ अनिवार्य सम्बन्ध रखने पड़ते हैं। सामाजिक परिवर्तन में भी साहित्य की भूमिका प्रमुख होती है। प्राचीन भारतीय साहित्य अधिकांशतः चरित्र प्रधान रहा, उसमें नारी मन की गुत्थियों का स्पष्ट चित्रण, नारी चरित्र की विशेषताओं का दिग्दर्शन, स्त्रियों का व्यापक चरित्रांकन, विविध भावनाओं का अद्‌भुत समन्वय प्रभाव पूर्ण ढंग से किया गया। इन चरित्र प्रधान कथानकों के बाद आधुनिक युग के रचनाकारों में प्रेमचन्द्र की समस्या प्रधान कहानियों का जन्मदाता माना गया। नारियों के भौतिक और मानसिक संघर्ष को प्रेमचन्द्र ने कहीं भी भारतीय जीवन पद्धति से अलग नहीं किया है। प्रेमचन्द्र के साहित्य में समस्त सामाजिक, पारिवारिक और व्यक्तिगत क्रियाकलापों के केन्द्र रूप में नारी का स्थान सुरक्षित है। साहित्य ने नारी की महत्वपूर्ण भूमिका को सदैव स्वीकार किया है और उसके व्यक्तिगत अधिकारों की भी रक्षा की है, लेकिन भारतीय नारी न तो कभी अधिकारों के लिए पुरूष के विरुद्ध खड़ी हुई और न ही प्रतिद्वन्द्विता के क्षेत्र में आगे बढ़ी। उसने अपने धर्म, जाति, समुदाय या अपनी अस्थिता की रक्षा के लिए सामूहिक लड़ाइयाँ तो लड़ी परन्तु ये लड़ाइयाँ केवल न्याय के लिए लड़ी गयी, अधिकार के लिए बिल्कुल नहीं।

आज युगबोध बदल गया है। आज का भारतीय समाज अपनी सांस्कृतिक परम्पराओं और विरासत से जुड़ा होने पर भी पाश्चात्य संस्कृति की ओर उन्मुख है। इसीलिए मिश्रित संस्कृति के परिणाम स्वरूप सभ्यता और संस्कृति की दौड़ आगे पीछे हो गई है, तथा लड़खड़ाने लगी है। हमारी सामाजिक परिस्थितियाँ, जीवन पद्धतियाँ और शैलियाँ बदल गयी है। नारी के स्वतन्त्र अस्तित्व की मान्यता और उसके खोये सम्मान की पुनः स्थापना का कार्य स्वयं स्त्री–लेखिकायें भी नहीं कर पा रही। शोषण और सन्यास की उवाउ जिन्दगी से नारी को मुक्त कराने के लिए

स्वस्थ एवं सामान्जस्यपूर्ण साहित्य की आवश्यकता है। इस नयी पहचान की दिशा में स्वस्थ कथानकों का सृजन सहायक होगा, परन्तु आधुनिक साहित्य में तो परम्परागत घुटन, प्राचीन और आधुनिकता के संघर्ष, तनाव, स्त्री पुरूष द्वन्द्व और पारिवारिक विघटन से उद्वयन्त व्यक्तिगत पीड़ा एवं टूटन को ही अधिकतर अभिव्यक्त किया गया है।

जहाँ तक नारी की स्थितियों और प्रवृत्तियों के तटस्थ घटक वैज्ञानिक विश्लेषण व उसकी प्रस्तुति का प्रश्न है, हमारा साहित्य, विशेष रूप से स्त्री–रचित साहित्य बहुत पीछे है। समाज शास्त्रीय दृष्टि भारतीय संदर्भ में हमारे यहाँ विकसित ही नहीं की गई। इस दृष्टि से भारतीय नारी की एक समूह पहचान बनती ही नहीं। विविधताओं के इस देश में नारी को एक समूह कवि दी ही नहीं जा सकती। फिर भी राष्ट्रीय अवधारणा में ऐसी एक सांस्कृतिक छवि सम्भव है, इसे उभारने का अपेक्षित कार्य साहित्य को ही करना होगा। अपनी सांस्कृतिक विरासत को संभालने पर ही ऐसे मूल्य मिलेंगे, जो नये युग के अनुरूप नये भी हो सकते हैं और शाश्वत भी। शाश्वत मूल्यों के धरातल पर खड़े होकर ही नयी नारी की छवि उकेरी जा सकती है। अपनी परिवेशगत स्थितियों से स्वयं ही जुड़ती अपनी राह आप बनाती हुई, न कि एक पुरूष के सहारे से मुक्त होकर दूसरे पुरूष के कन्धे का सहारा तलाशती।

स्वातन्त्रयोत्तर कहानियों में आधुनिक युग के सामाजिक, पारिवारिक एवं नैतिक परिवर्तन के परिणामस्वरूप नारी के बदलते दृष्टिकोण, मूल्यों, आकांक्षाओं और पारस्परिक सम्बन्धों के अनेक चित्र अंकित किये गये हैं। स्वातन्त्रयोत्तर रचनाकारों ने एक और प्रेम विवाह के नये यथार्थ जाहं पति–पत्नी दूध पानी की तरह नहीं, पानी और दाल की तरह मिलते हैं, का मार्मिक चित्रण किया है। एक और स्त्री–पुरूष के बदलते सम्बन्धों से उत्पन्न प्रेम–विवाह की दास्तान का कहानियों में समावेश किया गया है। दूसरी ओर नारी मन की आन्तरिक त्रासदी की सूक्ष्म पहचान भी अंकित की गयी है। सच तो यह है कि युगीन परिस्थितियों के दबाव तथा आधुनिकता की पिनक में पुराने जीवन–मूल्यों को कन्धों से उतार फैका गया है, परन्तु उसकी जगह नये मूल्यों की स्थापना का प्रश्न अभी अनुत्तरित है।

द्वितीय अध्याय

हिन्दी कहानियों में नारी शोषण

जो जितना परतन्त्र होता है, उसे स्वतन्त्रता की उतनी ही ललक होती है। स्वतन्त्रता से पहले भारत पर कभी अंग्रेजों का शासन रहा कभी मुगुल बादशाहों का हुकूमत। कभी देशी राजा और रजबाड़ों ने भारत की धरती पर नारियों को लूटी हुई वस्तु की तरह देखा। परिणामतः जननी जन्म भूमि का आदर्श पराजय की यथार्थ स्थिति पर अतीत का गौरव बनकर रह गया।

अरब और फारस की मुस्लिम संस्कृति में महिलाओं को प्रमुखता न मिलने के कारण ही आक्रमण काल या मुगल काल में नारी का सम्मान धीरे–धीरे समाप्त होने लगा। बारहवीं शताब्दी तक किसी से पर्दा न करने वाली नारी घर की चहारदीवारी में पर्दे के भीतर सीमित होकर रह गयी। समाज में उसका स्थान निम्नतम होकर रह गया। राजमहलों में वह केवल भोग–विलास की वस्तु मानी जाने लगी। नारी अध्यात्म एवं वैराग्य में सर्वधा त्याज्य मानी गयी। सन्त कबीर ने तो 'नारी बड़ा विकार' कह कर देखने से भी परहेज किया है– 'नारी तो हम मालवी नारी बड़ा विकार' कबीर की दृष्टि में नारी की छाया में भी कायान्थ करने की शक्ति है। नारी तो फिर सम्पूर्ण नारी है।

'नारी की छाया परा, अन्धा होत भुजंग।

उस नर की क्या गति जो मिल नारी के संग।।

तुलसीदास ने सीता जैसी आदर्श नारी का चित्रण करके भी नारी को शूद्र, गंवार तथा ढोल के साथ ताड़ना हेतु परिगणित कर दिया है।

रीति कालीन कवियों की दृष्टि नारी के शारीरिक सौन्दर्य पर टिक कर नव शिख वर्णन तक ही सीमित रही। वह भोग्या के अतिरिक्त और कुछ नहीं रही, लेकिन प्रसाद जी ने उसे, 'नारी तुम केवल अद्रा हो, विश्वास रजत–मग–पगतल में कहते हुए श्रद्धा के रुप में देखा और राष्ट्र कवि मैथलीशरण गुप्त ने नारी को अवला मानते हुए भी उसे मातृत्व शक्ति से सम्मानित किया है–

अवला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी।

आँचल में है टूथ और आँखों में पानी।।

सुभद्रा कुमारी चौहान ने नारी वीरांगना का रूप देखा, **'खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसी वाली रानी थी।'**

स्वतन्त्रता आन्दोलन में अंग्रेजी शासन ने विरोध में भारत ने आधुनिक काल में प्रवेश कर व्यापक दृष्टिकोण प्राप्त किया। सामाजिक और राष्ट्रीय चेतना के प्रकाश में समग्र राष्ट्र की दृष्टि युगों की अभिवाप्त नारी की ओर गई। बंगाल में राजाराम मोहन राय ने नारी को अभिशाप मुक्त करने का बिसुल बजाया तथा महर्षि दयानन्द ने उसे पुरूष के समान अधिकारिणी घोषित कर अनाधार के कारागार से मुक्त कराया। पंत जी ने कहा, 'उसे पूर्ण स्वाधीन करो, यह रहे न नर पर अवसित'।

मुक्त उसमें नारी को मानव चिरवन्दिनी नारी को।'

आधुनिक भारत में यद्यपि भारतीय नारी ने गौरव और शालीनता की प्रतिष्ठा रखते हुए श्रद्धा प्राप्त की, फिर भी वह आज पश्चिम के अन्धानुकरण से भारतीय नारी के आदर्शों को तितांजलि देती हुई आर्थिक स्वतन्त्रता प्राप्त कर भोग की ओर बढ़ रही है। आधुनिक होने के मोह में यह माँ, सहचरी, देवी आदि की गरिमा को नष्ट करती हुई नारी–सुलभ दवा, कोमलता, स्नेह, विश्वास, क्षमा आदि से वंचित हो गयी है और अब पतन की ओर उन्मुख हो रही है। इसीलिए पंत जी ने लिखा है–

'तुम सब कुछ हो फूल, लहर, विहगी, तितली, माजांरी,

आधुनिके। कुछ नहीं अगर हो तो केवल तुम नारी।'[53]

वैदिक काल से आज तक की भारतीय नारी के उज्जवल चरित्र, महिमा मण्डित रूप और उदारत आदर्शों से अभिभूत होकर ही कहा जाता है– 'यदि स्वर्ग वहीं है धरती पर, तो नारी उर के भीतर।'

[53] सुमित्रा नन्दन पन्त–

प्रेमचन्द्र पूर्व की कहानियों में नारी शोषण

कहानी का क्रम बद्ध विकास भारतेन्दु युग (1868 से 1703 ई0) से होता है। इस युग में बंगला तथा अंग्रेजी से अनुवाद हुए। मौलिक रूप से लिखी गई कहानियों में इनका प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। भारतेन्दु जी ने 'एक अद्‌भुत अपूर्व स्वप्न' नामक कहानी लिखी जिसे बहुत से विद्वान हिन्दी की प्रथम साहित्यिक तथा मौलिक कहानी मानते हैं।

इसके साथ ही पं. गौरी शंकर की 'देवरानी जिठानी' और 'कहानी टकाकमानी', मुंशी शादी लाल का 'किस्सा शाह रूप', गोपाल राम गहमरी की 'चतुर चंचला', मुंशी देवी प्रसाद की 'इन्साफ संग्रह' आदि कहानियाँ मौलिक अवश्य है, किन्तु या तो इनमें कथानक पूर्णरूप से विकसित नहीं हो सका है, या मौलिक परम्परा के अत्यधिक निकट होने के कारण मात्र उपदेशात्मकता और मनोरंजन के ही तत्व मिलते हैं। इन प्राप्त कहानियों में नारी शोषण की अभिव्यक्ति नगण्य है। फिर भी कहानी की विकास परम्परा में इन कहानियों को छोड़ा नहीं जा सकता।

सरस्वती पत्रिका के प्रकाशन के साथ–साथ हिन्दी की श्रेष्ठ कहानियाँ प्रकाश में आयी। सरस्वती के प्रारम्भिक कहानी लेखकों में किशोरी लाल गोस्वामी, पार्वती नन्दन, यंग महिला, रामचन्द्र आदि प्रमुख है। इनकी कहानियों में कुछ तो मौलिक है और कुछ अनुदित।

पहली हिन्दी कहानी किशोरी लाल गोस्वामी की 'इन्द्वमती' है, इसी लेखक की 'प्रणयिनी परिणय' या इसी काल की कोई और कहानी भी हो सकती है। 'उसने कहा था' से पहले यंग महिला की 'टुलाहंवासी', वृन्दावन लाल वर्मा की 'रासी वन्थ भाई', जय शंकर प्रसाद की 'ग्राम', राजा राधिका रमण प्रसाद सिंह की कानों में कंगना, विश्वम्भर नाथ शर्मा कौशिक की 'रक्षाबन्धन' आदि अनेक कहानियाँ प्रकाशित हो चुकी थी, किन्तु ये तमाम आरम्भिक कहानियाँ इतिहास की वस्तु धन पर रह गई।

'उसने कहा था' हिन्दी जगत की स्फूर्ति में आज भी अमर है। उसके लेखक गुलेरी जी ने यद्यपि 'युद्ध का कांटा' तथा सुखमय जीवन के बीच कहानियाँ भी

लिखी लेकिन हिन्दी साहित्य में उन्हें अमर बनाने का श्रेय 'उसने कहा था' को ही है। सैंतीस वर्ष की अल्पायु में गुलेरी जी का देहावसान हो गया, इसलिए 'उसने कहा था' को हिन्दी कहानी के इतिहास में एक सुखद संयोग के सिवा और क्या कहा जा सकता है।[54] 'उसने कहा था' कहानी की विषय वस्तु नितांत अप्रत्याशित न होकर उस युग के अनुरूप प्रेम में बलिदान के आदर्श को स्थापित करती है। इस आदर्शवाद के साथ कहानी में संयम और यथार्थ का कुशल चित्रण हुआ है। युग समीक्षक रामचन्द्र शुक्ल ने भी लिखा है, 'इसमें पक्के यथार्थवाद के बीच, सुरूचि की परम मर्यादा के भीतर भावुकता का परमउत्कर्ष अत्यन्त निपुणता के साथ सम्पुष्टित है। घटना इसकी ऐसी है जैसे बराबर हुआ करती है पर उसके भीतर से प्रेम का एक स्वर्गीय रूप झाँक रहा है– केवल झाँक रहा है, निर्लज्जता के साथ पुकार या कराह नहीं रहा। कहानी भर में कहीं प्रेम की निर्लज्ज प्रगल्भता, वेदना की वीभत्स निवृत्ति नहीं है। सुरूचि के सुकुमार से सुकुमार स्वरूप पर कहीं आघात नहीं पहुँचता, इसकी घटनायें ही बोल रही है पात्रों के बोलने की अपेक्षा नहीं।[55] स्पष्ट है कि कहानी के आदर्शवाद से अधिक महत्वपूर्ण आदर्श की व्यंजना के प्रति कहानीकार का कला संयम है, जो उस युग की अन्य कहानियों को देखते हुए अप्रत्याशित है। वास्तविक जीवन की मार्मिक स्थितियों के चयन औश्र उनके जीवन्त चित्रण में झलकता हुआ यथार्थवाद इस कला संयम का आधार है।

'उसने कहा था' कहानी से स्थानीय आंचलिकता झलकती है, जो आगे चलकर हिन्दी कहानी की विशेषता बन गई। अमृतसर के बाजार की चहल पहल में, जर्मन मोर्चे पर सिख जवानों के पंजाबी लोक गीत में मरणासन्न लहना सिंह के प्रताप में लाई हुई घर की याद में व्याप्त आंचलिकता के दर्शन होते हैं। 'उसने कहा था' कहानी की भाषा ने हिन्दी कहानी को कुतूहल पूर्ण घटनाओं के कथानक से उधार कर मार्मिक जीवन स्थितियों की ओर मोड़ दिया। इसके पहले जीवंत भाषा के अभाव में हिन्दी कहानी का विकास अवरुद्ध था। इसी कहानी के माध्यम से हिन्दी कहानी को पहली बार अपनी जीवन्त अभिव्यक्ति मिली। यह कहानी 1915 में लिखी

[54] भूमिका–हिन्दी कहानियाँ सम्पादक डॉ., नामधर सिंह, पृ.सं.–5
[55] हिन्दी साहित्य का इतिहास, आचार्य राम चन्द्र शुक्ल।

गई। प्रथम महायुद्ध 1914 में प्रारम्भ हुआ था। गुलेरी जी ने समकालीनता बोध का परिचय देते हुए भारतीय कहानी के इतिहास में बेजोड़ इस कहानी को युद्ध के मोर्चे पर स्थित कर दिया। कहानी में 25 वर्षों की लम्बी अवधि को कथानक विषय और पूर्व घटनाओं को अत्यन्त कुशलता के साथ चित्रित किया है।

'उसने कहा था' मैं लहना सिंह के त्याग की कथा गुलेरी जी के प्रौढ़ अनुभव का प्रतीक है। राजेन्द्र यादव की दृष्टि से वहाँ देवदास का त्याग और बलिदान वर्षों तक पाठकों को चलाता जरूर रहा लेकिन कहानी का वह शिल्प कौशल उसमें भी नहीं है।[56] इसे जीवन, चेतना और परिवेश की कहानी कहा जा सकता है। कहानी की चेतना को जीवन्त परिवेश मिला है और चेतना तथा परिवेश दोनों अपरिहार्य भाग से जुड़े है, जिससे कहानी इतनी जीवन्त और सशक्त हो उठी है।[57] कहानी में नारी शोषण तो नाम मात्र को है लेकिन इसकी सबसे बड़ी विशेषता निर्भीकता पूर्ण प्रेम निरूपण है। उस अन्धविश्वासी और पिछड़े युग में प्रेम का ऐसा जीवन्त चित्रण कहानी कार के लिए जोखिम का विषय था, किन्तु गुलेरी जी ने दूर दर्शिंतापूर्ण आधुनिकता का परिचय देते हुए इस जोखिम को दृढ़ता के साथ ग्रहण किया। डॉ0 नगेन्द्र ने इसकी पुष्टि में लिखा है– 'गुलेरी जी के साहित्य का आधार छायानुभूति नहीं है, जीवन की मांसल अनुभूतियाँ है। वे सैक्स के नाम पर झिझकने वाले आदमियों में से नहीं थे।[58] गुलेरी जी ने तत्कालीन समाज की परवाह किये बिना ऐसे मानवीसत्यों को उद्घाटित किया जो सदियों से अंधविश्वासों के कुहासे में घुट–घुट कर दम तोड़ रहे थे। यही उनकी आधुनिकता का सबसे बड़ा सबूत है।

प्रेमचन्द्र की कहानियों में नारी शोषण

सन् 1916 में प्रेमचन्द्र की 'सरस्वती' में पंचपरमेश्वर' कहानी प्रकाशित हुई, जिसमें 'उसने कहा था' की आंचलिकता को एक कदम आगे कर सीधे ग्राम से जोड़ दिया। परम्परागत लोक कथा का साहित्यिक रूपान्तर इतना सहज और सजीव बन पड़ा कि यूरोप की 'शार्ट स्टोरी' और बंगला के 'गल्प' से हिन्दी कहानी

[56] राजेन्द्र यादव, कहानी स्वरूप और संवेदना पृ.सं.–22
[57] हिन्दी कहानी, दो दशक की यात्रा, पृ.सं.–19
[58] डॉ0 नागेन्द्र, विचार और अनुभूति, पृ.सं.–46

का रिश्ता जोड़ने वालों की ख्याली उड़ान एक बार में ही ध्वस्त हो गई। प्रेमचन्द्र ने इस परम्परा में अनेक कहानियाँ लिखी, जिसमें नारी शोषण को ग्रामीण कथाओं का रस, दर्शाया गया। उन्होंने कहानी को पढ़ने के साथ ही कहने–सुनने की चीज बना दिया और प्रेमचन्द्र के बार में प्रेमचन्द्र के अनुभव की व्यापकता आश्चर्य में डाल देती है। प्रेमचन्द्र ने कुल मिलाकर लगभग 225 कहानियाँ लिखी और 20 वर्षों की अवधि में उन्होंने आदर्शोन्मुख यथार्थवाद से आलोचनात्मक यथार्थवाद की लम्बी यात्रा तय की, जिसमें स्वभावतः कहानी कला का विकास हुआ।

प्रेमचन्द्र का युग अन्ध विश्वास और आडम्बर का युग था। समाज में जात–पांत, धर्म तथा स्त्रियों पर मनमाने अत्याचार हो रहे थे। विधवा विवाह समाज में पाप समझा जाता था। बहु विवाह, बाल विवाह, दहेज प्रथा, पर्दा प्रथा तथा अन्य सामाजिक कुरीतियाँ नारी शोषण का माध्यम थी। उस समय नारी केवल चहारदीवारी की शोभा बढ़ाने वाली तुच्छ वस्तु समझी जाती थी। गाँधीवाद ने प्रेमचन्द की दूर दर्शिता को ढक दिया था। ऊँचे आदर्शों और महान संदेशों के कारण उनकी अधिकांश कहानियां केवल उपदेश बनकर रह गयी।

प्रमेचन्द्र जी ने अपने पात्रों का चयन यथार्थ की मरू भूमि से किया था। उनकी दृष्टि चाहे आदर्शवादी रही हो, चाहे सुधार वादी। निःसंतान गोदावरी ने बहुत विचार के पश्चात् पंडित देवदत्त को गोमती से संतान हेतु पुनः विवाह के लिए तैयार किया। प्रारम्भ में गोमती पर सास की तरह राज किया, स्वयं मालकिन बनकर रही, व्यंग वाणों से उसे निरन्तर विदीर्ण करती रही। पारिवारिक परिस्थितियों के बदलाव से उसका स्वामित्व छिन कर पति तथा सौत के हाथ में आ गया। संयोगवश नयी पत्नी गोमती के द्वारा उन्हीं व्यंग वाणों को सुनना पड़ा जो कभी उसने दिए थे। अन्त में गोदावरी पारिवारिक कलह और ईर्ष्या की अग्नि में जल कर जीवन लीला को समाप्त करने के उद्देश्य से हताश होकर गंगा में कूद कर प्राण दे देती है।

प्रस्तुत कहानी में प्रेमचन्द्र ने गृहस्थी के मोह और उसके सुलभ आधिपत्य से हटायी गई गोदावरी के हृदय की पीड़ा, ईर्ष्या तथा सौत, पति एवं समाज के व्यंग वाणों से नारी शोषण की अभिव्यक्ति की है। अपने त्याग की अवहेलना और सौत के

स्वामित्व एवं पति के बदले व्यवहार से जीवन का अन्त ही उसे एक मान मुक्ति का मार्ग दिखता है। दूसरी ओर अधेड़ और रोगी पति की पत्नी बनकर निरन्तर पहली पत्नी को सहती हुई गोमती भी अन्त में संकोच की सीमा तोड़ देती है। देखा जाय तो गोमती का भी सौत के माध्यम से निरन्तर शोषण किया जा रहा था। परिणाम स्वस्थ गृहस्थी में अचानक विस्फोट होता है। इस प्रकार 'सौत' कहानी में गोदावरी अभिव्यक्त किया गया है। पंडित देवदत्त द्वारा भी पहली पत्नी गोदावरी का शोषण किया गया है।

'कथन' कहानी में पति और ससुर के द्वारा शोषित बुधिया की प्रसव वेदना की तड़प और मृत्यु प्राप्ति का मार्मिक वर्णन है। काम चोर, आलसी और शराब के दास पिता पुत्र किस प्रकार पीड़ा से तड़पती हुई बुधिया के कष्ट को आसानी से सह जाते हैं। उसका पति माधव तड़पती पत्नी को इसी डर से सांत्वना नहीं देना चाहता कि कहीं उसके जाते ही उसका पिता भुने हुये आलू घट न कर जाये। 'कथन' के माधव के लिए सुधा पूर्ति पत्नी के जीवन भरण से बढ़ कर है। उसी पत्नी की मृत्यु के उपरान्त कफन के लिये गाँव के जमींदार, महाजन तथा अन्य सभी की सहायता से प्राप्त पैसे हाथ में आते ही मधुशाला को देखकर शराब के मोह में आकृष्ट पिता पुत्र सारा पैसा शराब और पूड़ी मछली में खर्च कर हाथ झाड़ते लौटते हैं तथा आत्म–तृष्टि को महत्व देते हुये सुविधा को परलोक प्राप्ति के आशीष देते हैं और सबके सामने रुपये गिरने का बहाना बनाने का संकल्प करते हुये सोचते हैं कि उसे तो 'कथन' मिल ही जायेगा, हम अपनी लालसा पूरी कर लें। नशे की अस्थिरता में उसके प्रति सहानुभूति भी प्रकट करते हैं कि अच्छा हुआ माया जाल से जल्दी मुक्त हो गई। पाँच रुपयों के खर्च और कथन की महत्ता के चित्रांकन द्वारा प्रेमचन्द्र ने भारतीय नारी के अवला और तिरस्कृत रूप को अत्यन्त उत्तमता से उभार कर रख दिया है।[59]

'सोहाग का शव' प्रेमचन्द्र की एक अन्य कहानी है जिसमें पति की योग्यता और उन्नति की महत्वाकांक्षी सुभद्रा पति को जिद करके सास–ससुर की अवहेलना तथा तारे सहती हुई उध्य शिक्षा हेतु विदेश भेजती है। कुछ दिनों बाद ही पति की

[59] कथन प्रेमचन्द्र की सर्वश्रेष्ठ कहानियाँ

ओर से निरन्तर बढ़ती हुई अपनी उपेक्षा को सहती हुई म नही मन यूरोप जाकर बात का बाधा बनकर उसके दर्शन मात्र को ही जीवन की उपलब्धि मानती है। वहाँ जाकर उसे ज्ञात होता है कि उसके रूप सौन्दर्य का वह पुजारी किसी अन्य युवती के प्रेम का भिखारी बन चुका है। विदेश में रहती हुयी दो महिलाओं को भारतीय संगीत तथा हिन्दी भाषा सिखाकर एवं बचे समय में भारतीय वस्त्र सिलकर जीवन यापन करती है। अचानक एक दिन उसे ज्ञात होता है कि उसका पति केशव उर्मिला नामक एक अत्यन्त साधारण युवती से विवाह कर रहा है। पहले तो उसके मन में विद्रोह तथा हिंसा की भावना पनाती है परन्तु कुछ ही क्षणों में वैराग्य की स्थिति उत्पन्न हो जाती है और वह अपने आभूषण भी उस युवती को बिना अपना परिचय दिये दे देती है। वह पति से सामना होने पर अपना संतुलन नहीं खोती। पति अर्धमित हो कर दूसरी युवती पर अपने सम्बन्धों की वास्तविकता नहीं खुलने देगा। जब पुनः पूर्व पत्नी से मिलने जाता है तो उसे सुभद्रा के स्थान पर एक पैकेट मिलता है जिसमें उसके सौभाग्य सूचक चिन्ह पति का फोटो और पीली साड़ी के साथ एक संदेश है कि .... 'यह मेरे सोहाग का शव है। इसे टैब्स नदी में विसर्जित कर देना।[60] प्रस्तुत कहानी में एक पति परायणा पत्नी के गुणों की उपेक्षा करने वाले दूसरे रूप की ओर तृष्णावश आकर्षित होने वाले पति के द्वारा भारतीय नारी के प्रति पुरुष के व्यवहार एवं विवाह जैसे पवित्र और दृढ़ बन्धन को भी नगण्य मानना 'सुभद्रा' के प्रति किये गये शोषण की अभिव्यक्ति अत्यन्त सशक्त है। जैसे पति द्वारा किया गया शोषण तत्कालीन समाज में नारी की नियति ही थी।

'आभूषण' प्रेमचन्द्र जी की एक अन्य सशक्त कहानी है जिसमें स्त्रियों के आभूषण के प्रति मोह का सजीव वर्णन है। प्रेमचन्द्र जी लिखते हैं– 'यद्यपि हमने किसी रूप हीना महिला को आभूषणों की सजावट से रूपवती होते नहीं देखा तथापि हम यह भी मान लेते हैं कि रूप के लिये आभूषणों की उतनी ही जरूरत है, जितनी घर के लिये दीपक की। .....इस दीपक की ज्योति में आँखे धुधंली हो जाती है। यह चमक–दमक कितनी ईर्ष्या, कितने द्वेष, कितनी स्पर्धा और कितनी दुराशा

[60] सौहाग का शव, प्रेमचन्द्र पचास कहानियां, पृ. 196

का कारण है, इसकी केवल कल्पना से ही रोंगटे जुड़े हो जाते हैं। इन्हें भूषण नहीं, दूसरा कहना अधिक उपयुक्त है।'[61]

आभूषणों के प्रति अपने मोह को रोक नहीं पाती। यद्यपि मंगला सौन्दर्य में शीतला से बहुत पीछे है तथापि शीतला को आभूषणों का सौन्दर्य मोह लेता है। पति से आभूषणों के हठ में कहा–सुनी हो जाती है और उस पर जान देने वाला पति विमल उसके 'आभूषण' मोह को शान्त करने के लिये बिना बताये दूसरे देशास्वाना में जाकर मजदूरी करने लगता है। पति–पत्नी में मान मनुहार तो होती ही रहती है लेकिन इस कहानी में पत्नी से पूछ तो इस तरह रहे हों जैसे सुनार दरवाजे पर बैठा है। कटू वाक्य को सुनकर पति संयमित नहीं रह पाता। विदेश जाकर ही धन कमाना तथा आभूषण बनवाना समस्या का समाधान नहीं था। पति का यह सोचना या तो इसे गहनों से ही लाद दूंगा या वैधव्य शोक से या तो आभूषण ही पहनेगी या सिन्दूर को तरसेगी। पत्नी के प्रति विद्रोह एवं शोषण का प्रतीक है। पति यह भी विचार नहीं करता कि उसकी उपस्थिति में ही कठिनाई से गुजर बसर करने वाला उसका तीन प्राणियों स्वयं, पत्नी और माँ का परिवार उसकी अनुपस्थिति में कैसे जीवन यापन करेगा।

पति के जाने के बाद शीतला पश्चाताप की अग्नि में जल रही है। पति के प्रेम की महत्ता को वह सब समझ पाती है जब आभूषणयुक्ता मंगला प्रेम समर्पित करने पर भी पति के ह्रदय को नहीं जीत पाती। विमल के घर से जाने के उपरान्त दो वर्ष शीतला को अनेक कष्ट झेलने पड़े। छोटी जमींदारी का न तो उसे लगान मिला और न ही फसल। महाजन से उधार लिया। इसी बीच से पूरा परिवार फौजदारी आदि में फंसकर घर छोड़कर उसी के पास उड़ गया। घर रात दिन कलह का केन्द्र बन कर रह जाता है।

दूसरी ओर जमींदार सुरेश सिंह की आभूषण संपन्ना 'मंगला' पति की उपेक्षा से त्रस्त होकर छोड़कर धसी जाती है। सुरेश सिंह का आकर्षण शीतला के सौन्दर्य के प्रति जागृत होता है। यह सौन्दर्य शोषण की अभिव्यक्ति है, परन्तु अपने विदेश के रहते वह उसे बहन मानकर उसकी सहायता करता है। शीतला के मुख से ही

[61] आभूषण पचास कहानियाँ प्रेमचन्द्र, पृ.सं.–120

उसे जब यह ज्ञात होता है कि आभूषणों की हठ के परिणाम स्वरूप ही विमल घर छोड़ गया है। तो उसकी श्रद्धामयी भावनाएं शीतला के प्रति बदल जाती है। वह नारी हृदय में धधकती आभूषण भौह का ज्वाला को अनुभव करता है। उसकी शान्ति हेतु अपनी पत्नी के आभूषण लाकर दे देता है। इसी बीच शीतला का पति विमल पर लौटकर आता है। लेकिन इस बीच उसके द्वारा किया गया कठोर श्रम और रास्ते की थकान उसे मृत्यु शैया पर लिटा देती है और तीसरे ही दिन उसका देहान्त हो जाता है। आभूषण मोह की परिणति वैधव्य शोक में होती है।

प्रेमचन्द्र जी की 'स्वामिनी'[62] वैधव्य पीड़ा से त्रस्त प्यारी नामक एक ऐसी नारी की कहानी है जो परिवार के हर सदस्य को सुख–सुविधा प्रदान करने के लिए पूर्णरूप से समर्पित है। अपनी आवश्यकताओं की ओर भी उसका ध्यान नहीं जाता। इस पर भी पारिवारिक जनों के व्यंग्य वाण जब तब सहने पड़ते है। उसकी अपनी ही बहन जो कि उसकी देवरानी भी है। अपने मातृत्व सुख को स्वयं भोगते हुये प्यारी की भावनाओं के प्रति उपेक्षाभाव रखती है। धीरे–धीरे ससुर की मृत्यु के उपरान्त देवर–देवरानी के भी बच्चों के भविष्य की दुहाई देते हुये घर से चले जाने पर वह जीवन के अकेलेपन को ढोने को विवश रह जाती है 'जब से इस घर में आई कभी एक दिन के लिये भी अकेले रहने का अवसर नहीं आया। दोनों बहने सदा साथ रहीं। आज उस भयंकर अवसर को सामने आते देखकर प्यारी का दिल बैठा जाता था। वह देखती थी, मथुरा प्रसन्न है, बाल वृन्द यात्रा के आनंद में खाना पीना तक भूले हुये है, तो उसके जी में आता, वह भी इसी भाँति निद्वन्द्व रहे, मोह और ममता को कुचल डाले, किन्तु वह ममता जिस खाय को खा–खाकर पली थी, उसे अपने सामने से हटाये जाते हुए देख कर क्षुब्ध होने से न रखती थी।[63] ससुर के द्वारा सौंपी हुई 'स्वामिनी' की कुंजी उसे घर का स्वामित्व तो प्रदान करती है परन्तु पारिवारिक परिप्रेक्ष्य में उसका मानसिक शोषण पूर्ण रूप से विभिन्न किया गया है। सौंपे गये स्वामित्व के सुख की आड़ में समय–समय पर उपेक्षित व्यवहार द्वारा 'प्यारी' के मानसिक शोषण को प्रेमचन्द्र जी ने अत्यन्त कुशलता से उभारा है।

[62] स्वामिनी–पचास कहानियाँ प्रेमचन्द्र, पृ.सं.–523
[63] स्वामिनी–पचास कहानियाँ प्रेमचन्द्र, पृ.सं.–530

प्रेमचन्द्र जी के शब्दों में सबसे उत्तम कहानी वह होती है, जिसका आधार किसी मनोवैज्ञानिक सत्य पर हो। एक ही घटना या दुर्घटना, भिन्न–भिन्न प्रकृति के मनुष्यों को भिन्न–भिन्न रूप से प्रभावित करती है। हम कहानी में इसको सफलता के साथ दिखा सकें, तो कहानी अवश्य आकर्षक होगी।

कुछ कहानियां घटना प्रधान होती है, कुछ चरित्र प्रधान। प्रेमचन्द्र की कहानियां प्रायः चरित्र प्रधान है तथा विषय वस्तु के समान ही शैली की दृष्टि से भी उनकी कहानियों में एक महान कलात्मक प्रचुरता और विविधता है। जिन्दगी के बारे में उनके अनुभव को व्यापकता आश्चर्य में डाल देती है। प्रेमचन्द्र ने कुल मिलाकर सवा दो सौ कहानियां लिखी और बीस वर्षों की अवधि में उन्होंने आदर्शोन्मुख यथार्थवाद से आलोचनात्मक यथार्थवाद तक ही लम्बी यात्रा तय की। उनकी अन्य कहानियां जैसे– 'स्वर्ग की देवी', 'लैला', 'प्रेम का उदय', 'पिसन हारी का कुआ', 'एण्ट्रेस', 'दो तकिया', 'बड़े घर की बेटी', सोहाग का शव' आदि अनेक कहानियां पूर्णतया यथार्थवादी है तथा 'आभूषण', 'घर जमाई', 'सौभाग्य के कीड़े', 'प्रेम की कथा', 'मर्यादा की वेदी', 'नरख का द्वार', 'कुसुम', 'उद्धार', 'लाँछन' आदि कहानियों के माध्यम से नारी जीवन से सम्बन्धित, दहेज, विधवा समस्या, अनमेल विवाह वैश्या समस्या आदि से सम्बन्धित नारी शोषण की अभिव्यक्ति को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

जयशंकर प्रसाद की कहानियों में नारी शोषण

प्रसाद जी ने हिन्दी कहानी भण्डार वृद्धि में अपूर्व योगदान किया। उन्होंने लगभग 60 कहानियां लिखी। जिनमें विषय की विविधता के साथ–साथ कला का चरम उत्कर्ष अंकित है। कहानी में उन्होंने प्राचीन संस्कृति के स्वर्णिम आदर्शों को प्रकाशित किया।

प्रसाद की कहानी 'ग्राम' का नायक संयोगवश ही रास्ता भटकर भूतपूर्व कुसुम्पुर जागीरदार की विधवा के यहाँ पहुँच जाता है और उसे यह ज्ञात होता है कि उसके शोषण का कारण उसका अर्थ लोलुम पिता है। इस कहानी में प्रमुख संयोग विद्यमान है। किन्तु धीरे–धीरे प्रसाद की कहानी कला निखरती गई और

अन्त में चलकर 'आकाश दीप', 'धीरू', 'बेड़ी', 'भथुआ', 'दासी', 'पुरस्कार' और 'गुण्डा' जैसी सशक्त कहानियों की सर्जना हो सकी है।

1926 से 1929 तक के मध्य रची गयी 19 कहानियाँ आकाशद्वीप में संग्रहीत है। प्रायः सभी कहानियों की आधार भूमि में प्रेम एवं नारी शोषण है। लेखक ने इन कहानियों में प्रेम के विविध खण्ड चित्रों के साथ, मानव के अन्तर में सोई हुई इच्छा और जीवन लहरों से सहता जागकर प्रबुद्ध हो जाने वाले कितने ही गूढ़ रहस्यों, लाल साओं और राम विरागों का सफल अंकन किया है।

'आकाशद्वीप' में संगृहीत 19 कहानियों का क्रम इस प्रकार है– 'आकाशद्वीप', 'ममता', 'स्वर्ग के खण्डहर में', 'सुनहला सांप', 'हिमालय का पथिक', 'भिक्षारिम', 'प्रतिध्वनि', 'कला', 'देवदासी', 'समुद्र संतरग', 'वैरागी', 'बनजारा', 'चूड़ीवाली', 'अपराधी', 'प्रणय चिन्ह', 'रूप की छाया', 'ज्योतिष्मती', 'रमला' और 'बिसाती'।

प्रसाद जी के अधिकांश कहानियों के पात्र इस देश के होकर भी वे इस देश के नहीं लगते।[64] प्रसाद जी ने उन्हें समाज से कम इतिहास से अधिक ग्रहण किया है। उनके पात्रों में नारी–पात्रों की बहुलता है तथा नारी–शोषण भी विद्यमान है। डॉ0 बेचन की राय में यथार्थ के अभाव में प्रेम, दया, क्षमा, करूणा और उत्सर्ग की भावना ने उन्हें आदर्श प्रतिमान बना दिया है।[65] नारी अपने जीवन में माँ, भगिनी, ताई तथा अन्य रूपों के द्वारा मानव को अपने स्वहांचल से बांधती आयी है। लेकिन प्रसाद जी की दृष्टि इधर नहीं गई है।[66]

प्रसाद जी के कथा साहित्य में व्यवहारिकता एवं सामाजिकता का सर्वदा अभाव है। उन्होंने किसी निश्चित सामाजिक उद्देश्य को लेकर कहानियाँ नहीं लिखी उनके ह्रदय सागर पर जिन भाव तरंगों ने नृत्य किया, उसी का संगीत उनकी कहानियों में सुनाई देता है।[67] उनके कहानी साहित्य का सामाजिक

[64] हिन्दी कहानीः एक अनारंग परिचय, उपेन्द्रनाथ अश्क, पृ.सं.–47
[65] आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य और चरित्र विकास, डॉ. वेचन, पृ.सं.–112
[66] हिन्दी कहानी, शिल्प इतिहास आलोचना, डॉ0 अष्टभुजा प्रसाद पाण्डेय, पृ.सं.–47
[67] कहानी और कहानीकार, पृ.सं.–79

मूल्यांकन करते समय यह बात निसंकोच कहीं जा सकती है कि प्रसाद जी ने कहानी विधा को अपनाया तो है, लेकिन इसे अपना नहीं बना सके।[68]

प्रसाद की 'आकाशद्वीप', 'ममता', 'देवदासी' और 'चूड़ीवाली' चरित्र प्रधान कहानी है जिसमें पूर्णतया नारी शोषण की अभिव्यक्ति दृष्टि गोचर होती है। 'आकाशद्वीप' की 'चम्पा' हृदय से अगाथ प्रेम रखते हुए भी 'बुद्ध गुप्त' को सिर्फ इसलिए स्वीकार नहीं कर पाती, क्योंकि वह उसके पिता का हत्यारा होता है।

'ममता' की 'ममता' अपने ब्राह्मण धर्म की रक्षा के लिए पिता का वध करने वाले विधर्मी को आश्रय देती है। 'देवदासी' की 'पद्मा' अपने कूट प्रिय को विस्मृत नहीं कर पाती और उसके हत्यारे अशोक को क्षमा नहीं कर पाती।

'चूड़ीवाली' की चूड़ीवाली जिस सरकार को सौन्दर्य से अपने आधिपत्य में नहीं कर पाती उसी की सेवा कार्य द्वारा अपना बनने के लिए विवश करती है।

इन सभी कहानियों में नारी के अन्तर्द्वन्द्व तथा भावों और मनोवेगों के पास प्रतिपात का विस्तृत मनोवैज्ञानिक चित्रांकन हुआ है। यद्यपि विषय वस्तु की दृष्टि से 'आकाशद्वीप', 'ममता', 'स्वर्ग के खण्डहर' सिर्फ ऐतिहासिक और अतीर्तोन्मुख काल्पनिक कहानियां है। 'भिखारिन' कहानी में आर्थिक विवशता से पीड़ित नारी शोषण के प्रति सहानुभूति का भाव मुखरित है। 'ममता', 'प्रतिध्वनि' और 'देवदासी' में सामाजिक रूढ़ियां नारी–शोषण का माध्यम हैं, उन पर कुठाराघात है और उसे छिन्न–भिन्न कर देने का लेखक का साहस प्रशंसनीय है। 'प्रतिध्वनि', 'देवदासी' समुद्र संतरण, 'वैरागी', 'बनजारा', 'अपराधी', 'रूप की छाया' नामक कहानियों में अंतस के उन्मूले भावों और उनके परस्पर द्वन्द्वों को मनोवैज्ञानिक ढंग से उद्‌घाटित करने का प्रयत्न है। नारी पुरुष के सम्बन्ध का दार्शनिक धरातल पर प्रतीक्षात्मक ढंग से 'विवेचन का लक्ष्य' समुद्र संतरण और 'ज्योमिष्मती' में स्पष्ट है। 'देवदासी' और 'स्वर्ग के खण्डहर' में लेखक के मान्यतावादी दृष्टिकोण को सुन्दर अभिव्यक्ति मिली है।

[68] हिन्दी कहानी, अपनी जवानी, पृ.सं.–86

'आकाशदीप' की अनेक कहानियों में लेखक का झुकाव बौद्ध दर्शन की करूणा की ओर दिखायी पड़ता है। 'वस्तुतः बौद्ध दर्शन से प्रसाद जी ने दो महान सत्य ढूंढ निकाले, नारी शक्ति की महानता और उनका सम्मान तथा मानव की करूणा के माध्यम से मानव के प्रति क्षमा, दया और प्यार।' 'आकाशदीप की समस्त कहानियों का मूल लक्ष्य यही है।' 'आकाशदीप' 'चूड़ीवाली', स्वर्ग के खण्डहर में आदि कहानियों में करूणा से आवलांबित नारी का गरिमामय त्याग पूर्ण स्नेह, शीश, क्षमामय और ममता पूर्ण रूप ही चित्रित हुआ है। 'ममता' 'बनजारा' और 'बिसाती' में जीवन की करूणा का मूल स्त्रोत प्रवाहित होता स्पष्ट दिखायी देता है। 'अपराधी' और 'वैरागी' में सात्विक भाव से मानव द्वारा मानव के प्रति क्षमा एवं त्याग के भाव का सुन्दर अंकन है।

'आकाशदीप' की कहानियों में जीवन के कार्य व्यापारों के प्रति लेखक की यथार्थ दृष्टि का अभाव अवश्य दिखायी पड़ता है पर इस सत्य को नकारा नहीं जा सकता कि प्रसाद ने मानव मन की मूल प्रवृत्तियों को जाना पहचाना है, उन्हें अनुभव किया है तथा उनके कलात्मक चित्रण में उन्हें पूर्ण सफलता मिली है। 'आकाशदीप' की कहानियां, कहानी कला के अनेक रचना विधानों का उल्लंघन करके भी कहानी साहित्य की अमूल्य निधि है।

जयशंकर प्रसाद लिखित 'दासी' कहानी में स्त्री का अनैतिक शोषण वर्णित है। इरावती नामक युवती को मलैच्छ मुल्तान की लूट में पकड़ लाते है। इरावती के बार–बार विरोध करने पर भी एक दिन कन्नोज के चतुष्यषाचौराहा[69] पर घोड़ों के साथ उसकी भी बोली लगा कर उसे पांच सो टिरम पर महाजन के हाथ बेच दिया जाता है। इरावती की शर्तों को सुनकर वह बलराज जो नहीं समझ पाता कि स्त्रियां भी बिकती है, जान जाता है कि आर्थिक परतन्त्रता, हीनता और निर्धनता के कारण किन–किन रूपों में शोषण किया जा सकता है।[70]

'आकाशदीप' कहानी में प्रेम और घृणा के द्वन्द्व को प्रदर्शित किया गया है। कहानी की नायिका 'चम्पा' बुद्ध गुप्त नामक जलदस्यु को पिता का हत्यारा

[69] डॉ0 लक्ष्मी नारायण लाल, हिन्दी कहानियों की शिल्प विधि का विकास, पृ.सं.214
[70] आंधी, जयशंकर प्रसाद, पृ.सं.–40

समझकर उससे घृणा करते हुए भी प्रेम करती है और अपनी विवशता पर स्वयं रोती है। प्रेम और प्रतिकार की विरोधी अनुभूतियों से उसे छुटकारा नहीं मिलता। आकाशदीप के समान जलने को तत्पर 'चम्पा' बुद्ध गुप्त के साथ वापस नहीं जाती।[71]

जयशंकर प्रसाद की पुरस्कार कहानी में भी वैयक्तिक एवं राष्ट्रीय प्रेम के द्वन्द्व को दर्शाया गया है। 'मधुलिका' राजकुमार अरूण से प्रेम करती है। वह सिंह मित्र की कन्या है। कौशल राज्य के नियमानुसार उसकी भूमि राजा के द्वारा ले ली जाती है और बदले में स्वर्ण मुद्राये दे दी जाती है, लेकिन राष्ट्रीय प्रेम से भरी हुई मधुलिका पितामहो की भूमि को बेचना अपराध मानती है और स्वर्ण मुद्राओं को राजा के ऊपर न्यौछावर कर देती है। राजकुमार अरूण किसी षड़यन्त्र की रचना कर नाले के पास की जमीन मांगने के लिए मधुलिका को प्रेरित करता है। वह राजा से कृषि कार्य के लिए उपरोक्त भूमि मांग लेती है। उसका कर्तव्य शोध उसे अरूण के साथ किए गये सहयोग के प्रति आंशकित कर देता है। वह राजा से रात्रि के आक्रमण की आशंका को व्यक्त कर देती है, फिर भी उसके हृदय में अरूण के प्रति प्रेम है। अरूण को बंदी बना लेने पर राजा जब मधुलिका से पुरस्कार मांगने को कहते हैं तो वह 'मुझे भी प्राण दण्ड मिले' कहती हुई बंदी अरूण के पास जा खड़ी होती है।[72] इस कहानी में राष्ट्रीय प्रेम के समक्ष वैयक्तिक भावनाओं के उत्तीर्ण का संदेश है। 'आकाशदीप' तथा 'पुरस्कार' दोनों ही कहानियों में 'चम्पा' तथा 'मधुलिका' भावनात्मक शोषण के लिए विवश है।

प्रसाद की लगभग सभी कहानियों में सशक्त नारी चरित्र एवं उसके शोषण का विस्तृत वर्णन है। प्रसाद की 'आंधी' की 'लैला' 'दासी' की 'फिरोजा' और 'इरावती', 'धीरू' की 'बिन्दो' 'मीरा' तथा 'पुरस्कार' की 'मधुलिका' में भावुकता एवं नारी शोषण का यथार्थ चित्रण है। 'इन्द्र जाल' संग्रह की कहानियों में नारी पात्रों का पूर्ण विकास दिखायी देता है। 'इन्द्रपाल' की 'बेला', 'सलीम' की 'प्रेमा' 'नूरी' की 'नूरी' और चित्र वाले पत्थर की 'मंगला' 'गुण्डा' की 'पन्ना' और 'दुलारी', 'देवरथ'

[71] आंधी, जयशंकर प्रसाद, पृ.सं.–98
[72] आकाशदीप, जयशंकर प्रसाद, पृ.सं.–18

की 'सुजाता' तथा 'सालवती' की सालवती के व्यक्तित्व में तो प्रसाद की नारी भावना की विभिन्न परिस्थितियों और भिन्न–भिन्न मुद्राओं में अंकित किए गए चित्र सजीव हो उठे हैं।

जैनेन्द्र कुमार का कहानियों में नारी शोषण

प्रेमचन्द्र की छाया में कहानी की एक अन्य प्रतिभा जैनेन्द्र कुमार (1905) का उदय हुआ, जो प्रेमचन्द्र के निकट होते हुए भी उनसे इतने भिन्न है कि उनके सम्बन्ध की कल्पना भी कठिन मालूम होती है। जैनेन्द्र ने कहानी की सीधी–सीधी कला प्रेमचन्द्र से ही ग्रहण की, किन्तु उसकी लोक सुलभ सादगी को और तराश कर उन्होंने कला का रूप दे दिया। जैनेन्द्र ने कहानी को जीवन की बड़ी–बड़ी समस्याओं के चक्कर से निकाल कर रोजमर्रा की छोटी–छोटी बातों की गुत्थी खोलने की और लगाया और इस प्रकार हिन्दी में एक मनोवैज्ञानिक तथा मनोविश्लेषण वादी कहानीकार के रूप में विख्यात हो गये, तो स्पष्ट ही उनके साथ थोड़ी ज्यादती है।

जैनेन्द्र की अधिकांश कहानियां एक अन्तर्मुखी चिन्तक के सत्यान्वेषण की मूर्ति लिपियां है। जिनकी शक्ति गांधीवादी गद्य की पारदर्शी सच्चाई, सरलता और सादगी में निहित है। जैनेन्द्र ने लगभग सौ कहानियां लिखी है जिनमें से लगभग एक दर्जन कहानियां तो ऐसी है जो अपनी कला तथा नारी शोषण के विभिन्न आयामों को प्रस्तुत करती है।

प्रेमचन्द्रोत्तर कथा साहित्य में जैनेन्द्र जी का विशेष सम्मानित स्थान है। जैनेन्द्र जी की कहानी कला एक नवीन मार्ग को लेकर आधारित हुई है। उनकी कहानियों में शोषण एवं विद्रोह का तीव्र स्वर गुंजित हुआ है। इनकी कहानियों में व्यक्ति और समाज, श्रेय और प्रेम तथा बुद्धि और हृदय के मध्य होने वाले संघर्षों का सजीव चित्रण है।

मानव जीवन की विविध समस्याओं, रूढ़ियों और बिडम्बनाओं का विस्तार से वर्णन इनकी कहानियों का प्रधान युग है। जैनेन्द्र के प्रमुख कहानी–संग्रह निम्न लिखित हैं :– एक रात, जय संधि, फांसी, कथमाता, ध्रुव यात्रा, यातायन, दो

चिड़ियां, पाजेब आदि 'जैनेन्द्र की कहानियां' नाम से दस भागों में आपकी कहानियां संग्रहीत हैं।

जैनेन्द्र आरम्भ से ही जीवन की उलझनों से बचते रहे और कल्पना, भावुकता और मनोविज्ञान को भारतीय दर्शन का कवच पहना कर दूर से तलवार खींचते हुए दृष्टिगोचर होते हैं। उनकी कहानियां शिल्प की दृष्टि से महत्व पूर्ण हो सकती है, सामाजिक दृष्टि से नहीं।[73]

जैनेन्द्र जी सामाजिक कहानीकार नहीं है, वो दार्शनिक है तथा प्रेमचन्द्र जी द्वारा स्थापित प्रगतिशील दृष्टि को आरम्भ में जैनेन्द्र ने आगे बढ़ाया। इन्होंने जीवन के विविध पक्षों का चित्रण अपनी कहानियों में किया है। परम्परागत रीति रिवाजों, अंध विश्वासों, सामाजिक कुरीतियों, विवाह, प्रेम आदि विभिन्न समस्याओं के प्रति उनके विचारों की अभिव्यक्ति महत्वपूर्ण है। इन्होंने रूढ़िवादिता की समस्या, अन्तर्जातीय विवाह की समस्या, मध्य वर्गीय समस्या तथा नारियों की अन्य समस्याओं का चित्रण अपनी कहानियों में विस्तार पूर्वक किया है। वो क्षण, 'निस्तार', 'ब्याह' 'विस्मूति' 'अन्धे का भेद' 'निराकरण' 'मास्टर जी' तथा 'प्रत्यावर्तन' आदि कहानियां सामाजिक विषयवस्तु पर आधारित है। जैनेन्द्र जी का विश्वास है कि समाज का विकास वैज्ञानिक विकास द्वारा ही सम्भव है। वे व्यक्तिवाद को प्रधानता देते हैं, क्योंकि उनका विचार हे कि समाज से पृथक उसका कोई अस्तित्व नहीं। जैनेन्द्र कुमार ने धार्मिक पौराणिक कहानियां यद्यपि कम संख्या में लिखी है। परन्तु वे नीतिपरक हैं तथा धर्म द्वारा स्त्रियों के शोषण के विभिन्न पक्षों को दर्शाती है। उनकी कहानियां 'देवी देवता', 'लाल सरोवर' 'बाहुवली', 'भद्रवाहु', कामनापूर्ति, 'गुरू कात्यायन' आदि धार्मिक पौराणिक कहानियां है। लेखक का विचार है कि धर्म जनता के शोषण का माध्यम बन गया है। जैनेन्द्र कुमार की अधिकांश कहानियां मनोवैज्ञानिक समस्या का चित्रण करती है। 'एक रात' कहानी में देश सेवा में संलग्न नायक 'जय राज' मानसिक कुण्ठा से ग्रसित हैं, उसके मन में बराबर अन्तर्द्वन्द्व बना रहता है। वह 'सुदर्शना' नामक नारी से प्रेम करता है, परन्तु अपने स्वाभिमान व

[73] हिन्दी कहानी की मूल संवेदना, पृ.सं.–84

मिथ्या सदाचार के कारण वह उसे प्रगट नहीं होने देता इस तरह वह नारी का मानसिक शोषण करता है।

वास्तव में हिन्दी कहानी के क्षेत्र में प्रेमचन्द्र के बाद नवीन चेतना का युग था। पूर्व युग में सामाजिक दोषों के कारण जो शोषण हुआ वह इस युग में मिटता सा दिखाई देने लगा। युगों से पीड़ित नारी अपने अधिकारों के प्रति अधिक सजग हो उठी थी। इस युग की सामाजिक परिस्थितियां बदल चुकी थी, तथा इस नवीन परिवेश में व्यक्ति समझौता करने में असमर्थ था। इस युग के प्रमुख कहानीकारों का सुलय चित्रण निम्न, मध्य वर्गीय समस्यायें है। इस युग की प्रमुख समस्याओं में नारी स्वातन्त्रय् की समस्या, वैवाहिक जीवन की समस्या, पारिवारिक जीवन की समस्या, भारतीय नारी के सम्मुख आर्थिक स्वावलम्बन की समस्या, संयुक्त परिवार की समस्या, दहेज की समस्या, अनमेल विवाह की समस्या, वृद्ध विवाह, बाल विवाह, पुनर्विवाह की समस्या, स्त्री शिक्षा एवं अन्य मनोवैज्ञानिक समस्यायें थी।

इन्हीं विभिन्न सामाजिक समस्याओं का चित्रण जैनेन्द्र जी ने अपनी कहानियों में किया है।

जैनेन्द्र के समकालीन कहानीकारों का नारी सम्बन्धी दृष्टिकोण पूर्व युग से भिन्न था। अधिकांश कहानीकारों के महिला पात्र अभिजात्य वर्ग से थे, परन्तु उस समय के नारी पात्र चाहे अभिजात्य वर्ग के हो अथवा न हो, नारी के लिए सुधारवादी दृष्टिकोण ही अभिव्यक्त करते हैं। नारी की दुर्बलता का चित्रण करना नारी सम्बन्धी दृष्टिकोण नहीं है, परन्तु ये वर्गगत् विशेषता कहीं जा सकती है।

जैनेन्द्र ने अपनी कहानियों में स्त्री पात्रों के जीवन के विविध पहलुओं का विश्लेषण करते हुए नारी जीवन की प्रेम और विवाह परक समस्याओं, अतृप्त इच्छाओं, सामाजिक अथवा नैतिक मानदण्डों को स्पष्ट किया है। मनोविज्ञान के आधार पर उनकी उन्नति के मार्ग भी बताये है। नारी का आदर्शरूप उपस्थित करते समय युग की मांग के अनुसार नीति तथा अनीति के प्रश्न को वे गौण मानते हैं। जैनेन्द्र की कहानियों की नायिकायें अधिकांशतः व्यक्तित्व तथा चेतना से रहित मध्यम वर्गीय पात्र है।

'विस्मृति' कहानी की नायिका प्रेमी और पति दोनों की मृत्यु के बाद अकेली निःसहाय और दुःखी जीवन व्यतीत करती है। वह दोनों की स्मृति से व्यचित होकर द्वन्द्व पूर्ण स्थिति में जीने को विवश है। कभी वह जीवन से पलायन करना चाहती है और कभी–कभी जीवन रक्षा के प्रति सजग हो उठती है।[74] इस कहानी के सभी पात्रों के अन्तर्द्वन्द्व का मूलकारण सास बहू के विकृत सम्बन्ध है।

'फोटोग्राफी' नामक कहानियों में पति और पुत्र की मृत्यु के उपरान्त वातावरण में पत्नी का दम घुटने लगता है, जिससे छुटकारा पाने के लिए वह जहर खा लेती है। वह स्पष्ट कहती है, 'मुझे भी अन्तर्निहित हो जाना है। मैंने जहर खाया है, तीन घन्टे होने आये है अब जहर की अवधि का अन्तिम क्षण दूर नहीं। मैं फिर दुनिया में न रहूंगी। सम्भवतः पति तथा पुत्र विहीन नारी का सामाजिक प्रतिष्ठा रहित, व्यचित स्थिति के पलायन ही इस कहानी में नायिका का उद्देश्य था।[75]

'मृत्यु दण्ड' कहानी में मेजर अपनी पत्नी के साथ दुर्व्यवहार करता है, पर पुरुष के समक्ष उसे नचाता है और बेरहमी से पीटता है। यह देखकर दिनेश के मन में क्रिया–प्रतिक्रिया तनाव का रूप धारण कर देती है और वह मेजर को दूसरे दिन एकान्त में ले जाकर मार डालता है। वह क्रूर मेजर को मारने का कार्य सामाजिक कर्तव्य से ऊंचा समझता है। एक पुरुष के द्वारा किया गया शोषण दूसरे पुरुष को सहम नहीं है।[76]

'रूकिया बुढ़िया' नामक कहानी में रूढ़िमणी अत्यन्त सरल एवं सीधी है। पति के दुर्व्यवहार से उसका मन व्यक्ति हो उठता है। उसका पति उसे छोड़कर चम्पों के साथ अनैतिक प्रेम सम्बन्ध स्थापित कर लेता है। सब कुछ जानते हुए भी पति से कुछ न कह कर 'रूढ़िमणी' अपने आप को परिस्थितियों में ढाल लेती है। पति के चम्पों के साथ भाग जाने के बाद 'रूक्मिणी' से वह रूकिया बुढ़िया बन जाती है

[74] जैनेन्द्र की कहानियां चौथा भाग, 'विस्मृति' कभी, पृ.सं.–64
[75] जैनेन्द्र की कहानियां दूसरा भाग, 'फोटोग्राफी' कहानी, पृ.सं.–64
[76] जैनेन्द्र की कहानियां नवां भाग, 'मृत्यु दण्ड' कहानी, पृ.सं.–54

और अपने जीवन के शोध क्षणों को बिताने के लिए छोटे–छोटे बालकों से सम्बन्ध जोड़ देती है।[77]

'उलटफेर' कहानी में पति के साथ तनाव पूर्ण स्थिति होने के कारण 'प्रमिला' उसके अलग रहने लगती है। तनाव और घुटन पूर्ण मनः स्थिति के कारण बाहर से वह टूटी नहीं अपितु वह और अधिक कठोर हो गई है। जीवन यथार्थ के अनुभवों ने बाहर से बादाम की तरह इसे कठोर बना दिया है। शायद वह कठोरता ही है जिसने उसे टूटने नहीं दिया है।[78] अपनी तथा अपने बच्चों की जीविका व चलाने के लिए प्रमिला के कर्तव्य विमूढ़ होकर बैठ नहीं जाती अपितु तथा सौ रुपये की नौकरी करने के लिए तैयार हो जाती है। वह अपनी स्त्री से कहती है। ये सवा सौ ही सही, कोशिश करेगी कि इतने में सबके पेटों के लिए आटा दाल तो जुड़ जाय।[79] पारिवारिक शोषण को झेलने वाली प्रमिला अपने तथा अपने बच्चों के भविष्य के लिए अपर्यन्त है।

धनी से धनी परिवार में घुटती हुई आत्माओं की चिरव्यथा का वर्णन करते हुए जैनेन्द्र जी कहते हैं, 'प्रसिद्ध सेठ लक्ष्मी निवास जी का हाल में तीसरा विवाह हुआ। विवाह मैयर योग्य विदुषी, सुन्दरी पत्नी प्राप्त हुई है।[80] वैभवपूर्ण वातावरण में मानसिक शोषण से घुटती हुई 'रत्नप्रभा' की व्यथा का मनोवैज्ञानिक चित्रण किया गया है।

'इनाम' नामक कहानी में पति के दुराचारी होने के कारण धनन्जय की मां कुण्ठाग्रस्त गयी है। वह पति और पुत्र किसी के साथ भी अच्छा व्यवहार नहीं कर पाती। मानसिक शोषण के निरन्तर तनावग्रस्त होने के कारण उसका दम घुटने लगता है और वह जीवन से पलायन करना चाहती है। भारतीय समाज में पति के द्वारा निरन्तर ताड़ित पत्नियां कुण्ठित जीवन बिताने को विवश है।[81]

---

[77] जैनेन्द्र की कहानियां सातवां भाग, 'रूकिया बुढ़िया' कहानी, पृ.सं.–88
[78] जैनेन्द्र की कहानियां दसवां भाग, 'उलटफेर' कहानी, पृ.सं.–140
[79] जैनेन्द्र की कहानियां दसवां भाग, 'उलटफेर' कहानी, पृ.सं.–140
[80] जैनेन्द्र की कहानियां पांचवां भाग, 'रत्न प्रभा' कहानी, पृ.सं.–82
[81] जैनेन्द्र की कहानियां दूसरा भाग, 'इनाम' कहानी, पृ.सं.–15

'लाल सरोवर' कहानी में सम्पूर्ण समाज कोढ़िन को हीन दृष्टि से देखता है। अनैतिक सामाजिक कृत्यों के कारण उसे समाज से बहिष्कृत करना सामाजिक शोषण है। वैरागी नामक व्यक्ति सच्चे मन से कोढ़िन की सेवा करके उसे रोग मुक्त करने का प्रयत्न करता है और समाज में एक नये आदर्श का प्रतिपादन करता है।[82]

'त्रिवेनी' कहानी में त्रिवेनी निरन्तर शारीरिक शोषण के कारण पति की प्रवृत्ति से असन्तुष्ट रहती है। मानसिक स्थिति संतुलित न होने के कारण वह अपने इकलौते बेटे के साथ भी अच्छा व्यवहार नहीं कर पाती वह उसे मारती पीटती और धिक्कारती रहती है। चूल्हे के बराबर बैठकर माथे को हथेली में लेकर वह सोचती है, 'जब तक नहीं' आये, छुट्टी नहीं हुई। होगा कुछ.... सच अब मुझसे नहीं होगा काम। वह जाने उनका काम जाने.... आये दिन यही धन्धे रिस पर बोला।[83]

इसी प्रकार 'महामहिम' 'लाल सरोवर', 'यथावत' आदि कहानियां पारिवारिक द्वन्द्व के माध्यम से शोषण की कहानियां है। जिनमें पति–पत्नी, माँ–बेटे या तो एक दूसरे को गलत समझते हैं या फिर जानबूझकर एक दूसरे को हीन दृष्टि से देखते हैं। परिणाम स्वरूप उनके अन्तर्मन में द्वन्द्व और तनाव की स्थिति उत्पन्न हो जाती है, जो किसी शोषण से कम नहीं है।

'ब्याह', 'वह चेहरा', 'प्यार का तर्क' आदि कुछ कहानियां ऐसी है जिनमें पात्रों की कुण्ठा का मूल कारण सामाजिक परिवेश है। वह 'चेहरा' कहानी में रानी की कुण्ठा का कारण गृह कलह है। घर की स्थूल काया प्रौढ़ा के दुर्व्यवहार पूर्ण शोषण के कारण उसकी मन स्थिति ऐसी हो गई है। 'उस समय उसके चेहरे पर कुछ न होता, हंसी न मुस्कान। एक भीगी उदासी उस पर पुती होती।[84]

'अपना–पराया' कहानी में आर्थिक स्थिति के सोचनीय होने के कारण एक स्त्री अपने पुत्र को लेकर घर से निकल पड़ती है। उसे कहीं भी ठहरने के लिए जगह नहीं मिलती। सराय के एक कमरे में जब उसे एक रात रूकने के लिए जगह मिलती है तो फौजी के अचानक आ जाने से उसे वहां से भी जाना पड़ता है।

---

[82] जैनेन्द्र की कहानियां तीसरा भाग, 'लाल सरोवर' कहानी, पृ.सं.–89
[83] जैनेन्द्र की कहानियां सातवां भाग, 'त्रिवेनी' कहानी, पृ.सं.–132
[84] जैनेन्द्र की कहानियां सातवां भाग, 'वह चेहरा' कहानी, पृ.सं.–201

कुण्ठित मन स्थिति में बच्चे को उठाकर उस व्यक्ति के पैरों पर डालकर कहती हैं, 'मैं चली जाती हूँ इस बच्चे को ठोकर मारकर जहां चाहो फेंक दो।' शोषण के विरुद्ध असहाय नारी समाज में दवा की पात्र नहीं बन पाती।

जैनेन्द्र की कहानियों के पात्र प्रायः असाधारण परिस्थितियों में शोषण ग्रस्त रहने के कारण द्वन्द्व ग्रस्त है। कहानियों में परिवार, संस्कृति, समाज को लेकर शोषण के विरुद्ध पात्रों में अन्तर्द्वन्द्व मिलता है। पारिवारिक द्वन्द्व के अन्तर्गत पति–पत्नी का पारस्परिक मन मुटाव, सास–बहु की अनबन, पति का किसी अन्य के साथ सम्बन्ध या पलायन मानसिक शोषण में आते हैं। वैधव्य, परित्याग तथा आर्थिक स्थिति शून्य होने के कारण भी जैनेन्द्र के पात्र सामाजिक शोषण की सम्भावना से द्वन्द्व ग्रस्त रहते हैं। पुरुष पात्रों की अपेक्षा जैनेन्द्र के स्त्री पात्र अधिक सहिष्णु है। वे असामान्य शोषण की परिस्थितियों से पलायन न करके उन्हीं में ढलकर जीवन बिताने को प्रयत्नशील रहते हैं। इन कहानियों के स्त्री पात्र पति द्वारा बताये जाने पर शोषण के कारण कुण्ठाग्रस्त तो होते हैं, परन्तु जीवन रक्षा के लिए कोई न कोई मार्ग ढूंढ निकालते हैं। जैनेन्द्र की मनोवैज्ञानिक कहानियों में अन्तरजातीय विवाह, दहेज की समस्या, अनमेल विवाह आदि ने समाज के प्राचीन ढांचे को खिला दिया है। सामाजिक शोषण के विरुद्ध उन्होंने समाज के निरादूत व्यक्तियों के प्रति दवा, त्याग, करूणा आदि नैतिक मूल्यों को आवश्यक माना है। प्रेमचन्द्र के उपरान्त आधुनिक हिन्दी कहानी साहित्य को नया मोड़ देने के कारण जैनेन्द्र अत्यन्त लोकप्रिय हुए है।

यशपाल की कहानियों में नारी शोषण

यशपाल उन विशिष्ट कहानीकारों में से एक है जो क्रान्तिकारी राजनीति के साथ सक्रिय रूप से सम्बद्ध रहे। यशपाल ने अपनी कहानियों में राजनीति की अपेक्षा आर्थिक समस्याओं पर अपना ध्यान अधिक केन्द्रित किया। यशपाल के दृष्टिकोण से जीवन का आधार भौतिक अथवा आर्थिक है। इसके अतिरिक्त यशपाल ने अपनी कहानी के माध्यम से धार्मिक अन्धविश्वास को उजागर किया है। उनका विचार है कि अपने अज्ञान जन्य भय के कारण मनुष्य देवी–देवताओं पर विश्वास करता है।

यशपाल ने सबसे अधिक कहानियां शोषण के आधार भूत काम प्रेम के सम्बन्ध में लिखी है। काम विषयक वर्जनापरक दृष्टिकोण के कारण समाज में नारी का स्थान गिर गया है। यशपाल ने आत्मिक प्रेम की धारणा का खण्डन किया है। उन सभी कहानियों में जो प्रेम या विवाह के सम्बन्ध में लिखी है, पूर्ण रूप से नारी शोषण विद्यमान है। 'प्रेम का सार' कहानी की 'रजिया' ने अपने पति की 30 वर्ष तक प्रतीक्षा की, किन्तु 30 वर्ष बाद अपने पति का दांत हीन मुख देखकर वह उसे स्वीकार न कर सकी। 'भाग्य का चक्र' की 'अमला' बूढ़े के साथ अपने विवाह की चर्चा सुनकर मानसिक शोषण के विरुद्ध आत्म हत्या का विचार करने लगती है। इन सब कहानियों से स्पष्ट है कि प्रेम और विवाह स्वरूपतः न तो मात्र आत्मिक है, और न निरा इन्द्रिय सुख। नारी की पराधीनता का प्रमुख कारण आर्थिक है। प्रेमवश या अर्थलाभ के लिए नारी शारीरिक शोषण के लिए प्रस्तुत होती है। मध्यम वर्ग की स्त्री और 'वेश्या की तुलना करते हुए यशपाल ने लिखा है– 'मध्यम श्रेणी की एक सम्मानित महिला और वैश्या में यही अन्तर है कि सम्मानित महिला का पालन पोषण एक व्यक्ति करता है और वैश्या का पालन पोषण अनेक व्यक्ति करते हैं। यशपाल ने अपने इस विचार को अनेक कहानियों के माध्यम से व्यक्त करते हुए वैश्या की स्वतन्त्रता का उल्लेख किया है। वैश्या शारीरिक शोषण के बदले पुरुषों का आर्थिक शोषण करती है किन्तु मध्यम वर्गीय नारी शोषण की परम्परा में उलझ कर रह जाती है। नारी शोषण के सन्दर्भ में यशपाल ने तीन प्रकार की पत्नियों का उल्लेख 'दादा कामरेड' में किया है 'दादा कामरेड' का हरीश कहता है– 'स्त्रियां' तीन तरह की होती है। एक किसान मजदूर श्रेणी की औरतें, जो पति के बराबर ही काम करती है और पति की गुलामी करती है...। दूसरी हैं, सफेद पोश लोगों की औरते। ये घर का वह काम करती है जो आक दस रुपये माहवार का नौकर बहूजी कर सकता है, हाँ, संतान पैदा करने के काम को अलग रहने दीजिए....। तीसरी है, अमीर श्रेणी की औरतें। पुरुष के मनबहलाव और सन्तान प्रसव के अतिरिक्त वे कुछ नहीं करती।[85] इनमें मजदूर श्रेणी की औरतों को ही थोड़ी बहुत आजादी हासिल है।

[85] दादा कामरेड, यशपाल, पृ.सं.–101

स्वतन्त्रता ओर समता पर टिका मैत्रीमय प्रेम की दाम्पत्य का आकार है। विषमतापूर्ण वैवाहिक बन्धन में प्रेम का अभाव और शोषण सम्भव होता है। सामान्यतः विवाह को समाज में स्त्री पर पुरुष के रूप में देखा जाता है। 'पराई' कहानी का 'पूरन' रक्खी का विवाह के बाद कहता है, 'तू पराई चीज थी, तुझ पर हक नहीं था– अब तू है अपनी।'[86] 'अपनी चीज' कहानी में 'आलो' विवाह के कारण 'किसी की वस्तु' होने के संस्कार से मुक्त नहीं है।[87]

विवाह प्रथा की जकड़न के कारण अनेक स्त्रियों का पति के शोषणमूलक अत्याचार चुपचाप सहने पड़ते हैं। 'छलिया नारी' कहानी की 'नन्दो' अपने पति के अत्याचार सहने को विवश है। दिन में उसे सास का निरादर सहना पड़ता है और रात में पति की यातना। शोषण दोनों में है। इसीलिए वह तंग आकर घर से भाग खड़ी होती है। पत्नी के भाग जाने पर पति विनोद सिंह को वियोग की अपेक्षा अपमान का दुःख अधिक है, क्योंकि पत्नी का भाग जाना उसके पुरुषत्व के लिए अपमान जनक है। बाद में किसी अन्य अवसर पर नदी में बहती हुई एक स्त्री को विनोद सिंह बचाने का प्रयास करता है। संयोग से वह स्त्री 'नन्दो' है। ज बवह बचाने वाले के रूप में अपने पति को देखती है तो अपने को किसी तरह छुड़ाकर वह जाती है। तभी विनोद सिंह ग्लानि का अनुभव करते हुए अपने अपमान और ग्लानि के आघात को कम करने के लिए कहता है, 'छलिया नारी कभी किसी की हुई है।'[88] नारी जब शोषण के विरोध में खड़ी होती है तब सबसे पहले पुरुष के अहं पर चोट करती है। भले ही उसे स्वयं पश्चाताप हो।

विवाह प्रथा की जकड़न स्त्री के लिए पति की मृत्यु के बाद भी ज्यों का त्यों बनी रहती है। पुरुष प्रधान समाज में वह दूसरा विवाह नहीं कर सकती किन्तु पुरुष के लिए यह बन्धन नहीं है। आज के जमाने में विधवा के पुनर्विवाह की समस्या अत्यन्त व्यापक है। पुनर्विवाहिता स्त्री को सामाजिक प्रतिष्ठा प्राप्त नहीं होती, इसलिए 'वैष्णवी' कहानी की विधवा 'द्रोपदी' विवाह नहीं करती। वह वैष्णवी की दीक्षा ले लेती है। वैष्णवी बन जाने के बाद भी वह रक्षा करने वाली बाहों के लिए

[86] पिंजरे की उड़ान, यशपाल, पृ.सं.–119
[87] ज्ञान दान, यशपाल, पृ.सं.–114
[88] अभियाप्त, यशपाल, पृ.सं.–60

तड़प उठती हैं, क्योंकि समाज के कचोटने वाले हाथों से वह उब गई है।[89] यह कचोटन ही नारी के लिए सामाजिक, शारीरिक, मानसिक और चारित्रिक शोषण का प्रतीक है।

विधुर की तुलना में विधवा की स्थिति अधिक त्रासदिक होती है। किसी जमाने में पति के मरने पर शोषण से बचने के लिए पत्नी को सती हो जाना पड़ता था। यशपाल ने सती प्रथा के सम्बन्ध में लिखा है, 'मैं आज पति के वियोग में पत्नी के लिए पितारोहण में सौन्दर्य नहीं', विभीषिका ही अनुभव करता है।[90]

यशपाल ने कुछ कहानियों में पुनर्विवाहिता नारी को प्रस्तुत किया है। 'सोभा का साहस' कहानी में साहसी 'सोभा' का चित्रण है। जीवन भर मानसिक शोषण से बचने के लिए अपने बूढ़े पति को छोड़क रवह युवा प्रेमी के साथ विवाह कर लेती है। इसी कारण उस के सारे गुण उपेक्षित हो जाते हैं। सोभा ने एक पति के रहते हुए दूसरा विवाह किया है। यद्यपि रूढ़िग्रस्त समाज के लिए सोभा का यह साहस महादोष है फिर भी शोषण के विरोध में पुरुष समाज का अनुकरण है। यह विधवा स्त्री पुनः विवाह नहीं है। जिसे समाज में कुछ–कुछ मान्यता मिलने लगी है।

'पराया सुख' कहानी उच्च वर्ग के प्रति आकृष्ट मध्यम वर्ग की उर्मिला के चारित्रिक शोषण की कहानी है। वह स्वयं साठ रुपये लेकर अध्यापिका का काम करती है। उसका पति एक दफ्तर पर सो रुपये पर क्लर्की करता है। इस दम्पति का मकान गिरवी रखा है। उसे छुड़ाने के लिए सेठी बिना ब्याज के रुपये देता है। वह उर्मिला के पति को 300/– रुपये पर अपनी कम्पनी में नौकरी देता है। सेठी के कृपाउन की छाया में पहुँचकर उर्मिला नौकरी छोड़ देती है। सेठी अविवाहित है। वह अपनी सारी सम्पत्ति उर्मिला के बेटे बल्लू के नाम इस शर्त के साथ कर देता है कि बल्लू की सम्पत्ति में कोई और हिस्सेदार नहीं आना चाहिए। सेठी उर्मिला पर और अधिक अधिकार पाने का प्रयास करता है। उर्मिला धीरे–धीरे यह अनुभव करती है कि वह क्रमशः अपना अस्तित्व, सेठी से 'न' कहने का साहस और अधिकार

[89] खच्चर और आदमी, यशपाल, पृ.सं.–16
[90] ओ भैरवी, यशपाल, पृ.सं.–6

खोती जा रही है। वह कातर होकर शोषण के लिए अपनी विवशता पर सोचने लगती है 'वैश्याओं' का जीवन और क्या होता है।[91]

मूलतः यशपाल मार्क्सवादी दर्शन को लेकर हिन्दी कहानी के क्षेत्र में प्रविष्ट हुए तथा समाज में व्याप्त अन्धविश्वासों, रूढ़ियों और परम्पराओं का निरीक्षण करके उनके मूल कारणों को खोजने के लिए निरन्तर प्रयत्नशील रहे। सामाजिक असमानता और आर्थिक शोषण पर प्रहार करते हुए निर्भीकता पूर्वक उन्होंने पूंजीवादी वर्ग का पर्दाफाश किया है।

यशपाल ने लगभग चालीस वर्षों तक लगातार कहानियां लिखी है। इन चालीस वर्षों में कहानी के क्षेत्र में अनेक आन्दोलन हुए, इसके बावजूद भी वे पुराने नहीं पड़े। कमलेश्वर ने लिखा है कि पिछली पीढ़ी में यशपाल ही एक ऐसे नजर आते हैं जो बेहद जागरूक तरीके से सभी व्यर्थ या स्थिर मान्यताओं का प्रतिवाद करते आ रहे हैं। उनके कदमों की आहट हमें हमेशा अपने आसपास सुनाई पड़ती है, बाकी कदम थक कर रूके हुए हैं या अपनी जगह पर 'मार्कटाइम' की कवायद कर रहे हैं और बहुत धूल उड़ा रहे हैं।[92]

यशपाल ने कुल मिलाकर 200 से अधिक कहानियां लिखी। इन कहानियों में काम प्रेम विषयक कहानियों की संख्या बहुत अधिक है उनकी कहानियों में वैश्या वर्ग की स्त्रियां अनेक है। पेट की लाचारी के कारण वैश्या देह विक्रय के लिए विवश हो जाती है। वैश्या व्यवसाय मजबूरी से किया जाता है न कि तफरीह के लिए। यशपाल ने वैश्याओं के चित्रण में मानसिक अन्तर्द्वन्द्व को कोई स्थान नहीं दिया। सामान्यतः निर्द्वन्द्व है। उनकी अधिकांश कहानियों में नारी के आर्थिक शोषण के अनेक माध्यमों, स्थगत, चरित्र गत, मानसिक एवं भावनात्मक शोषणों की सशक्त अभिव्यक्ति हुई है। 'कोकला डकैत' की 'कोकला', मोटर वाला कोयले वाली' को 'पखून' 'परायासुख' की 'उर्मिला' 'व तर्क का तूफान' की 'लता', 'तुमने क्यों कहा था मैं सुन्दर हूँ' की 'माया', 'छलिया नारी' की 'नन्दो', 'वैष्णवी' की 'द्रोपदी' आदि नारीपात्र आर्थिक शोषण के साथ कहीं अधिक शारीरिक शोषण से पीड़ित है, तो

[91] ज्ञान दान, यशपाल, पृ.सं.–64
[92] नई कहानियां, कमलेश्वर लेइ फूलों की तलाश और दस्तकें देते यशपाल, पृ.सं.–68

कहीं प्रेम में प्रवर्चित और कहीं सामाजिक रूढ़ियों तथा बन्धनों में जकड़ी मानसिकता से त्रस्त। इस प्रकार यशपाल की कहानियां समाज में व्याप्त अनैतिकता पूर्ण नारी शोषण की पूर्ण परिचायक है।

स्वतन्त्रता पूर्व हिन्दी कहानी में जीवन के प्रतिबद्धता का अभाव है। वह कल्पना, भावुकता और आदर्शों से ही अधिक सम्बन्धित रही है। उसमें जड़ मूल्य है, बंधे बंधाये रिशते हैं और मुर्दा आदर्शों की एक लम्बी लक्ष्मण रेखा है, जिसे लांघना कहानीकार के लिये घोर सामाजिक अपराध है। परिणामतः सारी कहानी पाप पुण्य, सुख दुख, सौतेली माँ, सांस कुलटा, शराणीय चरित्रहीनों के इर्द गिर्द ही घूमती है और इकहरे निष्कर्ष पर टूटकर उपदेश अथवा संदेश का रूप ग्रहण कर लेती है। नारी शोषण भी नितांत वैयक्तिक मान्यताओं का प्रतिबिम्ब मात्र होता है।

सामाजिक दृष्टि से इस काल की कहानी को उद्देश्य विहीन ही कहा जा सकता है। प्रेमचन्द्र, यशपाल और अज्ञेय को छोड़कर किसी भी कहानीकार को मस्तिष्क में सुनिश्चित उद्देश्य नहीं था। उनके स्त्री पात्र बंधे बंधाये चौखटे में फिट, दया करूणा और एक अजीब प्रकार के हिन्दूपन से त्रस्त है और इनका कोई स्वतन्त्र व्यक्तित्व ही नहीं है। इस समय की जो भी कहानियाँ नारी शोषण से सम्बन्धित हैं वह आदर्शवाद से अधिक ग्रस्त हैं उसमें यथार्थ की घटक नहीं है। शायद कहानीकार सोचता है कि छोटी मछलियों को निगलने के लिये बड़े मच्छर की आवश्यकता है। अन्यथा कहानी कैसे बनेगी। इस समय के कहानीकार नैतिकता और आदर्श के खोल में लिपटे हुए पर्दा प्रथा, सती प्रथा बाल विवाह, विधवा विवाह, वैश्यावृत्ति तथा स्त्री शिक्षा आदि समाज सुधारों की सीमा में ही आयद्ध रहे। मजे की बात तो यह है कि इस काल की कहानी ने प्रगतिशील विचारों की स्त्रियों को चरित्रहीन और कुलटा का नाम देकर, समाज में पनपी संघर्षशील चेतना की जड़े ही उखाड़ फेंकी। मनोरंजकता, आकस्मिकता, अलौकिकता और देवी घटनाओं का चमत्कार आदि तत्वों ने इस कहानी को वर्तमान की यथार्थवादी जमीन से काटकर अतीत की अन्धी गुफाओं में फेंक दिया, इसे पूर्णरूप से असामाजिक बना दिया, जहां वह जीवन भर सामाजिक चेतना से वंचित रही।

मध्यकालीन स्थितियों में भारतीय समाज में नारी का दर्जा किस सीमा तक नीचे आया इसकी एक झलक सन् 1853 में तत्कालीन समाज की शैक्षणिक स्थिति के अध्ययन के लिये नियुक्त 'लार्ड विलियम बैंटिंग' की रिपोर्ट से देखी जा सकती है। इस रिपोर्ट में बताया गया था, अधिकांश हिन्दू परिवारों में यह धारणा फैली हुई है कि लड़कियों को शिक्षा दिखाई जायेगी तो धर्म विरुद्ध होगी और वह विधवा हो जायेगी। पुरुष प्रधान समाज की किसी साजिश या अंधविश्वास जनित इस धारणा का प्रभाव नव जागरण काल तक रहा। इस तरह शिक्षा से वंचित होने पर सामान्य भारतीय नारी की सामाजिक, राजनीतिक भूमिकाओं का कोई प्रश्न ही नहीं उठता था। उसकी भूमिका केवल ग्रह कार्यों तक सीमित हो गई। गृह में माँ और गृहिणी के नाते ही उसकी विशिष्ट भूमिका मानी गई। बच्चों का प्रसव और पालन पोषण तो प्रकृति से ही स्त्रीत्व से ही संबद्ध है। गृह कार्यों का निर्वाह उसके लिये सामाजिक व्यवस्था की देन है। लेकिन मध्यकाल से लेकर अभी तक स्त्रियों की यही भूमिका मान्य रही। वे चाहे खेतों में काम करे या कारखानों में अथवा सफेदपोश नौकरियां आज भी उनकी यह कार्यकारी भूमिका गौण है। इस तरह जब शैशव लेकर युवावस्था तक निरन्तर नारी में हीनता ग्रन्थि और पुरुष में श्रेष्ठता ग्रन्थि का विकास किया जायेगा और इस विकास में परिवार की स्त्रियां ही भागीदार होगी, तो पुरुष को दोषी ठहराना व्यर्थ है। इसी अन्तर के कारण लड़की की सामाजीकरण की प्रक्रिया गलत हो जाती है।

तृतीय अध्याय

हिन्दी कहानियों में नारी का आर्थिक शोषण

आर्थिक दृष्टि से स्वातन्त्रयोत्तर युग विशेष महत्व रखता है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के साथ ही भारत में औद्योगिक विकास को प्रोत्साहन मिला। औद्योगिक विकास के कारण मालिक और मजदूर के विभिन्न वर्ग बने तथा मालिक वर्ग अपने अधिकार सुरक्षित रखने के लिए अधिक क्रियाशील रहा। इस युग में पूँजीवादी व्यवस्था अपने पूर्ववत् रूप में विद्यमान थी। पूँजीपति वर्ग ने मजदूरों का आर्थिक शोषण किया। इस युग की सर्वाधिक महत्वपूर्ण समस्या बेरोजगारी की समस्या थी। आज के युग में मनुष्य का जीवन अन्द्रिघयों से भरा हुआ है। इस युग के कहानीकारों ने भारत की आर्थिक स्थिति को अपनी कहानियों में प्रस्तुत किया है तथा इस युग की आर्थिक समस्याओं से जुड़ी बेरोजगारी पूंजीवादी व्यवस्था, मध्यम वर्ग, निम्न वर्ग की आर्थिक विषमता के साथ नारी का आर्थिक शोषण सर्वाधिक हुआ है।

इस युग के अधिकांश कहानीकारों ने इन्हीं विभिन्न समस्याओं का चित्रण अपनी कहानियों में किया है। इस दृष्टि से मार्कण्डेय, ज्ञानी, गोपाल शेवरन, शेखर जोशी, रामकुमार, हूदपेश, बुहुमदत्त, सोमावीरा, फणीश्वर नाथ 'रेणु' निर्मल वर्मा, रागिव राघव, मोहन राकेश आदि कहानीकारों का नाम विशेष उल्लेखनीय है। गोपाल शेखरन लिखित 'मिठास' कहानी पूंजीवादी व्यवस्था में समाज के शोषण को प्रस्तुत करती है। समाज का एक वर्ग तो पूंजी के आधार पर पूंजीपति बन बैठा, दूसरा दिनरात मेहनत करने वाला श्रमिक वर्ग और अधिक गरीब होता गया। कहानी में लेखक कहता है, ''ये सेठ लोग जो हमारे बलबूते पर कमा कमा कर लाखों के मालिक बन गये है, वास्तव में अगर ध्यान ले देखा जाय तो वादा–आर्थिक पूँजी का वह अधिकार क्षेत्र है जहां वह खुले आम नंगी होकर नृत्य करती है। इसी के ऊपर तो अपनी नियामते लुटा देती है और किसी की तरफ मुड़कर देखती भी नहीं। कहां तक कहूँ। इस नौकरी ने तो मेरा दिमाग खराब कर रखा है। रात में नींद में मुझे

दो में बेचा तीन में बेचा आदि चिल्लाने और घबड़ाने की बीमारी हो गई। जब मैं रात में इस प्रकार चिल्लाता हूँ तो मेरी पत्नी घबरा जाती है और रोने लगती है।[93]

धर्म, अर्थ काम और मोक्ष मनुष्य जीवन के बार पुरुषार्थ माने गये है। इनमें से आधुनिक काल में अर्थ का स्थान आसाधारण महत्व रखता है। नारी के सर्वांगीण विकास में व्यक्तिगत तथा सामाजिक स्वतन्त्रता के साथ–साथ आर्थिक स्वतन्त्रता भी एक महत्वपूर्ण पहलू है।

आर्थिक स्वतन्त्रता के बिना नारी का विकास असम्भव है। नारी की आर्थिक परतन्त्रता के कारण ही पुरुष वर्ग ने उस पर अधिकार जमाया है। आर्थिक दृष्टि से नारी समाज में पिता, पति, भाई या पुत्र पर निर्भर करती है। परिणाम स्वरूप नारी को घर में और समाज में अपनी व्यक्तिगत स्वतन्त्रता से हाथ धोना पड़ता है। वास्तविक स्वतन्त्रता आर्थिक स्वतन्त्रता पर ही निर्भर है। इसलिए मार्क्सवादी विचारधारा प्रस्तुत करने वाले कहानीकारों ने यह विश्वास व्यक्त किया है कि आर्थिक परतन्त्रता ही नारी की वैयक्तिक स्वतन्त्रता के मार्ग में बाधा निर्माण करती है। इसलिए नारियों को आर्थिक रूप से सश्वत बनाकर नये समाज की स्थापना करना चाहिए। ऐसे समाज में नारी और पुरुष में कोई भेद न होकर दोनों को समान अधिकार होना चाहिए। जिससे पुरुष नारी का शोषण न करके उसे सम्मान पूर्वक गौरव देगें। नारी को उसके अधिकार देने के लिए सामाजिक क्रान्ति की जरूरत है। यशपाल के 'दादा कामरेड; में हरीश का कहना है, 'क्यों न स्त्री भी पुरुष के समान काम करें और ब्याह कर साथ ही रहना है तो दोनों कमाई कर अपना आत्मविश्वास जागृत करें और जिससे उनके व्यक्तित्व का विकास हो जायेगा। समाज भी उसे तभी सम्मान देगा जब वह आर्थिक रूप से आत्म निर्भर होगी।[94]

नारी की आर्थिक विवशता का यथार्थ चित्रण अमृत लाल नागर ने किया है। नागर जी कहते हैं 'नारी होना आज की सामाजिक स्थिति में अभिशाप है.... स्त्री और आम तौर पर एक दूसरे की इज्जत नहीं करते हैं। स्त्री आम तौर पर आर्थिक

[93] स्वतन्त्रता के बाद सर्वश्रेष्ठ हिन्दी कहानियां/सर्वश्री गोपाल शेखरन– 'मिठास' पृ.सं.–64
[94] यशपालः दादा कामरेड, पृ.सं.–26–27.

दृष्टि से पुरुष के आश्रित है उसका व्यक्तित्व स्वतन्त्र नहीं।[95] नागर जी का विश्वास है कि आर्थिक दृष्टि से स्वावलम्बी नारी ही समाज के रूढ़िगत बन्धन तोड़ कर अपने को पुरुष धर्म के बन्धनों से मुक्त कर सकेगी। यदि समाज में नारी आर्थिक दृष्टि से स्वावलम्बी बन गई तो पुरुष और नारी के बीच की बहुत सी जटिल समस्या हल हो सकेगी तथा इससे दोनों के बीच का तनाव भी कुछ मात्रा में हल्का हो सकेगा ओर एक का थोक दोनों में बंट जायेगा। परिणामतः शोषण की सम्भावना कम होगी।

आधुनिक शिक्षा और निरन्तर बढ़ती हुई मंहगाई के कारण नारी के कन्धों पर पुरुष के समान दायित्व आ पड़ा है, बल्कि उससे कुछ अधिक गोड़ की भागीदार बनी है, क्योंकि स्त्री न केवल नौकरी करती है वरन् घर की व्यवस्था करना भी उसके दायित्व की परिसीमा में निहित है। इस दोहरे गोड़ के कारण वह पति तथा घर के अन्य सदस्यों से सहायता की अपेक्षा रखती है, लेकिन उसके सामने स्थिति कुछ उल्टी ही होती है। फलस्वरूप न वह घर में सद्गृहणी ही बन पाती है और न ही दफ्तर में कुशल कर्मचारिणी ही। स्वतन्त्रयोत्तर हिन्दी कहानीकारों ने नौकरी पेशा नारी की इस शोषित एवं संक्रान्त स्थिति को संवेदनात्मक स्तर पर स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है। मोहन राकेश ने 'सुहागिने' में नौकरी पेशा नारी की इस विवशता को मार्मिक अभिव्यक्ति प्रदान की है। इसी विवशता को मन्नू भण्डारी की कहानी 'आकाश के आइने में' भी देखा जा सकता है। विवाहिता नौकरी पेशा नारी को न केवल घर और बाहर भी समय देना पड़ता है बल्कि उसे अपने पति की देखभाल की ध्यान रखते हुए उसका अविश्वास रूपी जहर भी पीना पड़ता है। इस अविश्वास जनित मानसिक शोषण का कोई उपचार नहीं है नारी जगत में।

शोषण के परिप्रेक्ष्य में कृष्णा अग्निहोत्री की 'सिसकते सपनों की शाम' अनीता ओलक की 'दिन से दिन' और श्याम व्यास की 'धूप तालाब' आदि कहानी की नाविकाओं को इस जहर को पीते हुए देखा जा सकता है। लेकिन इसी संदर्भ में कुछ ऐसी नारियों को भी प्रस्तुत किया जा सकता है जो हर प्रकार के शोषण का प्रतिवाद कर पति की इस सामन्तद्राही प्रवृत्ति से मुक्ति की ओर बढ़ रही है।

[95] अमृत लाल नागरः बूंद और समुद्र, पृ.सं.–47

गिरिराज किशोर की 'प्रथक वाला घोड़ा और निकर वाला साइंस' की रीता अपने बात से स्पष्ट शब्दों में कह देता है, 'आप पुरुष लोग समझते है, जो कुछ आप कमा कर लाते हैं, उसके कारण ही हम लोग आप लोगों का सम्मान करते हैं और इसी कारण आप लोग अपने आप को स्वतन्त्र रस पाने में समर्थ हैं। लेकिन आज व्यक्तिगत सम्बन्धों का भी आर्थिक महत्व अधिक है। अगर मैं आपसे छः गुना कमाती हूँ तो छः गुना बड़ी भी हूँ।[96] अहं पर चोट लगते ही पुरुष हीन भावना से या तो बोना हो जाता है या फिर हिंसक।

इसके विपरीत कतिपय भी नौकरी पेशा नारियां है जिन्होंने मन चाहे पुरुष के न मिलने पर उम्र भर एकाकी बने रहने की नियति को ही स्वीकार किया है। कुलभूषण की 'पंछी और पिंजरा'[97] 'निर्मल थमा' के परिन्दे'[98] राजेन्द्र यादव की 'प्रतीक्षा'[99] उषा प्रियम्बदा की 'झूठा दर्पण'[100] आदि कहानियों की नायिकायें इसी एकाकी जीवन को व्यतीत करते हुए स्वयं मानसिक शोषण का कारण बनी हुई है।

शोषण के अध्ययन क्रम में मैं देखती हूँ कि आर्थिक स्वतन्त्रता के बावजूद नारी भारतीय समाज में असमायोजन की शिकार है। आज की परिस्थितियों में वह इतनी दिग्भ्रमित व निराश हो चुकी है कि उसका हर प्रयास हल्का और खोखला दिखता है। परिणामतः आज उसके पाास अपने विरोध को लेकर कुण्ठाओं के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं। आर्थिक विषमता पूँजीवादी व्यवस्था को जन्म देती है। इसके परिणाम स्वरूप व्यक्ति सब कुछ करने को बाध्य हो जाता है। आर्थिक स्थिति को सुधारने के लिए कहीं उसे चोरी करनी पड़ती है और कहीं उम्र भर गुलामी शिव प्रसाद सिंह द्वारा लिखित 'हाथ का दाग' कहानी में प्रमुख समस्या अर्धाभाव की है। इसकी पूर्ति के लिए स्त्रियां अपने शरीर का व्यापार करती है और अपने शारीरिक शोषण से परिवार का पेट पालती है। पिछले दशकों में जमींदार वर्ग के द्वारा निम्न वर्ग के पुरुषों तथा स्त्रियों का सर्वाधिक शोषण हुआ। शिव प्रसाद सिंह का विचार है

---

[96] नयी कहानियां अगस्त, 64, पृ.सं.–110
[97] नयी कहानियाँ फरवरी, 64 व नवम्बर 62
[98] नयी कहानियाँ फरवरी, 64 व नवम्बर 62
[99] मेरी प्रिय कहानियाँ
[100] कहानी जनवरी, 61

कि 'अन्याय और शोषण अमानवीय कृति है। नारी जाति अधिकार सम्पन्न जमींदार जैसे पुरुष के शोषण का साधन बनी। चिड़ियों को जाल में फंसाने वाली बहेलिए भी उतनी फुर्ती से अपना काम न कर पाते होगें जैसे फुर्ती जमींदार के चुने हुए गुण्डे मासूम औरतों को पकड़ने में दिखाते हैं।[101]

यशपाल की दृष्टि में 'स्त्री की आर्थिक स्वतन्त्रता स्त्री का मानवीय अधिकार है। आर्थिक स्वतन्त्रता के बिना स्वतन्त्रता का कोई अर्थ नहीं, वह ढोंग मात्र है। पूँजीवादी मनोवृत्ति आर्थिक स्वतन्त्रता का विरोध करके स्त्री को अपने भोग की वस्तु बनाये रखना चाहती है। नारी पूर्णरूप से आर्थिक दृष्टि से पुरुष पर आश्रित है इसलिए पुरुष की आज्ञा को ही वह अपना कर्तव्य मानती है। प्राचीन रूढ़ियों के अनुसार आर्थिक समानता एवं स्वतन्त्रता पारिवारिक शान्ति को नष्ट करने का एक साधन समझी जाती थी। संयुक्त परिवारों में एक व्यक्ति कमाता था और परिवार के अन्य सभी सदस्य उस पर आश्रित रहते थे। ऐसे वातावरण में स्त्री की ओर अधिक दुर्दशा थी। यशपाल ने पति परमेश्वर के जन्म जन्मान्तर के सम्बन्ध को सामाजिक रूढ़ि माना है। यही धारणा नारी शोषण का प्रमुख कारण है। उपेन्द्र नाथ 'अश्क' की कहानियों के नारी पात्र अब अपने अधिकार के प्रति जागरूक हो गये है। अशिक्षित स्त्रियां भी अत्याचार और शोषण के विरुद्ध आवाज उठाने में पीछे नहीं है। 'राग और मुस्कान' की नायिका लल्लन का पति शराबी और जुआरी है। लल्लन घर का सारा खर्च चलाती है, परन्तु उसका पति तनखा का पैसा उसे नहीं देता बल्कि उल्टे उस से मांगता है। इसी आर्थिक एवं पारिवारिक शोषण का विरोध 'अश्क' की कहानियों का मन्तव्य है।

स्वातन्त्रयोत्तर कहानियों में नारी की आर्थिक परतन्त्रता आर्थिक स्वतन्त्रता की ओर उन्मुख हुई। नारी शिवा एवं नारी मुक्ति आन्दोलन के परिणाम स्वरूप चहार दीवारी में कैद नारी ने घर के बाहर निकल कर नौकरी पेशा नारी का रूप धारण किया। किन्तु उसकी यह स्वतन्त्रता विवशता में परिणत हो गई। घर और बाहर के दोहरे उत्तरदायित्व को निभाते हुए दैनिक जीवन के अनुक्रम में वह इतनी व्यस्त हो गई कि मानसिक रूप से भी उसे असन्तुलित होना पड़ा। बदली हुई

[101] कर्मनाश की हार, डॉ. शिव प्रसाद सिंह, पृ.सं.–108

परिस्थितियों में नारी की उलझने बढ़ती गई जिससे उसकी जीवन पद्धति, जीवन मूल्य और मनःस्थिति भी बदल गई। प्राचीन बन्धनों से निकल कर कर्मभूमि के नवे क्षेत्र में प्रवेश एवं नयी परिस्थितियों के परिणाम स्वरूप टूटते हुए परिवार का सबसे अधिक बोझ नारी के कन्धों पर आ पड़ा। बढ़ते हुए आर्थिक दबाव के कारण अधोपार्जन नारी की मजबूती बन गई है। नैतिकता के टूटते हुए मूल्यों में भाई अपनी बहिन की कमाई लेने में संकोच नहीं करता, भले ही यह कमाई स्त्रीत्व को दांव पर रखकर प्राप्त की गई हो। गिरिराज किशोर की कहानी 'प्रथक वाला घोड़ा और निकट वाला साहस' में पिता कमाने वाली बेटी की नैतिकता पर प्रश्न चिन्ह नहीं लगाता। मानों अर्धलाभ के लिए बेटी के शोषित होने में पिता की सहमति हो। आज नारी का धन पाप–पुण्य की परिभाषा बदलने से अस्पृश्य नहीं रहा। आज नारी आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर होकर अपने पंखों को तुला हुआ अनुभव करती है, लेकिन सामाजिक नीतियों और मानसिक ग्रन्थियों के पूछने के प्रयास में उसके ठेने भी टूट गये है।[102]

नारी शोषण के सन्दर्भ में मणिमधुकर की कहानी 'फरिश्ते' एक ऐसी दर्द भरी नारी के आत्म समर्पण की कहानी है जिसका पति पत्नी एवं बेटी के शारीरिक सौंदे की रोटी निर्विकार भाव से ग्रहण कर रहा है। बदलते हुए जीवन के अवमूल्यन के परिणाम स्वरूप पति–पत्नी के सम्बन्धों में भी निरन्तर कटुता आती जा रही है।

कमलेश्वर की 'राजा निरजंसिया' कहानी भी आर्थिक दबाव के कारण शोषण के लिए नारी के समर्पण की कहानी है। पति परायणा चन्द्रा अपने बेरोजगार पति की आर्थिक सहायता हेतु बचन सिंह कम्पाउण्डर के हाथों बिक जाती है। मदन छावड़ा की 'रास्ता' में कहानी की नायिका कान्ता सारे परिवार के बोझ को ढोती है धीरे–धीरे सारे भाई बहिन पढ़ लिखकर विदा हो जाते हैं लेकिन उसकी विदाई इसलिए नहीं होती कि उसके बिना गृहस्थी की गाड़ी कैसे खिचेगी। धीरे–धीरे कान्ता के जीवन में कुहासा छाने लगता है। अन्त में अपने आप को उसे चालीस

[102] खुले पंख टूटे डैने : राजेन्द्र यादव

वर्षीय विधुर कुन्दन को समर्पित कर देने का निर्णय लेना पड़ता है।[103] आर्थिक शोषण की परिणति अनमोल विवाह में होती है।

राजेन्द्र यादव की कहानी 'जहाँ लक्ष्मी कैद है'[104] में लक्ष्मी के पिता को यह भय है कि लक्ष्मी की शादी कर देने पर उसकी सारी लक्ष्मी चली जायेगी। अतः वह उसकी शादी नहीं करता। नारी इस घुटनशील परिवेश से मुक्ति पाने के लिए पूर्णरूपेण संघर्ष कर रही है, क्योंकि जब उसे शोषण की सही पहचान होने लगी है। रजनी पणिकर की कहानी 'गुलाब के फूल', जिन्दगी के कांटे में मिसेज शोभा पूरी इस संघर्ष की प्रतीक है। वह अपने सम्भावित शोषण को लेकर परिवेश के प्रति इतनी आशंकित है कि वह अपनी माँ तक पर विश्वास नहीं कर पाती।[105]

मन्नू भण्डारी के नारी पात्र भी शोषण के विरुद्ध एक स्वतन्त्र व्यक्तित्व को लेकर उभरे हैं नारी आज तक पुरुष के अधीन थी इसीलिए उसका व्यक्तित्व संकुचित और परावलम्बी था। मन्नू जी ने अपने नारी पात्र स्वतन्त्र व्यक्तित्व के स्वामी हैं। परम्परागत योगी मर्यादाओं को आँख मूंदकर पालन करने की अपेक्षा आज की नारी अपनी इच्छानुसार अपना जीवन ढ़ालने में समर्थ है। पति के साथ सामंजस्य की स्थिति न रहने पर वह अपने जीवन का इच्छित मार्ग घूम लेती है, क्योंकि जीवन की सहज इच्छाओं और अधिकारों को झुठलाने वाले बन्धन उसे सहन नहीं है।[106] पति द्वारा घर से निकाल देने पर भी 'तीन निगाहों की तस्वीर' की गायिका अपनी रोजी रोटी कमाकर जीवन यापन कर लेती है किन्तु अनावश्यक शोषण के लिए प्रस्तुत नहीं होती।

आर्थिक रूप से स्वतन्त्र होकर भी ये नारियां अपनी भावना और संवेदनाओं से अछूती नहीं रह पायी है। कला के माध्यम से अति सम्पन्न बनकर, प्रसिद्धि के ऊँचे शिखर पर पहुंचकर भी रंजना प्रेम में छले जाने की टीस से व्यक्ति है।[107] प्रेम में चरित्र शोषण से ज्यादा न मानसिक शोषण कष्टदायक होता है।

---

[103] नयी कहानियां जून, 66, पृ.सं.–41
[104] श्रेष्ठ कहानियां, राजेन्द्र यादव, पृ.सं.–95
[105] हिन्दी लेखिकाओं की प्रतिनिधि कहानियां, पृ.सं.–156
[106] दीवार लेखिकाओं की प्रतिनिधि कहानियां, पृ.सं.–156
[107] अभिनेता, मन्नू तिवारी

समाज में नारी के आर्थिक शोषण का एक बड़ा कारण दहेज भी रहा है। इस वैवाहिक दास रूढ़िका प्रेमचन्द्र ने कहानी विधा के माध्यम से विरोध भी किया। उनका विचार था कि विवाह के सम्बन्ध में स्त्री–पुरूष को समान अधिकार प्राप्त होना चाहिए। 'कसम' कहानी इसी तथ्य की पुष्टि करती है। 'आदि काल में स्त्री, पुरुष की इसी तरह की सम्पत्ति थी जैसी गाय बैल या खेती बारी। पुरुष को अधिकार था स्त्री को बेचे गिरो रखे या मार डाले। विवाह की प्रथा उस समय केवल यह थी कि वर पक्ष अपने शूर सामन्तों को तशस्त्र लेकर जाता था और कन्धा को उड़ा ले जाता था। कन्या के घर में रुपया, पैसा, अनाज या पशु जो कुछ उसके हाथ लग जाता था उसे भी वह उठा कर ले जाता था।'[108] शोषण की यह पराकाष्ठा थी।

प्राचीन मान्यताओं के अनुसार स्त्री को यह शिक्षा मिली कि पति को देवतुल्य समझना चाहिए, अतः वह स्वेच्छा पूर्वक कुछ नहीं कर सकती। समझ में नहीं आता उसका सुधार क्यों कर हो। पिछले ही माता–पिता होंगे, जिनके सात पुत्रों के बाद भी एक कन्या उत्पन्न हो जाय और वे सहर्ष उसका स्वागत करें। इसका कारण केवल यही है कि दहेज की दर पावत काल के समान बढ़ती चली जा रही है। जितने ही माता–पिता इसी चिन्ता में घुल–घुलकर अकाल मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं, कोई सन्यास ग्रहण कर लेता है, कोई कन्या को बूढ़े के गले मढ़कर अपना गला छुड़ाता है। पात्र, कृपात्र के चिन्तन का मौका कहां।[109] दहेज लेने वालों को प्रेमचन्द्र ने नैतिक बल से शून्य माना है। उनका कहना है कि लोग दहेज के द्वारा पुत्र की पढ़ाई का खर्च चक्रवृद्धि ब्याज के साथ वसूल लेना चाहते हैं। उनके द्वारा लिखित 'कुसुम' कहानी में अधिक दहेज न मिल सकने के कारण आपसी मतभेद हो जाता है। वर दहेज के रुपयों से विलायत जाना चाहता है, पर दहेज न मिल सकने के कारण जाने में असमर्थ है। पत्नी का परित्याग करके ससुर पर उसका भार रखना चाहता है। तारीफ की बात तो तब थी कि तुम अपने पुरुषार्थ से जाते, इस तरह किसी की गर्दन पर सवार हो आत्म सम्मान बेचकर गये तो क्या गये।[110] प्रस्तुत

[108] मान सरोवर भाग–2, मुंशी प्रेमचन्द्र, पृ.सं.–19
[109] मान सरोवर भाग–3, मुंशी प्रेमचन्द्र, पृ.सं.–38
[110] मान सरोवर भाग–3, मुंशी प्रेमचन्द्र, पृ.सं.–39

कहानी में दहेज की मांग के माध्यम से कुसुम को आर्थिक शोषण की शिकार एक असहाय नारी के रूप में चित्रित किया गया है। दहेज को नारी के दुर्भाग्य का प्रतीक मानकर प्रेमचन्द्र ने 'उद्धार' जैसी कहानियां लिखी है।

1. फणीश्वर नाथ 'रेणु'

रेणु का आगमन हिन्दी कथा–साहित्य में एक धूमकेतु की तरह हुआ। ग्रामीण जीवन का यथार्थ चित्रण रेणु और प्रेमचन्द्र दोनों में किया। प्रेमचन्द्र ने जहां ग्राम्यजीवन के प्रति सहानुभूति है वहीं रेणी जी में आत्मीयता और तादात्म्य है। वे गहरे उतरकर उस जीवन की समस्याओं और उसके सम्पूर्ण आर्थिक सामाजिक एवं समग्र व्यक्तित्व को उभारते हैं– मात्र एक दर्शक की हैसियत से नहीं, एक भोक्ता की हैसियत से उन्हीं में से एक होकर। इसलिए उनकी कहानियों में शोषण के सन्दर्भ में विक्षोम एवं अनुभूति की वास्तविकता है। 'तीसरी कसम', 'रसप्रिया', 'विकट संकट', 'पैच लाइट', 'ठुमरी' 'टेबिल', 'संवरिया' और 'अतिथि सत्कार' रेणु की महत्वपूर्ण कहानियां है। इन कहानियों में उन्होंने एक विशेष अंचल की संस्कृति, आर्थिक जीवन, आचार व्यवहार, धार्मिक परिस्थितियों, रूढ़ियों और परम्पराओं के प्रति अगाध विश्वास तथा नवीन के प्रति जिज्ञासा आदि भावनाओं को एक विशेष मानवीय संवेदना के धरातल पर अंकित किया है। आर्थिक शोषण के परिप्रेक्ष्य में रेणु की महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि उन्होंने बदलते हुए ग्रामीण अंचल में आर्थिक टूटन, विघटित समाज और नवीन को अपनाने में समस्त व्यक्ति को ही अपनी कहानियों का आधार बनाया है। उसके साथ ही अपनी आंचलिक कहानियों में उन्होंने एक ऐसे आदर्श की स्थापना की है जो आर्थिक विपन्नता में कर्म की प्रेरणा देता है, और संघर्ष की क्षमता उत्पन्न करता है। रेणु की प्रायः सभी कहानियों में सांस्कृतिक परम्परा और बदलते हुए समय की नई आर्थिक और सामाजिक स्थितियों की टकराहट होती चलती है। आंचलिक परिप्रेक्ष्य में आर्थिक शोषण के विरोध की सामाजिक सोच रेणु जी की महत्वपूर्ण उपलब्धि है। उत्तरोत्तर उनकी कहानियों में आंचलिक राग बोध का तत्व समाप्त होता चला गया है। अन्तिम दौर की कहानियों में नारी शोषण से जुड़ी बहुत तीखी विद्रोह धर्मिता भी दिखाई देती है। रेणु का पहला कहानी संग्रह सन् 1959 में प्रकाशित हुआ। इस संग्रह की दस कहानियों में

से भी नौ कहानियां आंचलिक है, जिनमें सांस्कृतिक स्वरों के संघर्ष की गाथायें हैं, इनमें कहीं गांव का सनातन कोमल स्वर तो कहीं आर्थिक टूटन से छटपटाता जीवन चित्रांकित है। उपरोक्त संग्रह की कहानियों में ध्यानाकर्षक कहानी 'रस प्रिया', 'पंच लाइट', 'सिर पंचमी का सगुन', 'तीसरी कसम' अर्थात 'मारे गये गुलपरम' और 'लाल पान की बेगम' है। इस संग्रह की सर्वोत्तम कहानी 'रस प्रिया' है। रस प्रिया में मोहना की राह देवता पंथ कोड़ी मिरदंगिया में सोच रहा है, 'जेठ की बढ़ती दोपहरी में खेतों में काम करने वाले भी अब गीत नहीं गाते.... कुछ दिनों के बाद कोयल भी कूकना भूल जायेगी क्या ? ऐसी दोपहरी में कैसे चुपचाप काम किया जाता है। पांच साल तक तो लोगों के दिन में खुलास बाकी था।[111] इस 'रस प्रिया' कहानी से यह प्रकट होता है कि सांस्कृतिक मूल्य, जो सामाजिक जीवन को जीवन्त रखते हैं, शोषण के दबाव में गांव से विदा ले रहे हैं तथा कला का वैयक्तिक मूल्य नये कामकाजी आर्थिक मूल्यों की चपेट में दम तोड़ रहा है। इस कहानी में रेणु जी दो प्रकार के मूल्यो की भीषण टकराहट का चित्रांकन करते हैं। एक ओर धर्म संस्कृति और रस भाव की रक्षा के मूल्य दूसरी ओर रोजी, रोटी के साधनों का अभाव में मानवीय संवेदना का मूल्य इस प्रकार इस कहानी की आधुनिक संवेदना विविध दृष्टिकोणों से पाठकों के चित्त को झकझोर देती है।

इस देश में स्वतन्त्रता के उपरान्त सेवा, त्याग, देशभक्ति सामाजिक मूल्यों के स्थान पर शोषण हेतु स्वार्थ–परता, भ्रष्टाचार, दहेजखोरी, अर्थ लोलुपता जैसे विपरीत मूल्यों का विकास होने लगा है। 'रेणु' का 'आत्मसाक्षी' कहानी संग्रह इन्हीं मूल्यों को चित्रित कराता है। इसमें सबसे प्रभाव शाली चरित्र 'नैना जोगिन' की रतनी का है। 'रतनी एक प्रबल, अधड़ के समान, कठिन, द्वर्दन्य व्यक्तित्व है। उस सांवली सलौनी लम्बी किन्तु पुत्रहीना, पूर्ण यौवना को यदि पुत्र नहीं हुआ तो वह सारे गांव को तबाह कर देगी। शोषण के सन्दर्भ में कहानी में नया मोड़ तब आता है जब रतनी का नारीरूप निक्षर कर सामने आता है। आर्थिक विपन्नता के बावजूद वह परम्परागत नैतिक मूल्यों को चुनौती देती है।

[111] फणीश्वर नाथ रेणु, प्रथम कहानी संग्रह, रसप्रिया, पृ.सं.–11

स्वातन्त्रयोत्तर विकास की राजनीति में बदले हुये गांव और बिना बदली ग्रामीणों की आर्थिक स्थिति से संबंधित नारी शोषण के प्रश्नों को कथाकार शिवप्रसाद सिंह ने अपनी कहानियों में विविध कोणों से उठाया है। गंगा तुलसी कहानी में 'सुनील' गीत के जमींदार की महाराजिन का पी0ए0 पास घंटा है जो बेकार थे। उसकी विधवा ब्राह्मणी माँ को आर्थिक अभावों से प्राप्त होने के कारण पुत्र की शिक्षा के लिए जमींदार से अवैध संबंध रखने पड़ते हैं। इस कहानी से गांव की वर्तमान विषमता गरीबी और निम्न वर्ग की असुरक्षा के प्रश्न मन को अपने लगते हैं।[112]

2. शिवप्रसाद सिंह

शिवप्रसाद सिंह के अन्य कहानी संग्रह 'इन्हें भी इन्तजार है' की 'नन्हों', 'बेइया', 'इन्हें भी इन्तजार है' आदि कहानियों में कहीं अभिशाप्त वैधव्य की नियति से जूझती जीवन की ढलान पर अडिंग गांव की विधवा लहुजाइन नन्हों का चित्रांकन है तो कहीं वैश्या 'सुभागी' 'के शुद्ध निर्मल ह्रदय का दिग्दर्शन जो अपने जीवन के एकाकीपन की यंत्रणा को सहती हुई तमाम गाड़ियों को हरी झंडी दिखाकर विदा करती रहती है पर उसके जीवन की गाड़ी को हरी झंडी नहीं मिलती ऐसा लगता है कि जैसे शोषण नारी की नियमित है। इसीलिए तो वह पुरुषों के पोषण के लिए अपना शोषण स्वीकारती है।

'मुर्दा सराय' नामक कहानी संग्रह में शिव प्रसाद सिंह जी की एक दर्जन कहानियां संकलित है। जिनमें ग्रामीण परिवेश को जीवन्त रखते हुये नगर बोध की आधुनिकता को दूर रखा गया है। इसी संग्रह की 'धारा' कहानी में एक मुसहर काली गंदी लड़की 'तेउरा' को कथाकार देखता है। जिससे कहानी का नैरेटरावर्णन करने वाला। चार अलग–अलग परिस्थितियों में मिलता है। पहली बार की हंसती खेलती अल्खड तिउरा दूसरी बार मुनीम के यहां काम में पूरे परिश्रम से जूटी तिउरा है। तीसरी बार के वर्णन में अपने ही परिश्रम की कमाई से मोल लेकर साड़ी ब्लाउज पहनना उसके लिये अपराध बन जाता है और वह अपने पिता के द्वारा

[112] कहानी संग्रह–कर्मनाशा की हार, शिवप्रसाद सिंह कहानी, 'गंगा तुलसी' गुर्दा सराया कहानी संग्रह शिवप्रसाद सिंह कहानी 'धारा'

पीढ़ी जाती है और चौथी बा रवह बहकती, श्रम–सिक्सा, तिउरा अपने ही नवजात शिशु के साथ स्टेशन पर भीख मांगते दिखाई देती है। शहरी जीवन के प्रति माह में जकड़ती गरीबी और शोषण की विवशता कभी समाप्त नहीं होती। पैसे के लिये भटकती हुई नारी अलग–अलग रूपों में शोषित होती रहती है।

आधुनिक हिन्दी कहानी को प्रतिष्ठा प्रदान करने वाले लेखकों में रामदरश मिश्र का नाम भी उल्लेखनीय है। उनके कहानी संग्रह 'बसन्त का दिन' में संकलित 'आखिरी चिट्ठी' एक बहुचर्चित कहानी है। 'प्रभा' के माध्यम से लेखक ने नारी यातना तथा शोषण की भावना को सम्पूर्ण रूप में सामने रखा है। भाई की ओर, पति की ओर से और सारी दुनिया की ओर से वह यातना और शोषण सहती है। प्रस्तुत कहानी में लेखक ने नारी के स्वतन्त्र व्यक्तित्व, स्वाधीनता और उसकी स्वतन्त्र आजीविका के विविध प्रश्न उठाये हैं।

'अकेला मकान' में ऐ ऐसी जुझारू, जवान, पुत्रहीन, पति–परित्वक्ता नारी के कुण्ठित नारीत्व में छिपी असीम करूणा और सेवा को व्यक्त किया गया है। जो आत्मीयता पूर्ण सम्बन्धों में हर प्रकार के शोषण को धन्य मान लेती है।

3. धर्मवीर भारती

धर्मवीर भारती की कहानियों में नयी कहानी को नई दिशा प्रदान करता हुआ एक सहपस्पर है। जिसके द्वारा तंग गलियों के सजीव जीवन को व्यक्त किया गया है। बन्द गली का आखिरी मकान शीर्षक संग्रह की पहली कहानी 'गुलकी' बन्नो है जो नारी शोषण के अनेक दृष्टिकोणों से महत्वपूर्ण कहानी है। एक रखेल रख लेने के बाद गुलकी का पति उसे घर के निकाल देता है। वह मैहर में आकर लड़कों के उधम भरे माहौल के बीच सब्जी की दुकान लगाने लगती है। किसी तरह जीवन को घसीटती गुलकी की इस दुकान को धंधा हुआ बेरहमी से उजाड़ देती है। जीविका का एक मात्र साधन इसी लिये नष्ट हो गया कि धंधा को उससे कोई लाभ नहीं हो रहा था। निराश होकर गुलकी महीने में बीस दिन उपवास करके सत्ती के यहां शरण ले कर भीख मांग कर अपना गुजारा करती है। इसी बीच घर में सेवा करने वाली की आवश्यकता पड़ने पर गुलकी का पति उसे लेने के लिये आता है।

सीधी सादी पति और समाज से त्रस्त एवं उपेक्षित गुलकी बिना किसी अभियान के नारीत्व और मातृत्व के झूठे स्वप्न संजोये हुये पति के कदमों में गिर पड़ती है और एक बार फिर स्वयं शोषित होने के लिये चल देती है। इसी बीच धात देखकर धंधा पूछा अपने चबूतरे का किराया न दे सकने के कारण सौ रुपये की दलाली मार कर उसका पैतृक घर मिट्टी के मोल उछला लेती है। पारिवारिक एवं आर्थिक शोषण को सहती हुई अपनी ही कहलाने वाली धंधा पूछा के द्वारा पीड़ित थे।[113]

4. हिमांशु जोशी

नई कहानी के अभ्युदय काल में हिमांशु जोशी का नाम उभर कर सामने आया है। इनकी कहानियों में ग्रामीण जीवन एवं नगरीय जीवन का अनुभव आकर्षक है। नारी शोषण की पीड़ा के विविध आयामों में नारी की पीड़ा, अनख्याही गंवार लड़की की पीड़ा और गहमा गहमी में जीने का प्रयास करते हुये वैयक्तिक और पारिवारिक जीवन की पीड़ा का चित्रण है। आधुनिक महानगरीय जीवन की भयाबहता में मध्यम वर्गीय व्यक्ति अपने अस्तित्व आदर्श और नैतिकता के लिए लड़ता हुआ एक घिसे पिटे यंत्र के समान शोषण में भी जीने के लिए विवश है। 'रथ चक्र' नामक संग्रह की कहानी 'देखे हुए दिन' में आम लोगों के सुख दुख से जुड़े हुये समाज सेवा जीवी व्यवसायी ऐसे नेता भी है जो खादी के उज्जवल वस्त्र धारण किए हुए नारी आश्रमों को कामोपभोग केन्द्र बनाकर मसीहा बनने का ढोंग करते हैं। 'कोई एक मसीहा' कहानी में उधर से चुस्त–दुरस्त व्यवस्था होते हुए भीतर ही भीतर हमारी कन्याओं के देह–व्यापार का कोढ़ फेल रहा है। सुरेश भाई और लाभुदेन के बहाने लेखक नारी शोषण के पूरे ढांचे को उखाड़ कर रख देता है।

'भेड़िए' शीर्षक कहानी में जोशी जी ने मध्यम वर्गीय जीवन जीने वाली नारी पर पड़ने वाली घर एवं बाहर की दोहरी मार का वर्णन किया है। जोशी जी की अन्य कहानी 'जीना–मरना' में गांव में, आदिवासी क्षेत्रों में, आंचलिक और पिछड़े धर्मों में व्याप्त गरीबी के साथ, रोमांचक और अन्तहीन महानगर के अल्प वेतन भोगी

[113] कहानी संग्रह बंद गली का आखिरी मकान कहानी गुल की बन्नो धर्मवीर भारती पृ.सं.–4

मध्य वर्गीय गरीबी की पीड़ा का साक्षात्कार होता है। माँ–बाप की मृत्यु के पश्चात् सारी 'धरसा' की पीड़ा नारी शोषण के सन्दर्भ में पाठकों के भय को छू लेती है। हिमांशु जोशी वास्तव में पीड़ा और संवेदना के कथाकार है। मानवीय अधिकारों और सामाजिक न्याय से वंचित दीनहीन और गरीबों के साथ नारी को भी सामाजिक, आर्थिक और पारिवारिक शोषण, उत्पीड़न और अत्याचार अनाचार का चक्र सहना पड़ता है।

मेहरून्निता परवेज के संग्रह 'आदम और एव्वा' में संकलित उन्नीस कहानियों में अधिकांशतः असमर्थ पिताओं की अभामिनी कन्याओं की पीड़ा, पिता–पुत्र के रिश्ते और दोनों के बीच विद्रोह, माँ–पुत्री की स्थितियों आदि को गर्व स्पर्शीय, व्यापक दृष्टिकोण से उभारा गया है। पति के अभाव की पीड़ा मध्य वर्ग में अधिक तीखी है। नारी की यह स्थिति, जिसमें वह स्वयं नौकरी करने के लिए विवश है, कहीं बच्चों के लिए, तो कहीं असमर्थ पति की प्रतिष्ठा के लिए और कहीं परिवार की जीविका के लिए। परवेज की हर कहानी में नारी–नियति के नये आयामों का उद्‌घाटन किया गया है। नारी कहीं बेटी है, कहीं माँ है कहीं पत्नी है, कहीं प्रेमिका है, कहीं भिखारिणी है, सबकी पीड़ा का लेखिका ने करुण रूप में साक्षात्कार कराया है। किसी कहानी में कोढ़ी पति का वर्णन है एक अन्य कहानी में लकवा ग्रस्त पति का। असमर्थ विपन्न और वृद्ध पिता की अनब्याही बेटियों का संदर्भ पीड़ा से परिपूर्ण है। मेहरून्निता सरपंच ने समाज सापेक्ष पीड़ा का चित्रण किया है। उनके पात्र गरीबी से उकरते हुए अपनी आबरू तो सहेज कर रखे हैं। 'सीढ़ियों का ठेका' कहानी में करीबन और फातिमा खेरात पर गुजर करने वाली मुस्लिम नारियां है। दोनों में प्रतिस्पर्धा है। सामाजिक जीवन में शोषण के कडुबे यथार्थ के प्रति तटस्थ रहती हुई दोनों स्त्रियों की आबरू के प्रति आशंका का लेखिका ने मार्मिक वर्णन किया है।

नारी–शोषण के सन्दर्भ में समाज में नारी की दशा सदा से ही शोचनीय रही है। साहित्य में भी उसके दलित और शोषित व्यक्तित्व की समय–समय पर साहित्यकारों ने हीनभावना जन्य कुण्ठा, पीड़ा और संत्रास को व्यक्त किया है। प्राचीन परिवेश और पुराने मूल्यों में जीती हुई नारी आर्थिक अभाव से ग्रस्त होने के

कारण परिवार और समाज में हीन स्थिति को प्राप्त थी। स्वतन्त्रता के पश्चात् यद्यपि साहित्य में भी आन्दोलन का प्रभाव पड़ा, फिर भी उभरता हुआ पूँजीवाद सामन्ती ढांचे को नहीं तोड़ सका है। स्त्रियों की दशा और भी विचित्र हो गई है। जौहर और सती–प्रथा के आदर्शों का विरोध हुआ है, लेकिन वधू–दहन की नई आग जलने लगी है। पूँजीवादी समाज में विवाह व्यापार बन गया है। नारी–पुरुष के सम्बन्धों में अर्थजन्य तनाव चलना अधिक बढ़ गया है कि अनर्थ से बचने के लिए सन्तुलन बिठाना कठिन हो गया है। बदलती हुई सामाजिक, आर्थिक और मनोवैज्ञानिक स्थितियों के सन्दर्भ में स्त्री और पुरुष के परस्पर सहयोग टूट रहे हैं। शिक्षित और आर्थिक रूप से स्वतन्त्र नारी आज के नये पूँजीवादी सामन्ती ढांचे में कुछ दूसरी तरह से परेशान है। साहित्य में उसका शोषित, मुक्त, आत्म निर्भर, टूटा में अकेला हुआ रूप मिलता है। महानगरीय संकटग्रस्त सामाजिक स्थिति से उबरने के लिए नारी–मुक्ति के आन्दोलनों के द्वारा पुरुष के शोषण से मुक्त होकर उससे बराबरी का दावा करने वाली नारी भी है। स्वाधीनता के बाद साहित्य में नारी का पराधीन और स्वाधीन रूप चौंका देने वाला है। पूँजीवादी व्यवस्था में दोनों रूपों में स्त्री शोषण परक विषमताओं का सामना करती है। तरक्की पाने के लिए उलका ही पति उसे अपने अवसर को सप्लाई करना चाहता है। व्यापारिक समझौतों में उसे सम्बद्ध पार्टी को दारू भी पिलानी पड़ती है। पराधीन रहते हुए स्वाधीनता का स्वांग करना पड़ता है। यद्यपि आधुनिक जीवन पद्धति के विकास के साथ–साथ साक्षरता के प्रसार से नारी में आत्मनिर्भरता बढ़ी है, फिर भी उसके जीवन की स्थितियां अधिक जटिल और चुनौती पूर्ण हो गयी है। स्वतन्त्रता के नाम पर नारी दिशाहीन हो गई है। सुविधा सम्पन्न वर्ग की कुण्ठाओं और जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं से लड़ने का दर्द निरन्तर बना हुआ है। शोषण के लिए नारी के व्यक्तित्व को विघटित करने वाले बाहरी और आन्तरिक कुचक्र है। व्यावहारिक जीवन में अपनी अस्तित्वहीनता का संकट उसे निरन्तर झेलना पड़ता है।

निम्न वर्ग के आर्थिक शोषण के सन्दर्भ में 'मंजुल भगत' की 'अनारी' चर्चित कहानी है। लता शुक्ल की 'अमरो' एक सात आठ साल की लड़की है जो परिवार के भरण पोषण के लिए दिन रात काम में जुटी है और अन्त में बीमार पड़ने पर

अर्थाभाव के कारण उचित डाक्टर सहायता न मिलने पर मर जाता है। गठरियों में माँ–बाप के लिए खाने का सामान जमा करके रखा है, जिसे देखकर माँ फूट–फूट कर रो पड़ती है।

5. मन्नु भण्डारी

मन्नू तिवारी की 'नशा' शीर्षक कहानी में निम्न वर्ग की विवशता का सशक्त चित्रण है। शंकर को अपनी पत्नी आनन्दी के द्वारा कुटाई पिलाई की मजदूरी से मिले पैसे से नशा करने का नशा है तो आनन्दी को भी अपने पति के कार्यों में पिसकर स्वयं भूखे रहकर भी मजदूरी के पैसे उसके हाथ पर डाल देने का नशा है। इस स्थिति से ऊबकर आनन्दी बेटे के यहाँ जाकर सुखमय जीवन बिताने लगती है। वहाँ से भी सिखाई आदि के परिश्रम से प्राप्त पैसों को मनीआर्डर द्वारा पति शंकर के पास भेज देती है। 'नशा' कहानी में पति द्वारा शोषित नारी की प्रेम के प्रति प्रतिबद्धता स्थापित की गई है। मध्यम वर्गीय नारी के अकेलेपन के बोझ और दुर्बह उत्तरदायित्व को कुन्ती के माध्यम से मन्नू भण्डारी ने 'क्षय' नामक कहानी में व्यक्त किया है। क्षय ग्रस्त पिता की उपेक्षा और अपमान सहते हुए अल्प वेतन भोगी अध्यापिका कुन्ती ट्यूशन आदि करके अपने उत्तरदायित्व को निभाने के लिए प्रतिबद्ध है।

धर्मवीर भारती, कमलेश्वर, निर्मल वर्मा दूधनाथ सिंह, शिवप्रसाद सिंह, रामदरश मिश्र, अमरकान्त, मन्नू भण्डारी, मंजुल भगत आदि सभी का ध्यान मध्य एवं निम्न वर्ग की नारी की ओर रहा है। स्वातन्त्रयोत्तर कहानी में नारी के अन्तर्मन की वृत्तियों, प्रवृत्तियों, रूचियों की यथार्थ अभिव्यक्ति मिलती है। टूटते संयुक्त परिवार, आर्थिक संघर्ष जीवन की कठिनाइयां मूल्यों में परिवर्तन ला रहे हैं, फिर भी जीवन के शाश्वत मूल्य समाप्त नहीं हो पाये। स्वतन्त्रता ने नारी के व्यक्तित्व के विकास को नया मोड़ तो दिया है लेकिन आज भी नारी पारिवारिक सामाजिक आर्थिक या मनोवैज्ञानिक रूप से, स्वेच्छा या दबाव से पुरुष के शोषण का साधन बनी हुई है।

नौकरी पेशा नारी समाज में असमायोजन से त्रस्त होकर अपनी महत्वाकांक्षाओं को धूल धूसरित होते देख रही है। शोषण से बचने के लिए किसी

दशा की खोज करते हुए यह संदभ्रमित और निराशा हो चुकी है। नारी के कन्धों पर पुरुष के समान दायित्व आ पड़ा है। वह नौकरी करते हुए घर के दायित्व को भी छोड़ नहीं पाती। परेशानियों से घबरा कर यदि नारी नौकरी छोड़ना भी चाहती है तो पति या परिवार के अन्य सदस्य उसे छोड़ने नहीं देते, वह नौकरी करने को विवश है। आज वह आर्थिक शोषण की विवशता में जकड़ चुकी है। नौकरी पेशा नारी की इसी विवशता को 'मन्नू भण्डारी' की 'आकाश के आइने में'[114] देखा जा सकता है। आज को त्रासदायक परिस्थितियों में वह अपने आपको समाज के अन्तर्गत समायोजित करने में प्रयत्नशील तो है पर उसके दम लड़खड़ा जाते हैं। आर्थिक और वैचारिक विषमता, रूचियों और आवश्यकताओं की भिन्नता, नई और पुरानी पीढ़ी के संघर्ष के बीच अपने अस्तित्व को बचाये रखने के लिए त्रस्त और शोषित नारी निरन्तर प्रयत्नशील है।

नारी के आर्थिक शोषण के विविध आयामों में कहीं दहेज की प्रचुर मांग पूरी न होने पर शिवानी की 'तिल पात्र' कहानी की नायिका जला दी जाती है, कहीं इलाचन्द्र जोशी की 'डाक्टर की फीस' कहानी की युवती जमना का पति धन के लालच में उसे वैश्या बना देता है। भगवती चरण वर्मा ने भी 'एक अनुभव' में आर्थिक विपन्नता को ही वैश्यावृत्ति का मुख्य कारण माना है। वर्मा जी का विचार है कि जब तक दुनिया का धनी वर्ग शोषण करेगा, नारी का सतीत्व सुरक्षित रहना तब तक असम्भव है। आर्थिक स्वावतलम्बन आज नारी की स्वतन्त्रता के लिए उसके जीवन की आवश्यकता बन गया है, फिर भी उसकी इसी आर्थिक स्वतन्त्रता ने उसके आर्थिक शोषण को और अधिक बढ़ावा दिया है। शहरी सभ्यता में कामकाजी महिलाओं का आज का अभाव नहीं है, जो आधुनिक भाषा में 'वर्किंग वीमेन' कहलाती है। आज के कथाकारों में इस विषय का प्रयोग अपनी कहानियों में किया है। फणीश्वर नाथ 'रेणु' जैसे लेखक ने इस विषय को लेकर 'दीर्घतया' उपन्यास की रचना की है। मोहन राकेश मिसपाल' को इस राह से गुजार चुके हैं। 'रोजगार' में मिसदारवाला एक पारसी युवती है जो अपने भाई 'जमशेद' की देखरेख करती है। उसके लिये नौकरी करती है। जमशेद कुछ भी नहीं करता। मिसेज एडयडूस के

[114] हिन्दी कहानी, दो दशक की यात्रा, डॉ. रामदरश मिश्र, पृ.सं.–99.

होटल में 'पेइंग गेस्ट' बन कर पड़ा रहता है। भातृ स्नेह से बंधी हुई मिस दारवाला उसका व्यय भार वहन करने के लिये नौकरी के साथ अनैतिक आचरण में भी उलझी है। इसे मिस दारवाला की विवशता कह सकते हैं। मिश्र दारवाला को तरह–तरह की टिप्पणियां भी सुननी पड़ती है। मिस्र दारवाजा अग्रसर अपने भाई को देखने आती है, यही होटल का बिल चुकाती है। भाई पर ममता इतनी रखती है, कहती है, 'इसे सुबह एक प्यासी दूध ओर दे दिया करो।... मैं उसके पैसे अलग से दे दिया करूंगी।' जब कि भाई कामचोर है, नालायक है। होटल मालकिन से बेबास झगड़ता रहता है।'

6. रामदरश मिश्र

'मिस्र दारवाला अपनी मजबूरियों से घिरी है। भाई का पेट भरने के लिये नौकरी करती है। उनके जीवन के अनैतिक पक्ष की ओर इंगित करती हुई मिसेज एडवर्डस बड़बड़ाते हुये जमशेद से कहती है... 'तू शरम से डूब नहीं मरता। बहन के पाप की कमाई से रोटी खाता है, और मेरे सामने आँखे तरेरता है। यू है तेरे जैसे आदमी पर। धू..धूकृ।'[115] मोएन रोकेश ने कामकाजी महिलाओं को अपने साहित्य में काफी स्थान दिया है। वे उनकी मनः स्थितियों से पूर्णरूपेण परिणित है। नारी आर्थिक दृष्टिकोण से आत्मनिर्भर होना चाहती है पर इससे समस्याओं का हल नहीं हो पाता। इसके विपरीत कई नई समस्याएं जन्म ले लेती है, कई तरह के तनाव उत्पन्न हो जाते हैं और नारी को मानसिक यातना से गुजरना पड़ता है। उसे समाज की अपमानना का पात्र बनना पड़ता है।

इन्हीं की 'सुहागिने'[116] कहानी में नौकरी छोड़ने की इच्छुक मनोरमा पति तथा अन्य सदस्यों के कारण नौकरी करने की विवशता से टूट चुकी है। उसके घर में काम करने वाली काशी और उसके शोषण में कोई अन्तर नहीं है। अर्थ पर आधारित जीवन दृष्टि शोषण को जन्म देती है। भगवती प्रसाद बाजपेयी जी ने अपविधिता को भारतीय संस्कृति की बिडम्बना कहा है। वे शोषण की समर्थक नीति को बदलना चाहते हैं। आर्थिक विषमता किसी न किसी धरातल पर शोषक और

[115] मोहन राकेश, पारिस, रोजगार।
[116] मोहन राकेश, रोय रेशे, पृ.सं.–56

शोषित वर्ग अवश्य खड़े कर देती है। नारी जीवन की समस्त विडम्बनाएं उसकी आर्थिक अनुपादेयता पर आधारित है। आर्थिक विषमता ने नारीत्व का भी शोषण किया है। बाजपेयी जी की कहानियों की नारी जब भी वैश्या बनी है, उसके पीछे आर्थिक विवशता ही है। उसका एक मात्र कारण यह है कि समाज ने उसे मरने भी नहीं दिया, और वैश्यावृत्ति के अतिरिक्त उसे पैरों पर, खड़े होने का कोई साधन नहीं मिला। 'हूदगति'[117] की फूल इसका सजीव चित्र है। आत्महत्या का प्रयास असफल होने पर वह वैश्या बनने को विवश हो जाती है। उनकी कहानियों के नारी पात्र आर्थिक शोषण एवं उत्पीड़न की व्यथा से साक्षात्कार करते हैं। साक्षोत्तर कहानीकारों की श्रृंखला में नित्यमा सेवती, की टुप्वा कहानी में नारी शोषण के लिये नारी की भावात्मक दुर्बलता के साथ उसके आर्थिक अभाव को भी उत्तरदायी माना है। पिता की मृत्यु के उपरान्त छोटे भाई–बहनों का भार नायिका पर आ जाता है। निरन्तर संवर्षों की निरर्थकता से उसमें खीज, क्रोध और झुंझलाहट इतनी भर जाती है कि वह चाह कर भी अपनी परिस्थितियों में कहीं परिवर्तन नहीं कर पाती। भाई बहन समर्थ हो चुके हैं, उन्हें अब दीदी से कोई मतलब नहीं। उस दिन गलती से ज्यादा गोलियां खाने से वह होश में नहीं आ रही थी। सभी घबरा उठे थे, डॉक्टर की तसल्ली देने पर भी कोई आश्वस्त नहीं था। बहन भाई से कह रही थी, 'दीदी की बात सुन बगैरह कहां रहती है, यह भी कुछ मालूम हैं ? अब कुछ हो गया तो ?' उसके होश में उसने सुना था।[118] और वह अन्दर तक टूटती हुई भी जल्दी सब भुलाकर भाई–बहनों से जुड़े रहने को विवश है। पिता की मृत्यु के पश्चात् सम्पूर्ण परिवार का पोषण करने वाली युवती की परिवार में कोई अपेक्षा नहीं, सम्मान नहीं, सुरक्षा नहीं और अब आवश्यकता भी नहीं।

इस प्रकार हिन्दी कहानियों में नारी शोषण की पृष्ठभूमि में आर्थिक आवश्यकता एक प्रमुख कारण रहा है। नारी का शोषण कहीं छोटे भाई–बहनों के सुखद भविष्य की परिकल्पना के आधार पर किया गया तो कहीं आवश्यकताओं की दुहाई देकर किया गया। कहीं परिवार की असहनीय उपेक्षा ने उसे वैश्यावृत्ति के

[117] स्नेह वासी और लौ, हृदगति, कहानी, भगवती प्रसाद बाजपेयी, पृ.सं.–37
[118] खामोशी को पीते हुए, निरूपमा सेवती, पृ.सं.–43

मोड़ पर ला खड़ा किया तो कहीं वैधव्य के लांछनों ने। आज की अर्थ पर आधारित व्यवस्था में तो नारी को पारिवारिक 'स्तर' सुधारने का साधन मान लिया गया तो कहीं वह केवल वह अर्थोपार्जन करने वाली मशीन बन कर रह गई। विविध युगों के कहानीकारों ने कहानी के बदलते हुये प्रतिमानों के आधार पर अपनी कहानियों में समाज के उध्व, मध्यम व निम्न सभी वर्गों के परिवारों में नारी के शोषण एवं उसकी अस्तित्व हीनता का सजीव चित्रण किया है। इनमें सर्वाधिक शोचनीय स्थिति मध्यम वर्गीय नारी की रही है। आर्थिक सवर्ग एवं नौकरी पेशा होने की विवशता ने नारी जीवन में अधिक निराशा, कुण्ठा व असामंजस्य की स्थिति उत्पन्न कर दी है और घर तथा बाहर की दो नावों पर पैर रखे हुए वह और अधिक असुरक्षित हो गई है और उसका मनोबल टूटने लगा है।

चतुर्थ अध्याय

हिन्दी कहानियों में नारी के पारिवारिक शोषण

व्यक्ति और समाज के बीच का सेतु या व्यक्ति और व्यक्ति के बीच के सामाजिक सम्बन्धों की इकाई परिवार है। इसी केन्द्र बिन्दु पर बड़े होकर स्त्री–पुरुष को देखा जा सकता है। परिवार समुदाय ठीक उसी प्रकार आवर्तन में घूमता है, जिस प्रकार जीवनीत्पत्ति और विकास का आवर्तन होता है। एक इकाई के रूप में परिवार का स्वरूप अक्षुण्य रखता है, किन्तु इसके सदस्य तथा परस्पर सम्बन्ध रखने वाले क्रिया कलाप निरन्तर परिवर्तनशील रहते हैं।

प्रेमचन्द्र जी की 'अलगोझा' कहानी में संयुक्त परिवार की मुलिया इसी कारण क्रोधित रहती है कि उसका पति तो मेहनत करता था, पर पन्ना रानी और उसके बच्चे बैठ कर खाते थे।[119] नित्य प्रति के सास–बहु के झगड़े तथा नारी के गृहकार्य में दखलनदाजी और सास के द्वारा दिन–रात इच्छानुसार बहु से सेवा की अपेक्षा करना आदि संयुक्त परिवार के ऐसे कारण रहे हैं, जिनमें उलझी हुई नारी भावनात्मक और मानसिक रूप से घुट–घुट कर जीती रही हैं परन्तु आज स्थितियों में परिवर्तन आ गया है। संयुक्त परिवारों की परम्परा दिन–प्रतिदिन टूटती जा रही है। प्रेमचन्द्र की कहानी 'झाँकी' का नायक कहता है अब जमाना बदल गया है, अतः रस्मोरिवाज भी बदल जाने चाहिए। अगर अम्मा ने अपनी सास की साड़ी धोई, उनकी घुड़कियां खाई है। तो आज वे पुराना हिसाब बहू से क्यों चुकाना चाहती है।

क्या साहित्य के क्षेत्र में परिवार का परम्परागत ढाँचा प्रेमचन्द्र के समय से ही थरथरा उठा था। संयुक्त परिवार की ऐतिहासिक आवश्यकता समाप्त हो चुकी है स्वयं प्रेमचन्द्र को यह समझने में कम समय नहीं लगा। उन्होंने 'शान्ति' 'बड़े घर की बेटी' और 'शंखनाद' की जिद की 'सुजान भगत', 'सदा सैर गेहूं' और विशेष रूप से गोदान में छोड़ दिया और यह स्वीकार कर लिया कि नारी का शोषण होना है और परिवार टूटना है। कुछ क्रान्तिकारियों को छोड़कर, सामाजिक पिछड़ेपन और

[119] मुंशी प्रेमचन्द्र, मानसरोवर, भाग–एक, पृ.सं.–166

अशिक्षा के कारण नारी प्रायः अपने पति के साथ जाने से इंकार कर देती है। वह जहाँ हैं वहीं स्थित रहकर अपनी मर्यादा और लक्ष्मण रेखाओं को निभाती हुई मौखिक सहानुभूति और प्लेटोनिक प्यार देती है, जो इस युवक की कुण्ठा को और गहरा जाता है।[120]

अज्ञेय, जैनेन्द्र और यशपाल की प्रारम्भिक कहानियों में हम यह पाते हैं कि उनके पुरुष पात्र नयापन ढूंढने के लिए शिक्षा और ट्रेनिंग के लिए परिवार की मोह ममता छोड़कर बाहर निकल रहे हैं, जिसके कारण नारी लक्ष्मण रेखा को निभाती हुई शोषित होती रहती है।

शिवप्रसाद सिंह की 'एक यात्रा सतह के नीचे' कहानी में अवधू अपनी माँ के भय से इतना पीड़ित है कि अपनी पत्नी तक से बातचीत नहीं कर सकता।[121] उसकी पत्नी भी सास के इस भय का शिकार है। वह दिन भर काम काज करते–करते थक जाती है परन्तु परिवार में उसके किसी भी परिश्रम की सराहना नहीं की जाती है। यह पारिवारिक जनों द्वारा नारी का शोषण ही है।

शिवप्रसाद सिंह के छह कहानी संग्रह आधुनिकता के क्रमिक विकास को ग्राम्य जीवन की पृष्ठभूमि पर प्रस्तुत करते हैं। कथाकार जिस ग्राम्य जीवन के परिवार को उठाता है वहाँ जिन्दगी रोती नहीं, मुस्कराती भी है। 'आर–पार' की 'माला' में रेखा चित्रात्मक कहानी की प्रधानता है। 'नई पुरानी तस्वीरें' में क्षमाशील हुआ का परिवार में एक विशिष्ट प्रकार का रूप देखा जा सकता है। इसी प्रकार दादी माँ और 'उपथाइन मइया' में भी पुरानी पीढ़ी की विशिष्ट नारियों का चित्रण है। इस प्रकार गांव के परिवार का एक समग्र रूप इन कहानियों में उभरता है जो प्रेमचन्द्र और अज्ञेय के बीच की रिक्तता को कालान्तर में दूर करता है।

कुल मिलाकर शिवप्रसाद सिंह ने कथा साहित्य में प्रेमचन्द्र परम्परा की जो गतिशील और युगीन कड़ी प्रस्तुत की है, वह बहुत ही सशक्त है। शिवप्रसाद सिंह ने ग्रामीण परिवार, उनकी अनुभूतियों तथा संवेदनाओं को ऐसे उपमानों और संकेतों से चित्रित किया है, जो कहानी में एक नयापन लाते हैं।

---

[120] एक दुनिया, समानान्तर, पृ.सं.–30

[121] उसने घर के.... गली में आ गया। मुरदा सराय, पृ.सं.–107

इस युग के अधिकांश कहानीकारों ने नारी और उसकी विविध समस्याओं को अपनी कहानियों में प्रस्तुत किया है। नारी का कार्य क्षेत्र पारिवारिक ही था अतः इस युग का कहानीकार सामाजिक समस्याओं को परिवार के घेर में ही देखता है। यही कारण है कि इस युग की सामाजिक कहानियों में समाज का तटस्य विश्लेषण न होकर परिवार की समस्याओं का चित्रण हुआ है। प्रेमचन्द्र युग में अशिया, पर्दाप्रथा, बाल विवाह, विधवा विवाह आदि सामाजिक कुप्रथायें नारी समाज की समस्यायें थी। यंग महिला लिखित 'कुए में छोटी बहू' एक पारिवारिक कहानी है, इसमें धार्मिक उत्सवों में होने वाली दुर्घटना का वर्णन किया गया है, जो कि परिवार के लिए अभिशाप है। लेखिका का कथन है कि लज्जा शील बहुओं की कथा द्वर्दश होती है, जहां उसका एक मात्र धध्या भर जाता है तथा अनेक स्त्रियों के गहने चले जाते हैं। इसी यंग महिला लिखित एक अन्य कहानी 'दुलाई वाली' नारी जीवन से सम्बन्धित रचना है। यह एक पारिवारिक कहानी है। इस कहानी में पति के पृथक हो जाने पर नवल की पत्नी का रेल में नारी की तत्कालीन सामाजिक स्थिति की ओर संकेत करता है।

भारतीय पारिवारिक जीवन के भिन्न–भिन्न रूप तथा पक्ष है। धर्म, जाति सम्प्रदाय तथा वर्ग के आधार पर भारतीय पारिवारिक जीवन जिस रूप में सामने आता है उसमें कहानी निर्माण की बलवती प्रेरणाएं है। प्रत्येक परिवार में सदस्यों के पारस्परिक सम्बन्ध की सीमा निर्धारित नहीं की जा सकती। भिन्न–भिन्न परिस्थितियों में परिवार के सदस्यों का व्यक्तिगत तथा पारस्परिक आधार व्यवहार कहानीकारों को कहानी रचना के लिए पर्याप्त सामग्री देता है।

कमला देवी चौधरी की पारिवारिक जीवन की कहानियों में विषय की अनेक रूपता है तथा इनकी सब कहानियों में भारतीय पारिवारिक जीवन और उसकी विविध समस्याओं का चित्रण किसी न किसी रूप में विद्यमान है। इनके स्त्री पात्र दरिद्रता की चक्की में पिसने वाले और सतीत्व की रक्षा में सतूत प्रयत्नशील नारियां है। इन्होंने अछूत परिवार की निजी समस्याओं एवं उनके शोषण को ही अपनी कहानियों में प्रमुख स्थान दिया है। उनकी कहानी 'साधना का उन्माद' में एक ऐसी नारी का वर्णन है जो प्रेम से वंचित है। परन्तु सांसारिक पदार्थ सभी उपलब्ध है।

'भ्रम' शीर्षक कहानी में अन्तर्जातीय विवाह के द्वारा नारी के शोषण को दिखाया गया है। पति वंचिता रमणी के हृदय का चित्रण 'वीणा' में और पति–पत्नी के पारस्परिक कर्तव्यों का संकेत 'कर्तव्य' कहानी में दिया गया है। विधवा समस्या पर 'कन्यादान' तथा 'गीता' कहानियों में प्रकाश डाला गया है। संतान हीन स्त्री की कैलाशा दीदी। पति–पत्नी का संयम पिकनिक। नारी हृदय की अन्तपैसना अधूरा चित्र, भारतीय नारी का नारीत्व हार, आदि पारिवारिक शोषण के विषय इनकी कहानियों में आये हैं। वस्तुतः इनकी कहानियों में भारतीय परिवारों के वर्तमान समस्याओं के एवं नारी शोषण के विभिन्न आयामों को विशेष स्थान दिया गया है।

पारिवारिक जीवन को चित्रित करने वाली एवं नारी शोषण को पारिवारिक संदर्भ में प्रस्तुत करने वाली कहानियों में ऊषा देवी मिश्रा का विशिष्ट स्थान है। इनकी कहानियों में भारतीय पारिवारिक जीवन अपने विभिन्न रूपों में प्रस्तुत हुआ है। जो समस्यायें भारतीय परिवारों के सामने नित्य आती है तथा जिनके कारण परिवार में स्त्री का शोषण होता है उसका चित्रण इनकी कहानियों में भरपूर है जैसे– स्त्री रूप और उसका मोह, अन्तर्जातीय विवाह, परिवारों की प्रचलित विवाह पद्धति, वैश्यावृत्ति, परिव्यक्ता नारी, विधवा जीवन आदि विषय इनकी कहानियों में लिये गये हैं।

स्त्री भावना के शोषण का चित्रण करने वाली कहानी 'रहस्यमयी' में बताया गया है कि परिवार में विधवा का जीवन सुखमय होता है, जिसका अन्त प्रायः आत्महत्या में होता है। पति मिलन की कहानी आशा वियोगिनी नारी का सम्बल है। 'ललिता का डायरी' 'पुतली जी उठी' में इन्होंने इसी तथ्य को प्रभावपूर्ण ढंग से प्रस्तुत किया है। 'जीवन का एक दिन' कहानी में इन्होंने यह दिखाया है कि दरिद्र परिवारों की भूखी लड़कियां अपना सतीत्व बेचने के लिए किस प्रकार बाध्य हो जाती है। विश्वम्भर नाथ 'कौशिक' हिन्दी साहित्य में सामाजिक कथा साहित्य के प्रणेता रहे हैं। यह हिन्दी कहानी साहित्य के क्षेत्र में सामाजिक समस्याओं, पारिवारिक घटनाओं, चित्रणों एवं उनके मूल्यांकन को प्रस्तुत करने वाले प्रथम लेखक थे जिन्होंने भारतीय साहित्य की मूल आदर्शवादी परम्परा से दृष्टिकोण को अपनाया। इसी दृष्टिकोण को प्रेमचन्द्र जी ने यथार्थवादी पृष्ठभूमि पर अपनाकर

आदर्शोन्मुख यथार्थवाद की स्थापना की। कौशिक जी ने समकालीन समाज से यथार्थ विषय, पारिवारिक साम्प्रदायिक, सामाजिक एवं अन्य अनेक प्रकार की समस्याओं का सर्वांगीण चित्रण पर उनका समाधान भी प्रस्तुत किया।

कौशिक जी की अधिकांश कहानियां सामाजिक वर्ग के अन्तर्गत आती है।[122] परिवार के अन्दर तक दर्शक कर उसकी समस्याओं को कौशिक जी ने अपनी कहानियों में चित्रित किया है। 'माता का हृदय' तथा 'खोटा बेटा' कहानियों में माता पुत्र तथा पिता पुत्र के व्यावहारिक सम्बन्धों का चित्रण किया गया है। 'मातृभक्ति'[123] कहानी समाज में सास–बहू के वैभनस्य की ज्वलन्त समस्या पर आधारित है। प्रमुख पात्र शिवनारायण की माँ अपनी बहू के साथ सदैव दुर्व्यवहार करती थी तथा बहू के माता–पिता आदि के लिये कटू शब्दों का प्रयोग करती थी। शिवनारायण आँख मूंद कर मातृभक्ति को ढींग रचता है और कभी भी सास–बहू में समझौता कराने का प्रयास नहीं करता। एक दिन बहू के द्वारा सास को पानी देने से इंकार करने पर सास बहू के कपड़ों में आग लगा देती है। बहू अपनी रक्षा के लिये सास को ही पकड़ लेती है, जिससे दोनों जलकर मर जाती है। कौशिक जी ने इस भयंकर दुष्परिणाम पर भी दृष्टि डाली है।

पारिवारिक जीवन के छोटे–छोटे चित्र प्रस्तुत करते हुए वैवाहिक सम्बन्धों के प्रति पवित्र दृष्टिकोण तथा भाग्यवाद में दृढ़ विश्वास रखते हुए कौशिक जी ने अपनी कहानियों में मध्य वर्गीय समाज के नैतिक मूल्यों एवं मर्यादाओं का चित्रण किया है। समाज में पुरुषों के समान अधिकार तथा स्वतन्त्रता की आकांक्षा करने वाली स्त्रियां अपने जीवन को स्वयं निराशा पूर्ण एवं अशान्त बना लेती है। इसका यथार्थ चित्रण कौशिक जी ने 'स्वतन्त्रता'[124] शीर्षक कहानी में किया है। इसके प्रमुख पात्र सुखदेव की पत्नी प्रियंवदा स्त्री पुरूष के समान अधिकार की दुहाई देती हुई पूर्ण स्वतंत्रता की मांग करती है तथा पति की सुख–सुविधा का भी ध्यान नहीं रखती। परन्तु अंत में सुखदेव के पूर्ण स्वतन्त्र कर देने पर पहले तो प्रसन्न होती है, सुखदेव को आदर्श पति कहती है, फिर धीरे–धीरे उसे अपने जीवन में प्रेम का

[122] इनकी कहानियां अधिकतर सामाजिक है। काव्य के रूप में गुलाब राय, पृ.सं.–207
[123] प्रतिशोध, कहानी संग्रह, विश्वम्भरनाथ कौशिक, पृ.सं.–139–154
[124] पथ निर्देश, कहानी संग्रह, कहानी स्वतन्त्रता, विश्वम्भर नाथ, पृ.सं.–33–53

अभाव खलने लगता है ओर वह पति का प्रेम प्राप्त करने के लिये व्याकुल हो उठती है। सुखदेव उसे अपना स्पर्श तक करने से इंकार कर देता है और व्यंग पूर्ण शब्दों में कहता है, 'पूछे तुम्हें पूर्ण रूप से स्वतंत्र कर देने में आनंद आता है। मेरे आनन्द की पराकाष्ठा तो उस दिन होगी, जिस दिन तुम अपने भरण–पोषण के लिये चार पैसे पैदा करने लगोगी। 'कौशिक जी लिखते हैं– 'जहाँ प्रेम होता है, वहाँ स्वतन्त्रता तथा अधिकार का प्रश्न कभी उठ ही नहीं सकता।'[125] वे आगे लिखते हैं– 'जिन स्त्री पुरुषों में प्रेम नहीं होता है। बात–बात में स्वतंत्रता और अधिकार की दुहाई देते हैं। परिणाम यह होता है कि आपस में जूता चलता है और तलाक की नौबत आ जाती है। अतः प्रस्तुत 'स्वतन्त्रता' कहानी में लेखक ने दिन–प्रतिदिन आधुनिक स्वतंत्र विचारों के प्रभाव से पति–पत्नी की पारस्परिक कलह का चित्रण करते हुए तलाक के कारणों पर प्रकाश डाला है। कौशिक जी ने अपनी अन्य 'वह प्रतिमा' 'पतिव्रता' 'प्रेम का पापी' तथा 'मालती का प्रेम' आदि कहानियों में पति–पत्नी तथा स्त्री–पुरुष के प्रेम–सम्बन्धों पर प्रकाश डाला है।

मात्रा और गुण दोनों दृष्टियों से भगवती प्रसाद बाजपेयी नारी जीवन के कथाकार है। परिवार में नारी के दर्द, दुःख, शोषण, उत्पीड़न और प्रेम–नैराग्य की संवेदना को ही उन्होंने कहानियों का कथ्य बनाया है। डॉ0 लक्ष्मी नारायण लाल के शब्दों में, 'स्त्री–पात्रों' की विविधता और उनके अनेक रूपों के माध्यम से उन्होंने समाज की यथार्थ को छुआ है और उन्हें अन्वेषण, उत्पीड़न और करुणा के आंसूओं में डूबकर वे तलदर्शी हुए है।[126] सामाजिक परिवेश को इन्होंने इसी दृष्टिकोण से आंका है। नारी जीवन की बिडम्बनाओं में बाजपेयी जी ने परिवार की दुर्बलताओं का निदान खोजा है।

नारी से सम्बद्ध समाज की आधार भूत संस्था परिवार है। परिवार में प्राण चेतना का संचार नारी ही करती है। पहले कौटुम्बिक व्यवस्था ने नारी को परिवार के केन्द्र रूप में मान्यता दी। जब तक नारी कन्या है, देवी है, जब वह वधू है तब गृह लक्ष्मी ही नहीं, कुल लक्ष्मी है। पर बीसवीं सदी आते–आते यह कौटुम्बिक

[125] पथ निर्देश, कहानी संग्रह, कहानी स्वतन्त्रता, विश्वम्भर नाथ कौशिक, पृ.सं.–52
[126] साहित्यकार भगवती प्रसाद बाजपेयी, पृ.सं.–39

व्यवस्था बिखरने लगी। परिवार नाम की इकाई विघटित होती पाई। परिवार की सामुहिकता में दरार पड़ने लगी। घर की चार दीवारी में कुल वधू से इस प्रकार का व्यवहार किया जाने लगा कि वह अधिक से अधिक नगर वधू बनने के लिए विवश हो जाती। परिवार के इस विजड़न को बाजपेयी जी ने अनेक कहानियों का आधार बनाया है। कालक्रम से इस ओर उनके कलाकार का व्यंग्य भी पैना होता गया है। उनकी सबसे पहली कहानी 'यमुना' इसी धरातल का स्पर्श करती हुई अवतरित हुई थी। सास–बहू के सम्बन्धों की रिक्तता इस कहानी में है, पर यमुना बहू के साथ किए अपने ही दुर्व्यवहार से अनुतप्त होकर प्राण त्याग कर देती है। इस कहानी से अनुताप है, अतः परिवार में हिंसक मन की टीस को अभिव्यक्ति मिली है। 'मधुयक' संग्रह में ही एक अन्य कहानी है, 'अपराधी' वहां भी प्रकारान्तर से इसी परिवारिक शोषण की व्यथा का उद्घाटन है। अन्तर केवल इतना है कि अनुताप सीधे हिंसक को न होकर, उसेक सम्बद्ध अंग को होता है, मूल दर्शक को होता है। सावित्री सूर्य कुमार जी की नव विवाहिता है, पर पारिवारिक राजनीति के व्यूह में वह इस कदर मस्त है कि 'प्रयोजनहीन मिट्टी के ठीवरा सी हो गयी है। वह आत्मघात करके जीवन विसर्जन की बात सोचने लगी है। करती नहीं हैं, क्योंकि माता–पिता और भाईयों की मोह ममता है। अन्ततः वह पिता की शरण चली जाती है, और उसका पति मात्र मूक दर्शक बना रहता है। वैसा ही व्यवहार किये जाने पर वह वस्तुस्थिति पहचानना है और अनुताप करता है।

बाजपेयी जी की 'बीती और लौ' की बिन्द्रो परिवार की वैधशाला में छप सकती थी। तिलतिल करके जलना भी उसने स्वीकार कर लिया था पर पारिवारिक कूटनीति ने उस पर कुल्टा होने का अभियोग लगा दिया तो वह पति को त्यागने के लिए विवश हो गई।

स्नेह, बाती और लौ, की एक अन्य कहानी 'अंधेरी रात' की कजली 'मातेश्वरी सीता और भवानी पार्वती के पावन आदर्शों की 'प्रतिष्ठा' की रक्षा नहीं कर सकी 'नावदान का पानी और भैया जल एक में मिल दिया। अतः उसका तथाकथित

पति शिवराम उसका वथ करने आया है।[127] इस कहानी के माध्यम से बाजपेयी जी ने सामाजिक अगति, पारिवारिक अव्यवस्था का चित्र प्रस्तुत किया है।

भारत का मध्य वर्गीय समाज विवाह की रूढ़िगत परिपाटी में इस प्रकार चक्रवद्ध होकर कुण्ठित हो चुका है कि सांस लेना दूभर हो गया हैं। प्रेमचन्द्र आदि सामाजिक बोध के कथाकारों ने समाज के इस हिलते बिखरते ढांचे को ही कथा का आश्रय बनाया है। बाजपेयी जी ने इस ढांचे की बिखरन को बाल–विवाह, अनमेल विवाह और उससे उत्पन्न पारिवारिक कुण्ठा को अपनी कहानियों में चित्रांकित किया है। नारी–जागरण आधुनिक चेतना का एक विशिष्ट आयाम है। मध्य युग से ही नारी पुरुष द्वारा उत्पीड़ित और शोषित रही है। राजाराम मोहन राय आदि सुधारकों में नारी को मानवाधिकार वापिस दिलाने के लिए जो संघर्ष किया था, मध्य वर्ग उसे आत्मसाद नहीं कर सका। परिणामतः भारत के मध्यम वर्गीय परम्परावादी व परिवारों में अन्ध विश्वास और जर्जर रूढ़ियां विवेक न होने से यथावत् रूप में बनी रही, इसीलिए नारी अवला बनी रही।

बाजपेयी जी ने अपनी कहानियों में मध्य वर्गीय, रूढ़िवादी निर्मम मान्यताओं का वर्णन किया है। नारी जीवन की वेदना कथा बचपन से ही प्रारम्भ हो जाती है, जहाँ परिवार में धालिका को किशारी रूप में स्वाभाविक विकास के पहले उसे नारीत्व ओड़ने के लिए विवश कर दिया जाता है और जब तक वह परिपक्वता की स्थिति में पहुँचती है तब तक पति ग्रह की कूटनीति और उत्पीड़न का शिकार हो जाती है। इसी बीच यदि कहीं दुर्भाग्यवश वैधव्य ने घेर लिया तो उसका रहा सहा सम्बल भी छिन जाता है 'ह्रदयगति' की फूल एक ऐसी ही विधवा है, जिसे वैधव्य क्या है ? इसका ज्ञान नहीं है। वैधव्य में कुछ खोने की अनुभूति से वह पूर्णरूपेण अनभिज्ञ है। 'रोना और मुँह लटकाना तो जानती ही न थी और इस अर्थ में फूल अपराधिनी थी'। इसी अधोधता में ज बवह अलहड़ता से कह जाती है 'जीजा जी मुझे बड़े अच्छे लगते हैं' तो उसका अपराध अदम्य हो जाता है।[128] पारिवारिक शोषण की चरम सीमा नारी ही जानती है।

---

[127] 'स्नेह बाती और लौ, पृ.सं.–149

[128] होटल का कमरा, चन्द्रजाल, पृ.सं.–99

बाजपेयी जी के 'इन्द्रजाल' का दिलीप विधवा से विवाह करना चाहता है जो 'जब सौभाग्यवती हुई तब न जाने कहां से सिर पर रखा हुआ अमृत विषघट बन गया'।[129] यहाँ विधवा विवाह का समर्थन विवेक अथवा तर्कसंगत नहीं है, मात्र भावात्मक है।[130] बाजपेयी जी के युगदृष्टा कलाकार ने समाज की यही मृत जैसी शीतल निर्ममता नहीं देवी वरन् उसके चरम अपरूप को भी देखा है। 'हत्यारा' में मैना रमेश की विवाहिता है, किन्तु बात खुलने पर वह घर से निकाल दी गई। सारी बात में उसका दोष सिर्फ इतना था कि वह विधवा माँ की बेटी थी, पिता के स्वर्गवास होने के आठ माह पश्चात् उसका जन्म हुआ था।[131]

बाजपेयी जी ने अपनी कहानियों में एक ऐसे शोषित और तिरस्कृत पात्रों की एक पवित्र मनोवृत्ति को उभार कर समाज के प्रति अपना आक्रोश व्यक्त किया है उन्होंने उस वस्तु स्थिति का आंकलन किया है जिसमें समाज रूढ़ियावादिता के मोच में पराकर पतन के और गहरे गर्ल में फिरता जा रहा है। परिवार के इस विटूप को बाजपेयी जी ने परखा है, रेखांकित किया है।

बाजपेयी जी ने अपनी कहानियों में पारिवारिक शोषण के सन्दर्भ में अनभेल विवाह की समस्या को थी अंकित किया है। परिवार में भोली और निरीह बालिकायें प्रौढ़ एवं वृद्ध पुरुषों की तृष्णा की पूर्ति का साधन बनती रही है। ऐसे सम्बन्धों की मनोवैज्ञानिक जटिलताएं एवं सामाजिक परिणति क्या हो सकती है ? समाज को इस पर विचार करने का अवकाश न था। बाजपेयी जी ने अपनी कहानियों में इस संवेदना को मूर्त किया। बाजपेयी जी की लेखनी ने इस दिशा में द्विविध कार्य किया है। उसने नारी की दयनीयता के प्रति सहानुभूति को जागरित किया है, तथा सामाजिक अन्याय पर पैना व्यंग्य किया है। कहानियों में नारी सहज मानवीय संवेदना का पात्र बन जाती है, समाज के नाम पर परिवार का कृष्ण पक्ष स्वयं उभर आता है। वह वितृष्णा का विषय बन जाता है।

---

[129] स्नेह बाती और लौ, भगवती प्रसाद बाजपेयी, पृ.सं.–36
[130] होटल का कमरा, चन्द्रजाल, पृ.सं.–99
[131] थ्हलोर, हत्यारा, पृ.सं.–140

पारिवारिक यथार्थवाद के कहानीकारों में यशपाल का विशेष स्थान है। उन्होंने लगभग 100–125 कहानियों की रचना की है। सामाजिक कहानियों में हिंसा, 'दुःख', 'कर्मपल' 'नई दुनियां' 'ददैदिल' अपनी करनी 'नारी चार आने पूर गई' 'नारी का सौन्दर्य' 'दो मुंह की बात', 'हृदय' परायी समाज सेवा पहाड़ की स्मृति आदि है। इनकी अधिकांश कहानियां पारिवारिक द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद के धरातल से लिखी गई है। उनकी कहानियों में पाप–पुण्य, भाग्य तथा प्राचीन परम्पराओं आदि की मान्यताओं की आलोचना तथा परिवार में स्त्री–पुरुष के भिन्न–भिन्न सम्बन्धों की व्याख्या यशपाल के मुख्य विषय रहे हैं। व्यक्ति, परिवार तथा समाज के जीवन से सम्बन्धित इन कहानियों में कहानीकार यशपाल का दृष्टिकोण जीवन दर्शन मूलक है जो उनके गम्भीर चिन्तन को प्रकट करता है।

यशपाल ने पारिवारिक जीवन की समस्याओं को दुःख, परलोक, कर्मपल, दुःखी हिंसा आदि कहानियों में उपस्थित किया है। 'वो दुनियां' की बारह कहानियों में गृहस्थ जीवन (सन्यासी) नव युवक तथा नव युवतियों के आचरणवादी मुँह की बात, में उन्होंने परिवार से जुड़ी समस्याओं को उठाया है। कहानी संग्रह अभिशप्त की कहानियां सामाजिक एवं पारिवारिक है जिनमें अप्रत्यक्ष की अपेक्षा प्रत्यक्ष में विश्वास करके जीवन की इच्छा और अधिकार के लिए व्यादुल होने की प्रेरणा मिलती है। 'फूलों का जूता' में वर्तमान समाज के लिए नवीन संस्कृति अपनाने की प्रेरणा दी गई है। यशपाल की सामाजिक कहानियों में भी पारिवारिक शोषण को उभारा गया है तथा प्राचीन परम्परा, धर्म नीति तथा अन्य मान्यताओं की कटु आलोचना करके उनके स्थान पर नवीन संस्कृति का निर्माण करने वाली भक्ति को प्रधानता दी गई है।

स्वतन्त्रता के तुरन्त बाद देश की परिस्थितियां एक झटके में बदल गई और इतिहास का नया दौर आरम्भ हुआ। स्वातन्त्रयोत्तर नई कहानी में इस बदलाव को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। इसमें परिवार की टूटन साफ दिखाई देती है। लाखों दशक तक आते–आते सम्बन्धों के बदलाव और भी तीव्र हो गये, जहां नये कहानीकारों में टूटते परिवारों के प्रति एक संवेदनशील सहानुभूति दृष्टि गोचर होती थी, वहां साठोत्तरी कहानीकारों में इस टूटते परिवार और पारिवारिक जनों के प्रति

वृष्णा भर उठी। इस प्रकार सामाजिक प्रतिबद्धता की दृष्टि से साठोत्तरी पीढ़ी अपेक्षाकृत अधिक सबल और संघर्ष कही जा सकती है, क्योंकि इसमें पारिवारिक विघटन को पारिवारिक नारी शोषण के सन्दर्भ में मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक धरातल पर अनुभवजन्य गहराइयों के साथ चित्रित किया गया है।

राजेन्द्र यादव की 'तलवार पंच हजारी' इस सिलसिले में सर्वाधिक महत्वपूर्ण कहानी है। ये 'तलवार पंच हजारी' पुराने कर तोड़ देता है 'हां अगर जाओ तो अबला से कह देना कि उस तलवार को मैंने तोड़ डाला है।'[132] बदलते हुए इस परिवार में पूज्जनों की स्थिति अधिक शोचनीय और दयनीय हो गई है। आज से इन परिवारों में अपने आपको समायोजित करने में एक दम असमर्थ पा रहे थे। भरे पूरे इन परिवारों में उन्हें रह रहकर पागलसूपन का बोध होता है जो इनकी चेतना को सालता हुआ सीधे ह्रदय को तोड़ रहा है।

मोहन राकेश की कहानी 'आंद्रा'[133] की मां और ऊषा प्रियम्बदा की कहानी वापसी के पिता दोनों ही इस फालतू पन के शिकार है।

शानी की 'एक नाव के यात्री'[134] के परिवार का बड़ा बेटा रज्जन इंग्लैण्ड पढ़ने गया है। इस अवधि में उसकी बहन की शादी हो जाती है। उसका पिता रिटायर्ड होकर अपनी आँखें खो बैठता है, लेकिन विदेश में बैठे रज्जन पर इन अप्रत्याशित घटनाओं का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। इंग्लैण्ड से लौटने पर वह घर न आकर सीधे अपनी ससुराल पहुँच जाता है।

अमर कान्त की 'दोपहर का भोजन'[135] का परिवार गरीबी के थपेड़े सहता हुआ और आर्थिक कठिनाइयों से जूझ रहा है यहीं इसकी विघटनशीलता को देखा जा सकता है। यदि सिद्धेश्वरी न होती तो शायद ये कभी का परिवार टूट चुका होता। ये दोपहर के भोजन के समय छोटे से लड़के की ओर लड़के से छोटे की ओर पति से पुत्रों की प्रशंसा करके जैसे तैसे सारे परिवार को एक सूत्र में बांधे हैं।

---

[132] छोटे मोटे, ताजवहन, पृ.सं.–70
[133] रौपे रेशे, पृ.सं.–21
[134] एक दुनिया समानान्तर
[135] नई कहानी प्रकृति और पाठ

नई कहानी में चित्रित पारिवारिक शोषण को पूरी तरह से विघटन का नाम नहीं दिया जा सकता, इसमें कहीं न कहीं आपसी सम्बन्धों की करूणा विगलित सहानुभूति अन्तर्निहित है, जो किसी सीमा तक नारी का पारिवारिक शोषण होते हुए भी उन परिवारों को जोड़े रहती है। साकोत्तरी कहानी मूलतः युवावर्ग की कहानी है, जहाँ पारिवारिक विघटन अगर बच सका है तो वह नारी के कारण और इस पारिवारिक विघटन का आधार नारी शोषण, दबाव पूर्ण आर्थिक परिस्थितियां तथा मूल्य हीनता है।

मेहरून्निता परवेज की 'इबइयायी आँखों का स्वप्न' एक ऐसे पारिवारिक शोषण की कहानी है, जिसमें दीवारें बाहर से साबित नजर आती है, किन्तु अन्दर से उसमें भयंकर दरारे हैं। पुत्र और माँ बाप में एक अजीव सी खिंचावट है। पुत्र समझता है कि 'वह यतीम है सिर्फ यतीमं'[136] ये कहानी एक ऐसे बिन्दु पर विश्राम लेती है जिसमें पारिवारिक विघटन की ध्वनियां स्वतः उठ रही है। निःसन्देह पारिवारिक शोषण की परिणति पारिवारिक विघटन ही है।

स्वान्त्रयोत्तर कहानियों में पारिवारिक शोषण को बदलते हुए सम्बन्धों के सन्दर्भ में देखा जा सकता है। इस सम्बन्ध में परिवर्तन के अनेक स्तर और दिशाऐं है। हमारे तमाम पारिवारिक सम्बन्ध अचानक संदिग्ध और सवाल बन गये है।[137] स्वातन्त्रयोत्तर कहानियों में मां की रूढ़िवादी ममतामयी मूर्ति को भी खण्डित कर उसे यथार्थ के परिप्रेक्ष्य में नया स्वरूप दे दिया गया है। माँ 'घर के फालतू सामान' की तरह दृष्टिगोचर होती है और उसकी त्यागमयी विशिष्टता के प्रति अविश्वास उत्पन्न कर लिया गया है। नये कहानीकारों ने माँ के परम्परागत रिश्ते को नकारते हुए अनेक चित्र प्रस्तुत किए है। भीष्म साहनी की 'चीफ की दावत' के समय फालतू सामान को एक कोठरी में बंद कर देते हैं। पुत्र माँ को भी एक फालतू सामान समझता है अतः उसे भी उसी कोठरी में बंद करने की योजना बनती है।[138] यह नारी के मातृत्व का पारिवारिक शोषण ही है।

---

[136] नई कहानियां, सितम्बर 1966, पृ.सं.–2 व 27
[137] समकालीन कहानी, दिशा और दृष्टि
[138] एक दुनिया समानान्तर, पृष्ठ, पृ.सं.–216

मोहन राकेश की 'आंद्रा' की माँ का व्यक्तित्व भी अपने पुत्र लाती के सम्मुख दबा हुआ है, क्यों कि बेटा बड़ा होते होते इतना बड़ा हो गया है था कि वह उससे अपने आपको छोटी महसूस करने लगी थी।[139] परिवार में मां के प्रति बदलाव को पुत्रियों में भी देखा जा सकता है। रजनी पनिकर की 'गुलाब के फूल जिन्दगी के कांटे' की मिसेज शोभापुरी इसी संघर्ष का प्रतीक है। शोभा अपनी माँ तक पर भी विश्वास नहीं कर पाती।[140]

स्वातन्त्रयोत्तर समाज में सम्बन्धों का यह बदलाव अन्य पारिवारिक वर्गों के बीच भी देखा जा सकता है। ऊषा प्रियम्पदा की 'जिन्दगी और गुलाब के फूल' में भाई बहन के बीच बदलते सम्बन्धों को सफल अभिव्यक्ति मिली है। जब तक परिवार के पोषण का भार सुबोध के हाथों में रहता है। उसके मन में किसी प्रकार की कुण्ठा नहीं होती किन्तु नौकरी छूट जाने से यही संचालन सूत्र उसकी बहन वृन्दा के हाथ में आ जाता है तो उसे अपना घर वृन्दा का घर नजर आने लगता है। इस सबसे उसके आत्म सम्मान पर चोट होती है।[141] आज के इस यान्त्रिक युग में नारी परिवार में एक यंत्र बन कर रह गई है। यान्त्रिक के इस निर्जीव भावबोध में उसकी आकांक्षायें टूट गई है, स्वप्न बिखर गये हैं। परिणामतः घुटन, अवसाद और अन्दर भरता हुआ निराशा का धुआं उसे निरन्तर अपरिहार्य भटकाव, अकेलेपन, कुण्ठा और मृत्युबोध से जोड़ रहा है। ऐसा नहीं है कि वह इस सारी पीड़ा को सहने में गौरवान्वित है। वरन् पारिवारिक बोझों, व्यवस्थागत दोषों और मानसिक मोहबन्धों के कारण वह इस भार को ढोने के लिए विवश है।

कृष्णा सोवती की 'यारों के यार तिन पहाड़' में उनकी चर्चित कहानियां संकलित है जिनमें से एक में रूखे सूखे समाज के बाह्य जीवन की खड़खड़ाहट है। 'तिन पहाड़' एक प्रेम कहानी है, जिसकी नायिका जया की पीड़ा भोग की नियति और आत्महत्या की स्थितियां तो अपरिहित नहीं है, परन्तु उसका यौन आत्मदाह बड़ा मार्मिक है। अपने समकालीन कहानीकारों में कृष्णा सोवती का एक अपना ही स्थान है। उनकी दो टूक कहने की आदत ने कहानियों में यथार्थ की

[139] मोहन राकेश रॉय रेशे, पृ.सं.–20
[140] हिन्दी लेखिकाओं की प्रतिनिधि कहानियां, पृ.सं.–157
[141] जिन्दी और गुलाब के फूल, पृ.सं.–158

चेतना पूंजी है। उनकी कहानियां पारिवारिक शोषण तथा एक निश्चित सामाजिक उद्देश्य की दस्तावेज है। उनकी दृष्टि सूक्ष्म है और व्यंग्य तीखे व पैने है। 'सिक्का बदल गया', 'बदली बरस गई', 'बादलों के घरे', 'यारों के चार', 'मित्रों' मरजानी, 'थोड़ा बादशाह' और 'गुलाब जल गंडेरिया' आदि उनकी महत्वपूर्ण उल्लेखनीय कहानियां है। यद्यपि इन कहानियों में उन्होंने वैयक्तिक चेतना को ही अधिक स्थान दिया है, किन्तु उनकी यह चेतना परिवार एवं समाज का एक महत्वपूर्ण अंग है। उनके नारी पात्र जहां एक ओर अभिव्यक्ति के स्तर पर व्यक्तिगत यथार्थ की पुष्टि करते हैं, वहीं परिवार से भी जुड़े सुर होते हैं।

'राएवाली'[142] ममता कालिया की एक सशक्त कहानी हैं, जिसमें पारिवारिक धरातल पर शोषण के अनेक रूप मिलते हैं राया गांव की बेटी कालिन्दी का विवाह मथुरा के मोहन से होता है। मथुरा वालों की अपनी गुलता रावा की लघुता का बोध होने लगता है। शादी पर आने वाले बरातियों को वहां की असुविधाओं से शिकायत है। सास को शिकायत है कि रावे की औरतें साबुन ज्यादा खर्च करती है, नमक कम डालती है, इनमें सेवा भाव की कमी होती है, नींद बड़ी जल्दी आती है और कालिन्दी तो लुगाई की उम्र में ब्याही गई है। कालिन्दी की सास बताती है 'मैं ग्यारस साल की ब्याही थी। मेरी सास बड़े से पैर दबवाती थी सारी–सारी रात। से जो अगले दाँत टूटे हैं, तभी के है। खड़ी–खड़ी एक बखत ऊब गई, सास ने दूसरी टांग ये कस कर चलाई कि गिरी सामने से चौखट पर धम्म से ऊपर के चार दाँत मगज में चढ़ गये। यही औरत अब अपनी बहू का शारीरिक एवं मानसिक शोषण किया करती है। इसने बहू के लिए टुकड़–टुकड़ा नींद रात भर पैर दबवाने, दिन भर काम करने और पति से अलग करने की यातनाएं संजोयी है। तीसरी शोषण कालिन्दी की जिठानी भी कम नहीं, वह कालिन्दी की चीजों से श्रृंगार करके कहा करती है 'देखा हमपे कित्ती सजती है तुम्हारी ये मामूली रकम। पहनने का दम तो तो ठीकरे की जवाहर। इस कही में चतुर्थ शोषक मोहन है जो पत्नी को परिवार की दासी बना अपनी हाजत वेश्याओं के यहां रपण किया करता है। उसकी मर्दानगी पत्नी को मारने, श्रवण कुमार बनने और कसेले बोल बोल बोलने में ही है।

[142] ममता कालिया एक अटूट और पृ.सं.–16

यहां तक कि पत्नी को माँ की मृत्यु पर भी मायके नहीं जाने देता। माँ की मृत्यु की सूचना एवं सास पति के बनेले व्यवहार की डेल न पाने के कारण रजरावाली देवर की शादी में नाचती गाती बेहोश हो जाती है।

सिम्मी हर्षिता ने अपनी कहानी 'आत्म कथा का मनोभाव' में माँ बेटी तथा अन्य सम्बन्धों के सूक्ष्म रेशे खोले है। इस कहानी में वृद्धा नायिका को अपने भीतर या बाहर कोई ऐसी चीज नहीं मिलती, जिसका आश्रय ले सके। स्थिति और नियति भी ऐसी है। नानी का अकेलापन पारिवारिक सम्बन्धों के टूटने के हादसे की देन है। दस बेटियों की लड़ने की शिकार अपंग इस बूढ़ी मां ने कभी सोचा भी न था कि सभी इस प्रकार घर की देहरी लांघ कर चले जायेगें। सम्बन्धों की बाढ़ में वह प्यासी बैठी है। किसी से वह सीधा नम्बर घुमाकर बात नहीं कर सकती, अब रिश्ते एक चुके है ओर वह शून्यता बोध में जीती रहेगी। यह कहानी एक नानी की आत्मकथा है, जिसमें विभिन्न स्तरों पर पारिवारिक शोषण दिखाया गया है कि इस वाक्य से स्पष्ट है 'नानी केवल कहानियों में ही होती है भोले बचपन तक ह ीवह रहती है। इसके बाद उसका कोई अस्तित्व नहीं है।[143]

आज का कहानीकार सीमित दायरे में कहानी नहीं लिखता वह अपनी कहानी में विराट परिवेश को समेटे हैं। इस युग में पारिवारिक जीवन की विभिन्न समस्याओं का चित्रण हुआ है यद्यपि स्त्री–पुरुष को समान अधिकार मिल चुके हैं, परन्तु स्त्री इन अधिकारों का प्रयोग करने में अपने आपको असमर्थ पाती है। इसी कारण नारी अब भी परिवार में शोषण की पात्र है। पढ़ लिखकर स्त्री ने उच्च आसन अवश्य प्राप्त कर लिया, परन्तु उसके पारिवारिक जीवन की समस्यायें जटिल होती जा रही है। प्रस्तुत युग की प्रमुख समस्या, पारिवारिक विघटन की समस्या, दाम्पत्य जीवन की समस्यायें, वैवाहिक समस्यायें विभिन्न सामाजिक रूढ़ियों आदि नारी जीवन की विभिन्न समस्यायें है। इन्हीं पारिवारिक जीवन से सम्बन्धित विभिन्न कहानीकारों ने अनेक कहानियां लिखी। इस दृष्टि से मार्कण्डेय, सोमावीरा, धर्मेन्द्र गुप्त, ध्रुव जायसवाल, शेखर जोशी, राना रणधीर सिन्हा, वीरेन्द्र, अंगराज, भीष्म

[143] सिम्मी हर्षिता आत्मकथा का मनोभाव, पृ.सं.–55

साहनी, प्रतिमा वर्मा, डॉ0 प्रतापनारायण टण्डन युगल गिरधर गोपाल, बल्लभ सिद्धार्थ आदि कहानीकारों का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

इस सन्दर्भ में कतिपय ऐसी भी कहानियां है जो अपनी विशिष्टता के कारण इस क्षेत्र में एक नवीन आधार भूमि तैयार करती है। निर्मल वर्मा की 'डेढ़ इन्च ऊपर' के नायक की पत्नी को परिवार में गुप्तचर होने के आरोप में गोली मारी जा चुकी है, किन्तु वह महसूस नहीं कर पाता कि उसकी पत्नी मर चुकी है।[144] आज की नारी घर–परिवार और रिश्तों के बीच भी अकेली है, जिस पर उसका कोई अधिकार नहीं। मोहन राकेश की 'एक और जिन्दगी के नायक और नायिका न तो छूटी हुई जिन्दगी को छोड़ पाते हैं न चुनी हुई जिन्दगी को अपना पाते हैं। मोहन राकेश की 'सुहागिने'[145] ऐसी कहानी है, जहाँ परिवार में नारी का नारी के द्वारा शोषण हुआ है, जहाँ नारीत्व तथा मातृत्व का टकराव है।

नई कहानी को प्रतिष्ठित करने वाले प्रमुख कथाकारों में कमलेश्वर भी एक है। कमलेश्वर में पारिवारिक जीवन की सांस्कृतिक स्पर्शमूलक संवेदनाएं भरपूर है। 'देवा की माँ', 'ऐसी ही संवेदनाओं से परिपूर्ण' जीवन चरित्र है, वह न युवती है और न बूढ़ी है, न धनी है न गरीब, न विधवा है और न सधवा, वह न रोती है और न हंसती है, वह अत्यन्त सहज, मूक, नए अद्‌भुत और दृढ़ चरित्र एक माँ है। इस देवा की माँ के रूप में कमलेश्वर ने एक पूरी पीढ़ी के नारी सत्य को बिना लाभ लपेट प्रस्तुत कर दिया है।

अन्ध कथाकार ललित शुक्ल की कहानियों में परिवार की गरीबी ही प्रधान समस्या है। 'अमर बेल' कहानी में जियावन और बलन्ती की माँ चम्पा की कहानी है। गाँव के मजदूर अपने परिवार को छोड़कर नगर में आकर अधिक तेज शोषण चक्र में पिस जाते हैं। बहुत रोमांचक, कठिन और द्रावक है उनका पारिवारिक जीवन वास्तव में ये सभी साधनहीन गरीब है। उनका जीवन, उनकी भाषा और उनके जीवन के मुहावरे कंपा देने वाले हैं। 'चमका' कहानी भी ऐसी ही है जिसमें परिवार एक गांव का है, गरीबी है, शोषित है। इससे ये स्पष्ट है कि ललित शुक्ल

[144] निर्मल वर्मा, मेरी प्रिय कहानियां, पृ.सं.–105
[145] मोहन राकेश, रौये रेशे, पृ.सं.–561

की कहानियां पारिवारिक शोषण के चित्रण से अपनी पृथक पहचान बनाती दृष्टि गोचर होती है।

रवीन्द्र कालिया की 'गरीबी हटाओं' में कथाकार मोहन का परिवार गरीबी के इर्द गिर्द रहता है। भोजन, वस्त्र, मकान, शिक्षा, जीविका और प्रतिष्ठा सारे सामाजिक परिप्रेक्ष्य सामने हैं। दो–दो पीढ़ियां इस नरक को ढेल रही है। परिवार एक है और व्यक्ति टुकड़े–टुकड़े में गरीब है। रवीन्द्र कालिया ने समाज एवं परिवार की पीड़ा को समझने का प्रयत्न किया है उसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता है।

नई साठोत्तरी पीढ़ी के कहानीकारों में ज्ञानरंजन का नाम भी जुड़ा है, जिन्होंने अपने कहानी संग्रह 'पेंस के इधर और इधर' (1968) में परम्परागत धारणा, मूल्य और व्यवस्था आदि के संदर्भों को आधुनिक दृष्टि से परखा है। इस दृष्टि में मुख्यतः बदलती वैयक्तिक और पारिवारिक स्थितियां है। अब स्थितियों ने अपना परम्परागत अर्थ खो दिया है। इस संग्रह की कहानी 'कलह' में परिवार के मालिक के अवांछनीय सम्बन्ध का अहसास सारे पारिवारिक सम्बन्धों को इकझोर कर रख देता है। बच्चे सहमें रहते हैं, पत्नी टालती, छिपाती और सहती रहती है। शिक्षित पुत्री यह चाहती है कि माँ इस पोशीदा औरत को दिन के उजाले में हम सब के सामने खोल दें, जिसने परिवार को मथ दिया है। पारिवारिक शोषण से आहत और पण्डित जीवन–संदर्भों की, नये कहानीकार के रूप में ज्ञानरंजन की बड़ी सार्थक और सशक्त पकड़ है।

परिवार में नारी शोषण का विषय यह भी है कि पारिवारिक व्यक्ति ने अपनी वैयक्तिता की ओर अधिक ध्यान देना प्रारम्भ कर दिया और शोध को अपेक्षित कर दिया इसीलिए पारिवारिक शोषण होने के कारण नई परिस्थितियां निर्मित हुई है। परिवार संकुचित बना है और एक दूसरे के प्रति कुछ करने की प्रवृत्ति में परिवर्तन आ गया है। प्रायः नारी के भी दो प्रकार के रूप दृष्टिगोचर होते हैं। परम्परा वाला रूप और विद्रोही रूप। पुरुष और नारी के लिए अलग–अलग मान्यताएं होने के कारण विरोध स्वरूप थोथी रूढ़ियों के बोझ को उतार फेंका गया है। अर्थ और स्वार्थ को परिवार में अत्यधिक महत्व दिये जाने पर तथा एक दूसरे की भावना को न समझ पाने के कारण परिवार में टूटन पैदा हो गयी है।

श्री कान्त वर्मा ने अपनी नई कहानी 'ट्यूमर' में दिखाया है कि 'व्यक्ति पत्नी के साथ एक समझौते की दुनिया' में रह रहा है और किसी भी क्षण वह समझौता टूट भी सकता है। यदि ऐसा हुआ तो क्या होगा, वह सोच भी नहीं पाता था और सोचना चाहता भी नहीं था।[146] ज्ञानी जी ने अपनी कहानी एक नाव के यात्री में कहा है कि विचार भिन्नता, स्तर भिन्नता के कारण वह यह नहीं समझता कि पत्नी सिफ पत्नी मात्र नहीं, समान रूप से जीवन में साथ देने वाली हैं, किन्तु माता–पिता की भावनायें उनके प्रति कर्तव्य, परिवार का उत्तरदायित्व को बिखर जाते है। मात्र भौतिक वस्तुओं की भेंट माँ–बाप को संतोष और उल्लास नहीं दे पाती। वह बिडम्बना परिवार के टूटने की नियति की पूर्व सूचना है।[147]

परिवार में नारी–शोषण के प्रभाव में असामन्जस्य होने से पिता और पुत्र में, माँ और पुत्र में, पिता और माता में, बहन और भाई में, भाई और भाई में तथा परिवार के अन्य सदस्यों के बीच पुराने सम्बन्ध भंग होने के साथ ही नये सम्बन्ध की स्थिति निर्मित होने लगती है। इन नये सम्बन्धों में परम्परा का तिरस्कार, रूढ़ियों को अपना और विद्रोह के दर्शन होते हैं। भीष्म साहनी ने अपनी कहानी 'माता–विमाता' में माँ और पुत्र के सम्बन्धों के सभी स्तरों और अनुभूतियों का चित्रण किया है। माँ की ममता का एक रूप 'टूटती हुई आत्मा' में दर्शाया गया है। अक्सर बेटा माँ के मिलने के लिए एक क्षण भी नहीं निकाल पाता, जबकि माँ उसकी चिट्ठी न पाकर उसकी पसन्द की चीजें लेकर दौड़ी जाती है। वह भीतर ही भीतर घुलती टूटती, आधारहीन सी, नई निर्मित स्थिति को सहती हुई लौट जाती है। यहाँ मातृत्व पर नारीत्व और उस पर भी व्यक्तित्व हावी है, जो उपेक्षा से शोषित हो रहा है।

रवीन्द्र कालिया की 'त्रास' कहानी की माँ अपने पुत्र के जीवित रहने के लिए सभी पुरानी मान्यताओं एवं द्रोंगपूर्ण व्यवहार छोड़ देती है। वह चाहती है कि बेटा हंसता रहें, लोगों से मिलता रहे। पिता के टूटते पुराने सम्बन्धों और उभरते नये

[146] ट्यूमर, श्री कान्त वर्मा, कहानी संग्रह 'घर', पृ.सं.–69
[147] एक नाव के यात्री, ज्ञानी धर्म युग सितम्बर, 1964

सम्बन्धों का चित्रण भी इस कहानी में मिलता है।[148] शोषण की परिधि में ही सम्बन्धों की टूटन नजर आती है।

परिवार पति–पत्नी के सम्बन्धों में ही दृष्टिगोचर होता है। उक्त 'त्रास' कहानी में परम्परा प्रेम के कारण नारी झुक जाती है, किन्तु अपने मन को तुष्ट नहीं कर पाती। यह स्थिति पढ़ी–लिखी नारी की भी है। नारी के श्रेष्ठ गुण, सहानुभूति, सहिष्णुता, विशाल हृदयता इस कहानी में भी दृष्टिगोचर होते हैं। नारी की विवशता, शक्तिहीनता ओर परिस्थिति जन्य को आवश्यकता समझकर पति भी उसे तर्जीह देने को तैयार हो गया। पत्नी को वह दासी के स्थान पर मित्र, साथी और सहयोगी के रूप में देखने का प्रयास करने लगा।

मोहन राकेश के अनुसार अभी तक कहानी साहित्य में पुरुष ने नारी को जैसा समझा, वैसा अभिव्यक्त किया। पुरुष ने उसे वस्तु समझा।[149] पुरुष की इसी भावना में परिवर्तन के लिए नारी सतत प्रयत्नशील रही, फिर भी वह परिवार और अपने उत्तरदायित्व से अलग नहीं हो पाय। वह घुटन की प्रतिक्रिया भी व्यक्त करती है तथा वह इस प्रतिक्रिया में ईर्ष्या, कल्पना, भावुकता को मिलाकर शक्तिहीन और बीमार होते हुए भी प्रतिशोध लेने के लिए अकयनीय ताने मारने में नहीं चूकती।[150]

नया युग बहुत सी पुरानी बातों के स्थान पर एक दम नये विचार प्रस्तुत कर रहा है। समाज के प्रमुख अंग स्त्री और पुरूष को वह केवल इन्हीं दो रूपों में देखना चाहता है। उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव की तरह अब सम्बन्धों के दो ध्रुव हैं स्त्री और पुरूष, जो सारी संगतियों और विसंगतियों के साथ अपनी प्राकृतिक अपेक्षाओं से सीधे–सीधे सम्बद्ध है। संशय ग्रस्त सम्बन्धों के बिजबिजाते दलदल अब नहीं है। कहानीकार कमलेश्वर के विचार से नारी की देह अब उसके अपने निर्णय की वस्तु है। नर नारी के सम्बन्धों की समस्या नारी–जीवन की मूल समस्या है। प्रेम और विवाह की समस्या, शायद इसलिए, अधिक महत्व रखती है कि इसके माध्यम से ही

[148] त्रास, रवीन्द्र कालिया, नई कहानियां, जनवरी 1963
[149] हज हलाल, मोहन राकेश
[150] आखिरी सामान, मोहन राकेश

नारी का व्यक्तित्व बनता बिगड़ता, टूटता संवरता है। आज के पारिवारिक और सामाजिक परिवेश में यदि प्रेम का आधार खिसक जाता है तो नारी का व्यक्तित्व टूटने और बिलखने लगता है।

युगीन संदर्भों में बदलते पारिवारिक मूल्यों की सहज स्वीकृति, महानगरीय जीवन तथा आर्थिक दबावों के बीच उभरते नये मूल्यों के संघर्षों में जूझती नारी आज के साहित्यकारों के लिए सबसे बड़ी चुनौती है। इसीलिए आधुनिक कथा साहित्य में वह कथ्य बनकर आई। समकालीन कहानियों के अधिकांश विषय आधुनिक परिवेश में उदिता नारी ही है। स्वातन्त्रयोत्तर हिन्दी कथा साहित्य में प्रेम–विवाह तथा स्त्री–पुरुष के बीच टूटते बनते सम्बन्धों की पृष्ठभूमि में जितनी कहानियां इस युग में लिखी गई उतनी पहले नहीं। एक कहानीकार ने लिखा है तमाम दुनियां की भाषा कुल मिलाकर स्त्री–पुरूषों की बात चीरा है, जो उनके सम्बन्धों के मुताबिक बदलती रहती है।

मोहन राकेश, राजेन्द्र यादव, कमलेश्वर, निर्मल वर्मा, मन्नू भण्डारी, कृष्णा सोबती, ऊषा प्रियम्बदा, मृदुला गर्ग, मणिका मोहिनी, सुरेश सिन्हा, शशि प्रभा शास्त्री, कमलेश वक्शी आदि समकालीन कहानीकारों ने स्त्री–पुरूष के पारम्परिक सम्बन्धों में होने वाले परिवर्तन का चित्रण किया है।

संक्षेप में स्वातन्त्रयोत्तर कहानियों में आधुनिक युग के पारिवारिक सामाजिक एवं नैतिक परिवर्तन के परिणाम स्वरूप नारी के बदलते हुए दृष्टिकोण मूल्यों, आकांक्षाओं और पारस्परिक सम्बन्धों के अनेक चित्रण प्रस्तुत किए गए है।

इन कहानीकारों ने एक ओर प्रेम और विवाह के यथार्थ का मार्मिक चित्रण किया है और वहीं दूसरी ओर नारी के अन्तर्मन के त्रासदी का सूक्ष्म चित्रण भी किया है। युगीन परिस्थितियों तथा आधुनिकता के दबाव में पुराने जीवन मूल्यों को उतारने का पूरा प्रयास किया गया है, परन्तु उसके स्थान पर नये मूल्यों की स्थापना अभी पूर्णरूप से नहीं हो पायी है। पुराने को छोड़ने और नये को अपनाने की विविधा में अत्याधुनिक मानसिकता में जीती नारी परम्परागत नारीत्व की भावना को तिलाजंलि नहीं दे पाती इसीलिए परिवार में रहते हुए भी नारी त्रिवांकू की तरह

डोल रही है। जिसका प्रतिबिम्ब स्वातन्त्रयोत्तर कथा साहित्य में मिलता है। स्वातन्त्रयोत्तर कहानी में नारी के अन्तर्मन की प्रवृत्तियां, रूचियों आदि की यथार्थ अभिव्यक्ति मिलती है। टूटते संयुक्त परिवार, आर्थिक संघर्ष, जीवन की कठिनाइयां शाश्वत जीवन मूल्यों के विघटन का कारण बन गए है, फिर भी अभी ये शाश्वत जीवन मूल्य पूरी तरह से चुक नहीं पाए हैं।

पंचम अध्याय

हिन्दी कहानियों में नारी के सामाजिक शोषण

हिन्दी कहानी के क्षेत्र में सामाजिक कहानियों की प्रवृत्ति ही प्रधान रही है। पूर्व प्रेमचन्द्र युगीन कहानियां विभिन्न सामाजिक समस्याओं का विश्लेषण करती है। इस युग का कहानीकार समकालीन सामाजिक जीवन एवं विभिन्न क्षेत्रीय समस्याओं का चित्रण करता है। विविध रूढ़ियों, कूरीतियों एवं अन्धविश्वासों का वर्णन इस युग में किया गया। इस युग में मौलिक कहानियों के अतिरिक्त अनुदित रचनायें भी सम्मुख आई। सामाजिक प्रवृत्ति प्रधान रचनायें सामाजिक समस्याओं एवं कुरीतियों का चित्रण प्रस्तुत करती है। पंडित गौरीदत्त लिखित 'कुम्भ में छोटी बहू', 'दान प्रतिदान', 'दुलाई वाली' (यंग महिला) आदि कहानियां सामाजिक समस्याओं पर आधारित रचनायें हैं। मास्टर भगवान दास लिखित 'प्लेग की चुड़ेल' कहानी सामाजिक कुरीतियों का विवेचन करती है। चन्द्रधर शर्मा गुलेरी जी की कहानियां सामाजिक पृष्ठभूमि पर लिखी गई रचनायें है। 'बुद्ध का कांटा' कहानी में अल्हड़ वाला का चित्रण है। 'सुखमय जीवन' प्रेम कर्तव्य पर आधारित रचना है। 'उसने कहा था' शीर्षक कहानी एक आदर्शात्मक रचना है। श्रीमती फूल देवी लिखित 'बड़े घर की बेटी' कहानी सामाजिक प्रवृत्ति प्रधान रचना है।

पूर्व प्रेमचन्द्र युग सामाजिक दृष्टि से नव चेतना के जागरण का युग है। क्योंकि इसमें सम्पूर्ण भारतीय समाज में व्यापक परिवर्तन हुये। इस युग के प्रायः सभी लेखकों ने अनेक सामाजिक समस्याओं का निरूपण अपनी कहानियों में किया और निदान रूप में विविध मुकाव भी प्रस्तुत किये। विशेष रूप से समकालीन कुरीतियों, पारिवारिक जीवन की समस्या, संयुक्त परिवार की समस्या, मिथ्या प्रदर्शन की भावना, सामाजिक नैतिकता की समस्या, रूढ़िवादिता की समस्या, अनमेल विवाह की समस्या तथा नारी जीवन से संबंधित अनेक समस्याओं का चित्रण हुआ है। गिरिजादत्त बाजपेयी लिखित 'पण्डित और पण्डिततताइन' कहानी में सामाजिक सन्दर्भ में अनमेल विवाह की समस्या की प्रधानता दी गई। किशोरीलाल गोस्वामी लिखित 'इन्दुमती' में समाज में स्वच्छन्द प्रेम की समस्या पर प्रकाश डाला गया।

भारतेन्द्र हरिश्चन्द्र लिखित 'कुलीन कन्धा' में सामाजिक समस्याओं का चित्रण हुआ है।

उन्नीसवीं सदी के पूर्व से ही भारत वर्ष में विभिन्न रूढ़ियों, मान्यताओं अन्धविश्वासों तथा मिथ्या–आडम्बरों का प्रभाव प्रबल था। यद्यपि समाज सुधारकों ने जीवन के इस दृष्टिकोण में परिवर्तन के प्रयास किये। मानव को चिन्तन का आधार बनाकर भौतिक मूल्यों की स्थापना के विविध प्रारूप किये गये। ब्रह्म समाज भावना समाज, आर्य समाज तथा अन्य किसी भी धार्मिक आन्दोलन में आध्यात्मवाद पर बल नहीं दिया गया था फिर भी सामाजिक रूढ़ियों को समाप्त करने हेतु सुधारवादी आन्दोलन चलाये जाने पर भी सामाजिक ईधन शिथिल न हो सके। सदियों से चले आ रहे रस्मों रिवाज को अनपढ़ व्यक्ति त्यागने को तैयार न था। राधाचरण गोस्वामी की रचनाओं में सामाजिक उन्नति की दृष्टि से धार्मिक अन्धविश्वासों का विरोध पाया जाता है। गोस्वामी जी ने अपनी रचना 'यशलोक की यात्रा में व्यंग्य करते हुये लिखा है– 'यदि गौ की पूंछ पच्छ कर पार उतर जाते हैं तो क्या बैल से नहीं उतर सकते और जब बैल से उतर सकते हैं तो कुत्ते ने क्या चोरी की ?[151]

रामचन्द्र शुक्ल लिखित कहानी 'ग्यारह वर्ष का समय' में परम्परावादी एवं रूढ़िवादी नारी शोषण का वर्णन मिलता है। समाज की दृष्टि से वह उस समय विधवा समझी जा रही थी। इस युग के एक मात्र कहानीकार की गुलेरी जी ने सामाजिक चेतना की दृष्टि से नवीन मूल्यों की स्थापना में महत्वपूर्ण कार्य किया।

स्वतन्त्रतता पूर्व की हिन्दी कहानियों में जीवन की प्रतिष्ठता का अभाव है। पुरानी कहानी कल्पना, भावुकता और आदर्शों से ही अधिक सम्बन्धित रही है, उसमें जड़ मूल्य है, धंधे बधाये रिश्ते हैं और मुर्दा आदर्शों की एक बंधी लक्ष्मण रेखा है, जिसे लांघना कहानीकार के लिए घोर सामाजिक अपराध है। परिणामतः सारी कहानी पाप–पुण्य, सुख–दुःख, सौतेली माँ, सांस, कुल्टा, शराबी और चरित्रहीन के इर्द गिर्द ही घूमती है। ऐसी कहानी इकहरे निष्कर्ष पर टूटकर उपदेश अथवा संदेश का रूप ग्रहण कर लेती है। यह उपदेश भी कहानीकार की नितान्त वैयक्तिक मान्यताओं का प्रतिबिम्ब है। सामाजिक दृष्टि से इसे उद्देश्य विहीन कहा जा

[151] यशलोक की यात्रा, श्री राधाचरण गोस्वामी, पृ.सं.–4

सकता है। प्रेमचन्द्र, यशपाल और अज्ञेय को छोड़कर किसी भी कहानीकार के मस्तिष्क में सुनिश्चित उद्देश्य नहीं था। मजे की बात यह है कि इस समय की कहानी में प्रगतिशील विचारों की स्त्रियों को चरित्रहीन और कुल्टा का खिताब देकर समाज में पनपी संघर्षशील चेतना की जड़े की उखाड़ दी गयी। इस कहानी को वर्तमान की यथार्थवादी जमीन से काट कर अतीत की अंधी गुफाओं में फेंक दिया गया। वह जीवनभर नवीन सामाजिक चेतना से वंचित रही।

प्रेमचन्द्र युग के कहानी साहित्य की सामाजिक प्रवृत्ति पर इस युग की पृष्ठभूमि का व्यापक प्रभाव पड़ा है। सामाजिक प्रवृत्ति के सर्वप्रथम कहानीकार मुंशी प्रेमचन्द्र की कहानियां भारतीय समाज का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत करती है। ऐसा शायद ही कोई सामाजिक प्रश्न होगा, जिसे प्रेमचन्द्र ने अपनी कहानी में प्रस्तुत न किया हो। प्रेमचन्द्र लिखित कहानियों में नारी शोषण पूर्णरूप से विद्यमान है। इस युग के अन्य कहानीकारों ने भी अपनी कहानियों में सामाजिक प्रवृत्तियों और समस्याओं का चित्रण किया है। इस दृष्टि से जयशंकर प्रसाद उल्लेखनीय है। इन्होंने नारी जीवन की विभिन्न सामाजिक समस्याओं एवं उनके शोषण का चित्रण किया है। प्रसाद की रचनाओं में यथार्थ एवं आदर्श का सुन्दर समन्वय है। प्रसाद लिखित 'नारी' तथा 'ग्राम गीत' कहानियां समकालीन नारी जीवन की समस्याओं का चित्रण प्रस्तुत करती है। विश्वम्भर नाथ 'कौशिक' ने अपनी कहानियों में समाज का बहुपक्षीय चित्रण प्रस्तुत किया है तथा नारी से सम्बन्धित सामाजिक समस्याओं का समाधान वह आदर्श वादी रूप से नहीं करते।

भगवती प्रसाद बाजपेयी ने समाज के विभिन्न वर्गों का चित्रण प्रस्तुत किया है। 'निंदिया लागी' कहानी में बाजपेयी जी ने स्त्रियों की सामाजिक दुरवस्था का चित्रण किया है।

पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र' ने सामाजिक कुप्रथाओं का चित्रण किया है, जिससे नारी शोषित हो रही थी। 'उग्र' जी का सामाजिक दर्शन यथार्थपरक अवश्य है, परन्तु उससे समाज को प्रगति शील विचार नहीं मिलते हैं।

राजाराधिका रमण सिंह ने अपनी कहानियों में सामाजिक एवं नारी जीवन के विविध पक्षों का वर्णन किया है। उनकी कहानियों का सामाजिक दृष्टिकोण आदर्शपरक है।

आचार्य चतुर सेन शास्त्री की सामाजिक कहानियां सामाजिक कुरीतियों तथा नारी शोषण के विभिन्न आयामों को प्रस्तुत करती है। 'विधवा आश्रम', 'पतिता' ढावे लाइट तथा 'कन्यादान' में स्त्री शोषण एवं स्त्री शिक्षा सम्बन्धी पारिवारिक समस्याओं का चित्रण हुआ है।

इस युग के महान कहानीकारों में प्रेमचन्द्र ही ऐसे थे, जिन्होंने अपनी कहानियों में नारी शोषण के विभिन्न पक्षों को एक अनूठे ढंग से प्रस्तुत किया। उनकी कहानियां 'आभूषण' 'घर जमाई' 'दो सखियां', 'सौभाग्य के कोड़े', 'प्रेम का उदय', 'मर्यादा की बेदी', 'रक का मार्ग' आदि सामाजिक कहानियों में नारी शोषण पूर्ण रूप से विद्यमान है। प्रेमचन्द्र लिखित 'दो सखियां' कहानी में एक पात्र कहता है, 'मैं वर्तमान वैवाहिक प्रथा को पसन्द नहीं करता। इस प्रथा का आविष्कार उस समय हुआ, जब मनुष्य सभ्यता की प्रारम्भिक दशा में था, तब से दुनिया बहुत आगे बढ़ी है, परन्तु विवाह प्रथा में जी भर का भी अन्तर नहीं बड़ा। यह प्रथा वर्तमान काल के लिए उपयोगी नहीं।'[152] प्रेमचन्द्र का विचार था कि विवाह के सम्बन्ध में स्त्री पुरूष को समान अधिकार होना चाहिए पुरुष स्त्री पर हुकुमत करना अपना जन्म सिद्ध अधिकार समझता है। 'कुसुम' कहानी इसी प्रथ को प्रस्तुत करती है।

आदिकाल में स्त्री पुरूष की उसी तरह सम्पत्ति थी, जैसे गाय, बैल या खेती बाड़ी। पुरूष को अधिकार था, स्त्री को बेचे, गिरवी रखे या मार डाले। विवाह की प्रथा उस समय केवल यह थी कि वर पव अपने शूर सामन्तों को सशस्त्र लेकर आता था और कन्या को उड़ा ले जाता था। कन्या के घर रूपया पैसा, अनाज या पशु जो कुछ उसके हाथ लग जाता था, उसे वह उठा ले जाता था। वह उस स्त्री को घर ले जाकर उसके पैरों में बेड़ियां डालकर उसे घर में बंद कर देता था। उसके आत्म सम्मान के भावों को मिटाने के लिए यह उपदेश दिया जाता था कि पुरूष ही उसका देवता है और सुहाग ही उसकी सबसे बड़ी विभूति है।

[152] 'मानसरोवर' भाग–4, मुंशी प्रेमचन्द्र, पृ.सं.–240

आज कई हजार वर्ष बीतने पर भी पुरूष के उस मनोभाव में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। सभी पुरानी प्रथायें विकृत तथा संस्कृत रूप में मौजूद है।[153]

प्राचीन मान्यताओं के अनुसार स्त्री को यही शिक्षा मिली कि पति को देव तुल्य समझना चाहिए, अतः वह अपनी इच्छानुसार कुछ नहीं कर सकती है। समझ में नहीं आता कि उसका सुधार क्यों करते हो। विरले ही माता–पिता होंगे, जिनके सास पुत्रों के बाद भी एक कन्या उत्पन्न हो जाय तो वे संघर्ष उसका स्वागत करें। इसका कारण केवल यही है कि दहेज की दर दिन दूनी रात चौगुनी पावस काल के जलयंग के समान पढ़ती जा रही है। कितने ही माता–पिता इस चिन्ता में धुल धुल कर अकाल मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं। कोई सन्यास ग्रहण कर लेता है, कोई कन्या को बूढ़े के गले मढ़ कर अपना गला छुड़ाता है। पात्र छुपान के चिन्तन करने का मौका कहां।[154]

प्रेमचन्द्र ने इस सामाजिक समस्या को, जिससे स्त्रियों का खुलकर शोषण होता है, अपनी कहानियों का कथ्य बनाया है। यह वर के पिताओं की मनोवृत्तियों पर टीका करते हुए कहते हैं, 'लुप्त तो ये हैं जो लोग बेटियों के विवाह की कठिनाइयों को भोग चुके होते हैं, वही बेटों के विवाहों के अवसर पर बिल्कुल भूल जाते हैं कि हमें कितनी ठोकरें खानी पड़ी थी। जरा भी सहानुभूति प्रकट नहीं करते, बल्कि कन्या के विवाह में जो तावान उठाया था, उसे चक्रवृद्धि ब्याज के साथ बेटे के विवाह में वसूल करने पर कटिबद्ध हो जाते हैं।[155]

प्रेमचन्द्र ने 'कुसुम' कहानी में यही बताया है कि दहेज अधिक न मिल सकने के कारण पति–पत्नी में आपसी मतभेद हो जाता है। और दहेज न मिल सकने के कारण विदेश जाने में असमर्थ है। प्रेमचन्द्र ने इस भयंकर प्रथा को सामाजिक प्रथा कहा है। कहानी की नायिका कुसुम का जीवन नरक बन जाता है कि 'वाह री दुनिया' और वाह रे समाज। तेरे यहां ऐसे समाज के द्वारा पड़े हुए हैं जो एक अवला का जीवन संकट में डालकर उसके पिता पर ऐसा अत्याचार पूर्ण दबाव डाल

[153] 'मानसरोवर' भाग–2, मुंशी प्रेमचन्द्र, पृ.सं.–19
[154] 'मानसरोवर' भाग–3, मुंशी प्रेमचन्द्र, पृ.सं.–38
[155] 'मानसरोवर' भाग–3, मुंशी प्रेमचन्द्र, पृ.सं.–39

कर ऊंचा पद प्राप्त करना चाहते हैं। विधार्जन के लिए विदेश जाना बुरा नहीं, ईश्वर सामर्थ्य दे तो शॉक से जाओं, किन्तु पत्नी का परित्याग करके ससुर पर इसका भार रखना निलर्ज्जता की पराकाष्ठा है। तारीफ की बात तो तब थी कि तुम अपने पुरुषार्थ से जाते, इस तरह किसी की गर्दन पर सवार होकर अपना आत्मसम्मान बैध कर गये तो क्या गये।

प्रेमचन्द्र धूप में दाम्पत्य जीवन की अनेक समस्याये हैं जिनमें पति का पत्नी के प्रति दुर्व्यवहार, पत्नी की उपेक्षा, उस पर अधिकार दिखाना, विश्वासपात्र आदि प्रमुख थी। 'जीवन का शाप' कहानी में सम्पादक क्रोधवश अपनी पत्नी के साथ दुर्व्यवहार करते हैं। गुलशन उनकी पत्नी पति के इस दुर्व्यवहार से दुःखी होकर मायके चली जाती है। वे गुलशन पर क्यों नाराज होते हैं। प्रेमचन्द्र का कहना है– 'गुलशन पर क्यों बिगड़ जाते हैं। इसलिए कि उनके आदमी ने उन्हें रूठ जाने के शिवा और दूसरा दण्ड नहीं दे सकती। इतनी नीच कायरता है कि हम सब जनों के सामने तुम दिलाये और जो हमारे लिए जीवन का बलिदान कर रही हो उसे काटने दोड़ें।[156]

दाम्पत्य जीवन में अविश्वास भी दुःख का कारण बन जाता है। 'लांछन' ऐसी ही कहानी है, जिसमें देवी अपने पति से कपटभाव रखती है जिससे उसके और पति के बीच दीवार खड़ी हो जाती है। इसमें देवी का अपराध केवल इतना ही था कि वह मुन्नू मेहतर और शोहदे रजा मियां से बाते करती है। वह क्रोध में आकर कहती है 'वाह री तकदीर'। अब मैं इतनी नीच हो गई कि मेहतरों से, जूते बालों से आशनाई करने लगी। इस भले आदमी को ऐसी बातें मुंह से निकालते शर्म नहीं आती।... जहां इज्जत नहीं, मर्यादा नहीं, प्रेम नहीं, विश्वास नहीं, वहां रहना बेहयायी है। कुछ में उनके हाथ बिक तो गई ही नहीं कि ये जो चाहे करें, मारे काटे, पड़ी लड़ा करें। सीता जैसी पत्नियां होती थी तो राय जैसे पति भी होते थे।[157]

दाम्पत्य जीवन में सहानुभूति बहुत आवश्यक है। इसके अभाव में स्त्री का शोषण होता रहता है तथा दाम्पत्य जीवन हमेशा दुःखी रहता है। प्रेमचन्द्र युग में

[156] मानसरोवर' भाग–1, मुंशी प्रेमचन्द्र, पृ.सं.–332
[157] मानसरोवर' भाग–1, मुंशी प्रेमचन्द्र, पृ.सं.–382

अनमेल विवाह भी एक गहन सामाजिक समस्या थी जो नारी के शोषण का माधव गयी। अनमेल विवाह नारी की दाक्षता का स्वरूप प्रकट चलता है। नारी समाज की दुर्गति करने और उन्हें कुमार्ग की ओर जाने पर विवश करने में अनमेल विवाह एक दोष पूर्ण तथ्य है। प्रेमचन्द्र की कहानी 'भूत' में पीड़ित सीता नाव चौबे वुद्धावस्था में अपनी पत्नी की मृत्यु के उपरान्त उस बच्ची से विवाह का प्रस्ताव रखते हैं, जिसको उन्होंने बेटी समझ कर पाला था, इसी के विपरीत एक कहानी 'आधार' है जिसमें मथुरा की मृत्यु के बाद जबान अनूपा का सम्बन्ध उसकी सास मथुरा के छोटे भाई से कर देती है। जिसकी आयु लगभग पांच वर्ष है। अनूपा अब बुढ़ापे की तरफ जा रही है। उसका पति मथुरा का भाई वासुदेव जवान हो रहा है। वह सोचने लगती है... जिसने चौदह वर्ष पहले वासुदेव को पति भाव से देखा था उसका स्थान मातृ भाव ने ले लिया था। सगाई के दिन ज्यों ज्यों निकट आते जाते थे उसका दिल बैठा जाता था। जिसे बालक की भांति पाला पोसा उसे पति बनाते लज्जा से उसका मुख लाल हो जाता।

प्रेमचन्दोत्तर युगीन कहानियों में सामाजिक समस्याओं का चित्रण किया गया है, इस युग में नारी देवता का जागरण हो रहा था। नारी के स्वावलम्बन की समस्या, वैवाहिक जीवन की समस्या, संयुक्त परिवार, दहेज, अनमेल विवाह की समस्या नारी के आर्थिक स्वावलम्बन का समस्या, पर्दा प्रथा एवं विधवा विवाह समस्या आदि का चित्रण मुख्य रूप से किया गया है। इन विभिन्न सामाजिक समस्याओं का चित्रण विशेष रूप से इलाचन्द्र जोशी, भगवती चरण वर्मा, यशपाल, अज्ञेय, जैनेन्द्र कुमार, मन्नथ नाथ गुप्त, विष्णु प्रभाकर, कमला देवी चौधरी आदि ने अपनी कहानियों में प्रस्तुत किया है। यशपाल ने पर्दे को विकृतियां उत्पन्न करने का कारण माना है। 'फूलों का बुता' शीर्षक कहानी में लेखक ने पर्दा प्रथा का खण्डन किया है। आज की नारी पर्दे में रहना पसन्द नहीं करती। वह अपनी स्थिति को किसी सीमा तक समझ चुकी है। पतिस्पर्धा शोषक पुरुष समाज का हथियार है। बन्धन केवल स्त्री के लिए ही है। स्त्री पुरुष की दासी गात्र बन कर रह जाती है। पुरुष इन सब बन्धनों से आजाद है। 'वो दुनिया' की बहू को घर में महरी के सामने

लम्बे घूंघट में रहना पड़ता है। उसके घर का दरवाजा भी कभी खुला नही रहता। यह सब सामाजिक शोषण ही है।

अगर कान्त लिखित 'जिन्दगी और जोंक', नरेश मेहता सिंह लिखित 'सिका बेटा', 'दूसरे की पत्नी के पत्र', रगिव राघव लिखित 'ममता की मजबूरी', 'हरि शंकर परवाई लिखित 'भोलाराम का जीव', कमलेश्वर लिखित 'सुखों के रासो', मोहन राकेश लिखित 'जानवर और जानवर', शिवप्रसाद सिंह लिखित 'केवड़े का फूल', 'सपेरा', 'माटी की औलाद', 'गंगा तुलसी' तथा श्री कान्त वर्मा लिखित 'शव यात्रा' कहानी शोषण के विरुद्ध समाज के नैतिकतावादी दृष्टिकोण को प्रस्तुत करती है।

इस युग के अनेक कहानीकारों ने मानव मन की कुण्ठाओं का विशद विवेचन किया है। नरेश मेहता लिखित 'किसका बेटा' कहानी में समाज के विविध व्यक्तियों द्वारा एक भिखारिन को देखकर उसका उपहास करना, गरीब सरदार को उसका पति बनाना और उस भिखारिन से उसके बेटे के बाप का नाम पूछना उसकी भावनाओं से खिलवाड़ करना ही है। रगिव राघव की 'ममता की मजबूरी' कहानी में विमला के पिता की मौत के बाद उसके पिता के दोस्त एक ओर उसको पुत्री मानते हैं और दूसरी ओर उसकी विवशता से लाभ उठाते हुए व्यविचार भी करते हैं। समाज में मानसिक और भावनात्मक रूप से विमला निरन्तर पीड़ाओं को झेलती रहती है।

नारी समाज में अनमेल विवाह भी शोषण का एक कारण है। सामाजिक शोषण की दृष्टि से भगवती प्रसाद बाजपेयी लिखित 'दुग्धपान' शीर्षक कहानी में भी अनमेल विवाह की समस्या प्रस्तुत की गई है। इसमें अठारह वर्षीया कन्या का विवाह पैतालिस वर्षीय प्रौढ़ से हो जाता है। यद्यपि पति का हमेशा यही प्रयत्न रहा कि उसकी पत्नी प्रसन्न रहे और माता–पिता भी चाहते थे कि वे अपनी पुत्री का विवाह भुयोग्य घर से कर दें, परन्तु अपनी सामर्थय के अनुकूल वर न पाने के कारण ही अधेड़ उम्र के व्यक्ति से उसका विवाह करना पड़ता है। पति हमेशा पत्नी की रूह देखकर चलता है। उसकी प्रसन्नता में ही पति भी प्रसन्न था, परन्तु पत्नी का विचार है कि 'खाना–पीना', कपड़े लत्ते और धन दौलत ही नारी ह्रदय को जीतने के लिए काफी नहीं होती। एक अवस्था होती है जब उसका ह्रदय अपने

स्वामी में उस यौवन को भी प्राप्त करने को लौलुप हो उठता है, जो आंधियों से खेलने की सामर्थ्य रखता है। मेरे स्वामी में अब वह चीज नहीं थी। इनके यौवन का दानव शान्त हो चुका था। मैं उस समय अपने को पाप और पुण्य, स्वर्ग और नरक, प्रकाश और अंधकार, काला और उजाला, सत्य और असत्य, मतलब यह है कि जीवन और संसार के सारे भेदोपभेद से परे देखती थी। मैं नदी बन रही थी और बहते जाना ही मैंने सीखा था। पत्नी की उदासीनता का कारण भी यही था, इसी कारण से ही वह मि. वाचू जो उसके पति के अन्तरंग मित्र थे, की ओर आकर्षित होने लगती है। पति शायद पत्नी के इस रूप को देख न सका और अन्त में विषपान कर लेता है।[158] अनमेल विवाह ही दाम्पत्य जीवन को कष्टप्रद बना देता है। कुलीन एवं सुशिक्षित युवतियां जब इस विवाह का शिकार होती है, तो उनका दाम्पत्य जीवन कष्टप्रद हो जाता है। पति पत्नी में अविश्वास उत्पन्न हो जाता है, जो सामाजिक शोषण के रूप में पारिवारिक जीवन का अभिशाप बन जाता है।

हिन्दू समाज का दृष्टिकोण नारी के प्रति सदैव असहानुभूति पूर्ण रहा है। पुरूष नैतिक दृष्टि से कितना ही पतित क्यों न हो जाय, यह समाज की दृष्टि में चरित्रवा नही समझा जायेगा लेकिन गृहिणी और मातृपद की अधिकारिणी नारी परिस्थितिवश पतिता घोषित कर दी जाती है। संसार के अनेक ऐसे देश है जहां स्त्री स्वतन्त्र है। यह समानाधिकार प्राप्त कर चुकी है। वहां वैश्या समस्या के मुख्य कारण नैतिक मूल्यों का विघटन, आर्थिक विषमता, भौतिकता वादी दृष्टि कोण आदि है। जहां की स्त्रियों के लिए कोई पतिव्रत धर्म नहीं है। वे इस हक में काफी स्वतन्त्र हो चुकी है।

भारत जैसे देश में जहां नारी के लिए सर्वोच्च धर्म पतिव्रत धर्म है, वहां वैश्या वृत्ति का होना आश्चर्यजनक बात है। भारतीय समाज में नारी से सम्बन्धित सामाजिक कुप्रथा विधवा प्रथा, दहेज प्रथा, बहू पत्नी विवाह आदि से त्रस्त्र नारी ही आर्थिक स्वावलम्बन हेतु वैश्यावृत्ति को चुनती है। इसका दोष समाज पर है, जहां वैवाहिक चुनाव उचित ढंग से नहीं होता। नारी जब साम्पत्तिक अधिकारों से वंचित रह जाती है तब इस व्यवस्था को स्वीकार करती है।

---

[158] स्नेह वाती और लो, श्री भगवती प्रसाद बाजपेयी, पृ.सं.–113

'नरक का मार्ग' कहानी में प्रेमचन्द्र ने अनमेल विवाह को वैश्या वृत्ति का कारण बताया है। कहानी की नायिका का विवाह एक वृद्ध से हो जाता है। उसे पति से वह प्रेम न मिला, जिसकी वह इच्छा रखती थी। वह प्रेम जैसी दिव्य वस्तु को प्राप्त करने के लिए आधी रात को घर से निकल जाती है मार्ग में उसे एक बुढ़िया मिल जाती है, जो उसे अपने घर ले जाती है तथा उसे वैश्या बनने पर ाध्य करती है। वह सोचती है 'आह, वह बुढ़िया, जिसे में आकाश की देवी समझती थी, नरक की डायन निकली। मेरा सर्वनाश हो गया, मैं अमूत खोजती थी, विष मिला, निर्मल स्वच्छ प्रेम की प्यासी थी, गन्दे विषाक्त नाले में गिर पड़ी। वह दुर्लभ वस्तु न मिलनी थी, न मिली। लेकिन अधःपतन का अपराध मेरे सिर नहीं, मेरे माता–पिता और उस बूढ़े पर है, जो मेरा स्वामी बनना चाहता था।[159] वास्तव में वह परिस्थितिवश ही वैश्वावृत्ति स्वीकार करती है। यदि उसका पति उसे प्रेम देता तो शायद वह इस नारकीय जीवन को कभी पसन्द न करती। वह आगे कहती है– 'मैं फिर कहती हूं अब भी अपनी बालिकाओं के लिए मत देखो धन, मत देखो जायदाद, मत देखों कुलीनता, केवल वर देखा। स्त्री सब कुछ सह सकती है दारूण दुःख, बड़े से बड़ा संकट अगर नहीं सह सकती तो अपने यौवन काल की उमंगों का कुचला जाना। रही मैं मेरे लिए अब इस जीवन में कोई आशा नहीं इस अधम दशा को भी उस दशा से न बदलूंगी, जिससे निकल आई हूं।'[160]

समाज की विधवा समस्या को हिन्दी साहित्य के लगभग सभी कहानीकारों ने पर्याप्त महत्व दिया है। प्रेमचन्द्र ने अपनी कहानियों में विधवा समस्या के लगभग सभी पहलुओं का चित्रण किया है। प्रेमचन्द्र की धिक्कार कहानी की नायिका शेष जीवन सामाजिक शोषण को सहते हुए काटती है। 'विधवा के लिए पूजा पाठ है, तीर्थव्रत हैं, मोटा खाना है, मोटा पहनना है। उसे विनोद और विलास, राग और रंग की क्या जरूरत, विधाता ने उसके मुख के द्वार बन्द कर दिए।'[161]

श्रीमती उषा देवी मिश्रा लिखित 'उन्नीस सौ पैंतीस' कहानी भी विधवा समस्या को प्रस्तुत करती है। इनके द्वारा लिखित अन्य कहानी 'मृत्युन्जयी' में विधवा

[159] मानसरोवर' भाग–3, मुंशी प्रेमचन्द्र, पृ.सं.–30
[160] मानसरोवर' भाग–3, मुंशी प्रेमचन्द्र, पृ.सं.–32
[161] मानसरोवर' भाग–3, मुंशी प्रेमचन्द्र, पृ.सं.–24

समस्या का हल प्रस्तुत किया गया है। इस प्रकार से प्रेमचन्द्र युग से ही संयुक्त समाज के विघटन की प्रक्रिया दृष्टिगोचर होती है। परवर्ती युगों में इसी के परिणाम स्वरूप परिवार का सामाजिक रूप भंग होकर एकाकी परिवार की प्रथा का विकास हुआ।

प्रेमचन्द्र युग के बाद कहानी साहित्य में पूर्व युग की तरह सामाजिक शोषण की प्रवृत्ति का विकास मुख्य रूप से अनेक कहानी कारों में दिखाई देता है। सामाजिक जीवन के विभिन्न पक्षों को जैसे परम्परागत रीतिरिवाज, अन्धविश्वास, सामाजिक कुरीतियां, निर्वाह आदि जिनके द्वारा नारी का सामाजिक शोषण हुआ है, इन कहानी कारों ने अपना विषय बनाया है। इस दृष्टि से जैनेन्द्र कुमार, भगवती चरण वर्मा, यशपाल, इलाचन्द्र जोशी, उपेन्द्र नाथ अश्क', सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्सायन 'अज्ञेय' आदि कहानीकारों के नाम उल्लेखनीय है।

जैनेन्द्र कुमार की 'वोक्षण' 'निस्तार', 'ब्याह', 'विस्मृति', 'अन्धे का भेद', 'निराकरण' आदि कहानियां सामाजिक शोषण की प्रवृत्ति को दिखाती है। जैनेन्द्र कुमार व्यक्तिवाद को प्रधानता देते हैं, क्योंकि उनका विचार है कि समाज में उनका कोई पृथक अस्तित्व नहीं।

इलाचन्द्र जोशी लिखित 'परिणीता', 'बदला', 'विद्रोही', 'पागल की सफाई', 'कायालिक' तथा 'रात्रिधर' आदि कहानियों सामाजिक शोषण के विविध चित्र प्रस्तुत करती है। जोशी जी का विचार है कि इन सामाजिक शोषण के माध्यमों को बुद्धि द्वारा हल किया जा सकता है न कि दण्ड के द्वारा।

'अश्क' की अधिकांश कहानियां सामाजिक जीवन के शोषण मूलक विविध पक्षों के चित्र प्रस्तुत करती है जिसमें नारी का शोषण स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। इनकी कहानी 'अंकुर', 'आर्टिस्ट' 'उबाल', 'खिलौने', 'नासूर', 'बच्चे', 'मैमने' तथा 'सपने' इत्यादि कहानियां सामाजिक शोषण को यथार्थ रूप में प्रस्तुत करती है। क्रान्तिकारी मन्थव नाथ गुप्त ने भी अपनी कहानियों में नारी की समस्याओं, रूढ़ियों और सामाजिक पारिवारिक शोषण की विकृतियों का चित्रण किया है। इस दृष्टि से 'देश भक्ति का अन्त', 'महान अमीर ने अखबार निकाला', 'तीसरी

बीबी', 'सोखते का टुकड़ा', 'महायुद्ध की देन', वाइसराय का मंडल तथा 'मंत्र का मूल्य' आदि कहानियां उल्लेखनीय है। गुप्त जी के विचार में इनत माम सामाजिक विकृतियों का मुख्य कारण सामाजिक एवं आर्थिक शोषण की विषमतायें हैं।

विष्णु प्रभाकर की कहानियों में सामाजिक जीवन के विभिन्न पक्षों का वर्णन हैं। सामाजिक कुरीतियों और अन्धविश्वासों का चित्रण भी इनकी कहानियों में मिलता है। उनकी कहानी 'आश्रित' में नारी समाज की शोषणपरक समस्याओं का चित्रण हुआ है।' सच में सुन्दर हूँ।[162] मैं परिवार की समस्याओं का सामाजिक सन्दर्भ में चित्रण हुआ है।' एक दुराचारिणी कहानी समाज की वैश्या समस्या से सम्बन्धित रचना है। सामाजिक समस्याओं एवं शोषण से सम्बन्धित अन्य रचनायें 'नागपपंस', 'ठेका', 'नफरत केवल नफरत'[163] आदि है।

इस युग के अनेक कहानीकारों ने सामाजिक शोषण से सम्बन्धित समस्याओं को अपनी कहानियों में चित्रित किया है जिनमें विधवा समस्या भी एक है। श्रीमती होमवती देवल लिखित 'अपना घर' कहानी की विधवा नारी की करूण गाथा प्रस्तुत करती है। उमा एक सम्पन्न परिवार की युवती थी, परन्तु पति की मृत्यु के उपरान्त परिवार में हेय समझी जाती थी। उसने कभी ऐसा नहीं सोचा था कि उस घर का एक अन्न का दाना भी पोषण के अतिरिक्त उसके शोषण का माध्यम बन जायेगा। इस युग की नारी में आत्मनिर्भरता की भावना नहीं थी। वह प्राचीन रूढ़ियों को मानती थी, उसे तोड़ने का साहस इस नारी में न था।

श्रीमती कमला देवी चौधरी लिखित 'दृष्टि का मूल्य' कहानी में सामाजिक स्तर पर बाल विधवा ललिता का चित्र उभर कर सामने आता है। वह बाल विधवा है तथा शोषण के कारण आधुनिक, एवं सामाजिक चेतना से अप्रभावित है। उसका जीवन अनाथ और कलंकित होकर रह जाता ळें

यशपाल ने अपनी कहानियों में सामाजिक एवं पारिवारिक स्तर पर अनमेल विवाह से उत्पन्न विकृतियों का चित्रण अपनी कहानी 'रतिया' में प्रस्तुत किया है। विपन्नता के कारण रतिया का सामाजिक शोषण होता है तथा उसका विवाह एक

[162] विष्णु प्रभाकर, मेरी तैंतीस कहानियां, पृ.सं.–12
[163] विष्णु प्रभाकर, मेरी तैंतीस कहानियां, पृ.सं.–102

बूढ़े अपाहिज से हो जाता है। 'तीसरी चिंता' शीर्षक कहानी भी अनमेल विवाह प्रस्तुत करती है तथा यशपाल की 'सोभा का साहस' कहानी भी उल्लेखनीय है। यशपाल की दृष्टि में नैतिक मानदण्डों की सुरक्षा के लिए समाज द्वारा बनाया गया विधान बदलना होगा। यशपाल ने इस कुप्रथा की समाप्ति के लिए नारी जाति को ही साहस के साथ आगे आने का निमन्त्रण दिया है।

विनोद शंकर व्यास लिखित 'पतिता' कहानी में इस तथ्य को उजागर किया गया है कि रागिनी जैसी युवतियों को वैश्या बनाने वाला यही समाज और पारिवारिक लोग है। निर्धनतावश तथा संकीर्ण मनोवृत्ति वाले युवक दिवाकर द्वारा तिरस्कृत रागिनी वैश्या बन जाती है।

भगवती चरण वर्मा लिखित 'एक अनुभव' में वैश्यावृत्ति का मुख्य कारण समाज की इकाई पारिवारिक निर्धनता को ही बताया गया है। वर्मा जी का विचार है कि 'रूपया मनुष्य को पशु बना सकता है, रूपये के वास्ते मनुष्य धूमित काम करने को बाध्य होता है। स्त्री का संकोष्ठ गुण लज्जा है। मेरे सामने जो स्त्री खड़ी थी चांदी के चन्द टुकड़ों की आवश्यकता ने उसे इतना अधिक गिरा दिया था कि वह अपने सर्वोत्तम गुणों को तिलांजलि दे चुकी थी।'[164]

भगवती चरण वर्मा लिखित अन्य कहानी 'उन्माद' सामाजिक सन्दर्भों में एक विवाहिता युवती नीलिमा की कहानी है। उनके अनुसार नारी की सबसे बड़ी दुर्बलता उसमें आत्मविश्वास का न होना है। उनकी दृष्टि में पर पुरूष प्रेम नारी स्वतन्त्रता है। नारी अब समाज का एक अंग बन चुकी है। उसका कार्य गृह और कुटुम्ब तक ही सीमित नहीं है। वह समाज में रहकर जीवन संघर्ष कर सकती है। आधुनिक नारी के सम्मुख प्रश्न यह है कि वह गृहणी बनी रहे या वह घर के बाहर रहे।

देवी दयाल चतुर्वेदी 'मस्त' लिखित 'लक्ष्य बोध' कहानी में इस तथ्य को उजागर किया है कि नारी गृहणी है, उसका संसार उसका घर है, जहां उसका पति और बच्चे है। वाह्य जीवन उसके लिए निषेध है। पतिवृत धर्म ही उसके चरित्र ही

[164] मेरी कहानियां, श्री भगवती चरण वर्मा, पृ.सं.—114

कसौटी है। परम्परागत पुरूष स्त्री का यही रूप देखना चाहता है कि वह मात्र गृहणी होकर ही रहे। पुरूष की सोच के अनुसार नारी का जीना मरना उसकी अपनी विवशता है। इसी विवशता में शोषण के कीटाणु पनपते हैं।

इस युग के अधिकांश कहानीकारों ने नारी की स्वतन्त्रता की मांग को एक आवश्यकता के रूप में चित्रित किया है और संकेत दिया है कि नारी को आर्थिक रूप से परिवार में स्वावलम्बी होना चाहिए।

सामाजिक रूढ़ियों का प्रभाव नारी वर्ग पर सबसे अधिक बड़ा है। उड़ान और अशिक्षा के कारण परिवार में सदियों से उसका शोषण चला आ रहा है। नारी आर्थिक दृष्टि से पुरूष पर आश्रित है। ऐसी स्थिति में स्वतन्त्रता की, समानता की बात व्यर्थ है। प्राचीन रूढ़ियों के अनुसार आर्थिक समानता एवं स्वतन्त्रता से पारिवारिक शान्ति नष्ट हो जाती है। समाज में संयुक्त परिवार ही एक समस्या है जिसमें एक व्यक्ति कमाता है तथा परिवार के अन्य सदस्य उस पर आश्रित रहते हैं, ऐसे वातावरण में स्त्री और अधिक दुर्दशा की पात्र बनती है।

भगवती चरण वर्मा का नारी सम्बन्धी दृष्टिकोण अधिक उदार है। नारी जागरण के निमित्त चाहे वह पुरूषों पर कितने अत्याचार करे परन्तु नारी की अन्त में आत्मसमर्पण करती है। इनकी कहानी 'पराजय' तथा 'मृत्यु' इसी कथन की पुष्टि करती है। यह आत्मसमर्पण ही तो शोषण की सहमति है।

प्रेमचन्द्रोत्तर युगीन अधिकांश कहानीकारों ने नारी सम्बन्धी दृष्टिकोण में प्रगतिशीलता का परिचय दिया है। इन कहानीकारों की यह धारणा है कि आधुनिक युग में नारी को दीर्घकालीन संघर्षों के पश्चात जो स्वतन्त्रता मिली है, उस स्वतन्त्रता की रक्षा करनी चाहिए। यशपाल, अश्क तथा भगवती चरण वर्मा आदि कहानीकारों ने सामाजिक रूढ़ियों का विरोध करते हुए नारी जागरण के क्षेत्र में अपने सुधारवादी दृष्टिकोण का परिचय दिया है। इस युग के अधिकांश कहानीकार एक स्वर से इस तथ्य का उद्घोष करते हैं कि जब तक समाज में नारी पूर्णतया आर्थिक रूप में स्वतन्त्र और आत्मनिर्भर नहीं होगी, तब तक उसे शोषण से मुक्ति प्राप्त नहीं होगी।

भारत में स्वातन्त्रयोत्तर युग में सामाजिक क्षेत्र में अनेक परिवर्तन हुए। देश की स्वतन्त्रता के साथ लोगों में नवीन चेतना का जागरण हुआ। नारी को समानाधिकार मिले, इससे उसके अनेक रूप सामने आये। सामाजिक क्षेत्र के विकास के साथ–साथ अनेक पारिवारिक समस्यायें उत्पन्न हो गई। इस युग के कहानीकारों की रचनाओं में रूढ़िवादिता की समस्या, अन्तर्जातीय विवाह की समस्या, नारी शोषण एवं अनेक जीवन से सम्बन्धित समस्यायें, पारिवारिक विघटन की समस्या एवं दाम्पत्य जीवन से सम्बन्धित विभिन्न समस्याओं को प्रस्तुत किया गया है। राजेन्द्र यादव, मोहन राकेश, कमलेश्वर, उषा प्रियम्बदा, धर्मवीर भारती, अमृत लाल नागर, कमल जोशी, श्रीकान्त वर्मा, मन्नू भण्डारी, डॉ0 माया शबनम, ममता कालिया आदि लेखकों ने समाज में एवं परिवार में व्याप्त विभिन्न समस्याओं का चित्रण किया है। प्रस्तुत युग का कहानीकार प्राचीन रूढ़ियों का विरोध करता है तथा शोषण के विरुद्ध नवीन मूल्यों की स्थापना करने का प्रयत्न करता है।

श्रीमती स्वरूप कुमारी वक्शी ने 'कोड़ियों' का नाच तथा 'रेडियम के अक्षर' कहानी संग्रहों में समाज के बहुपक्षीय समस्याओं से सम्बन्धित रचनायें प्रस्तुत की है। डॉ. कंचन लता सब्बरवाल लिखित 'आत्म सम्मान', राजेन्द्र यादव लिखित 'खानदानी घर, शिवप्रसाद सिंह केवड़े का फूल', 'उपहार' तथा 'भग्न प्राचीर', फणीश्वर नाथ रेणु लिखित 'नित्य लीला', 'तीर्थोदक', 'कच्चे धागे', 'चांद चलता रहा', अमृत राय लिखित एक सांवली लड़की, 'समय' रगिय राघव, लिखित 'नई जिन्दगी के लिए', घास पूस तथा 'भय' आदि कहानियां विभिन्न सामाजिक समस्याओं को प्रस्तुत करती है।

राजेन्द्र यादव ने समाज, व्यक्ति व परिवार के विविध चरित्रों को बड़ी गहराई से देखा और परखा है। उनकी कहानियां अधिकांशतः मध्यमवर्गीय परिवार के टूटे और थके हुए व्यक्तियों की कहानियां है। उनकी कहानियां जैसे 'अभिमन्यु की आत्महत्या', 'तलवार पंच हजारी', एक कमजोर लड़की की कहानी, 'बिरादरी बाहर', 'जहां लक्ष्मी कैद है', 'खेल खिलौने', 'प्रतीक्षा' 'टूटना' 'किनारे से किनारे तक' और 'छोटे छोटे ताजमहल' आदि सभी कहानियों में सामाजिक परिवेश एवं नारी का शोषण स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। डॉ0 अष्टभुजा प्रसाद का कथन है कि इन

कहानियों में पारिवारिक आत्मीयता हैं, मनोवैज्ञानिक और चित्रात्मकता है। इन कहानियों में हमारे और आपके बीच के पात्र है।[165]

आजादी के बाद समाज की नई स्थितियों और बदलते हुए पारिवारिक जीवन को पहली बार मोहन राकेश ने बड़ी सहानुभूति और साहस से अभिव्यक्त किया है। मोहन राकेश सामाजिक सचेतना के कहानीकार है। उनका कथ्य किसी अकेले व्यक्ति का न होकर पूरे समाज का है। उनकी कहानियां 'एक और जिन्दगी', 'मिसपाल', 'आद्रा', 'सुहागिने', 'मलबे का मालिक', 'फौलाद का आकाश', 'आखिरी सामान', 'उसकी रोटी', 'जख्म', 'जानवर' तथा 'पांचवें मालिक का फ्लैट' इन सभी कहानियों में अपने आस–पास के निर्जीव वातावरण में निरर्थक टकराहट एक निश्चित जीवन का धुंधभरा ठहराव, लकड़ी के सीकचों में जड़े बड़ी–बड़ी सलावों की तरह ठन्डे और निर्जीव पारिवारिक सम्बन्ध, उनसे उपजें अंधेरे में अपने का न पहचानने की विवशता, अपने को दोहराती हुई एक उब भरी जिन्दगी, बेहद औपचारिक फौलाद की तरह इन्हें और जड़ दाम्पत्य सम्बन्ध, उस दर्द को प्रगाड़ करने वाला अतीत का कोई चमकता हुआ कोई आत्मीय क्षण, आत्मीय जनों के बीच बेगाना होने की यंत्रणा, अकेलापन और निर्वासन, असुरक्षा और आतंक, जो आज के पारिवारिक जीवन के अविभाज्य अंग बनते जा रहे हैं, को राकेश जी ने चित्रित किया है। उन्होंने सामाजिक धरातल की उसकी व्यापकता में स्वीकार किया है, इसी लिए उनकी कहानियां, कहानियां न होकर वक्त की आवाजें हैं।

नई कहानी को प्रतिष्ठित करने वाले कहानीकारों में कमलेश्वर में अपनी 'देवा की माँ' कहानी में एक पूरी पीढ़ी के नारी सत्य को बिना लाग लपैट प्रस्तुत कर दिया है। उनकी अन्य कहानी 'पानी की तस्वीर' अत्यधिक गम्भीर है। तथा जीवन संगिनी के चुनाव, फिर टूटन, द्वन्द्व, दुविधा आदि आधुनिक बोधों से भरी है। कमलेश्वर जिन्दगी की विविधता को ही कहानी का आधार मानते हैं। इस सामाजिक शोषण की विविधता को उनकी 'राजा निरवंसिया', 'मांस का दरिया', 'बोई हुई दिशाएं', 'तलाश', 'नीली झील' और 'दिल्ली में एक मौत' आदि कहानियों में सहजता से देख सकते हैं।

---

[165] हिन्दी कहानी, शिल्प इतिहास, आलोचना, पृ.सं.–51

कमलेश्वर की कहानियों में एक सामाजिक उद्देश्य है। उन्होंने तत्कालीन नारी जीवन की पूर्ण संवेदन शीलता को अपनी कहानियों में अभिव्यक्त करने की चेष्टा की है। उन्होंने पीड़ित और पराजित मध्यम वर्ग की संवेदना का चित्रण करने के साथ शोषण के सामाजिक यथार्थ का प्रभाव शाली उद्घाटन किया है। कमलेश्वर को किसी खोई हुई दिशा की तलाश है। यद्यपि उनकी कहानियां अभी उस दिशा को तो नहीं खोज पाई, किन्तु उस दिशा की ओर संकेत अवश्य दे रही है।[166]

डॉ0 माया शबनम ने अपनी कहानी संग्रह 'पोस्ट ग्रेजुएट बहू' में समाज के पारिवारिक जीवन में स्त्री–शोषण के विभिन्न आयाम प्रस्तुत किए है। उनकी कहानियों के पात्र, उनके शब्दों में, अपने पराये, ज्ञान–अज्ञान, चाहे अनचाहे, आकाश से धरती, घर के बाहर, गली से चौराहे के किसी मोड़ पर किस रूप में आकर वे मेरे हृदय के एल्बम से जुड़ गए हैं, मैं नहीं कह सकती। निश्चित ही उनकी कहानियां 'सुली पर ढंगा हुआ एक दिन' तथा 'ममता भरे हाथ' ऐसी सशक्त पारिवारिक परिवेश में सामाजिक शोषण की कहानियां हैं जो अपने आप में एक नयापन लिए हुए है। आधुनिक सामाजिक व्यवस्था में संयुक्त परिवार का विघटन तथा एकाकी परिवारों का विकास जीवन की एक अनिवार्यता है। रूढ़ियों से मुक्ति के हेतु संघर्ष करती नारी का चित्रण इस युग के अनेक कहानीकारों ने किया है, क्योंकि आज नारी परिवार से हटकर स्वावलम्बन की दिशा में अग्रसर हो रही है। संविधान में नारी को समानाधिकार प्रदान किए है। नारी शिक्षा को अब विशेष प्रोत्साहन मिला है। अब उसका दायित्व परिवार तक सीमित नहीं है। नारी को अकस्मात इतने रूपों के मिलने से उसके समक्ष अनेक नवीन समस्यायें उत्पन्न हो गई है। वह अपने प्राचीन संस्कारों को पूरी तरह नहीं भुला पाई, इसका रूप कुछ आधुनिक तथा कुछ प्राचीन हो गया। वर्तमान युगीन कहानीकारों ने नारी की इन्हीं विभिन्न समस्याओं का चित्रण अपनी कहानियों में किया है।

परिवार में आन्तरिक द्वन्द्व और संघर्ष की मात्रा बलवती होती जा रही है। स्वातन्त्रयोत्तर कहानियों में परिवार में या तो स्त्री–पुरूषों के सम्बन्ध टूट चुके हैं।

[166] डॉ0 इन्द्र नाथ मदान, हिन्दी कहानी अपनी जुवानी, पृ.सं.–122

या उब और घुटन के वातावरण में जी रहे हैं। अधिकांश कहानीकारों का सम्बन्ध नगरों से है और ये समस्यायें समृद्ध समाजों की देन है।

अन्य कहानीकारों ने भी सामाजिक सन्दर्भ में नारी शोषण को चित्रित किया है। धर्मवीर भारती की 'गुल की बन्नो' की पत्नी भी अपने समाज के प्रभाव में पति की क्रूरता का शिकार होती है। कमलेश्वर की 'एक अश्लील कहानी' का पति अपनी पत्नी कुन्ती को बड़ी बेरहमी से मारता है और यह कहकर घर से निकाल देता है कि जो भी तेरा सामान हो उठा ले और मुँह काला कर समाज का एक कुत्ता समाज के अपने जैसे अन्य कुत्तों के लिए पत्नी को ही सड़क पर मुक्त करना चाहता है। शिवप्रसाद सिंह की कहानी 'केवड़े का फूल' में पति अपनी पत्नी को पैरों की जूती समझता है। नरेश मेहता की 'अनबीता व्यतीत' की पत्नी चारू अपने पति के अतिरिक्त अन्य लोगो को भी अपने निकट देखना चाहती है।

एक विडम्बना यह है कि आज का पुरूष एक ओर तो दिखावटी रूप में समाज में नारी स्वतन्त्रता की बात करता है, दूसरी ओर परिवार में ऐसी साध्वी स्त्री की आकांक्षा रहता है जो दिन रात उसी में अनुरक्त रहे। सातवें दशक में पति–पत्नी के सम्बन्धों में तथा परिवार में तनाव अधक तीव्र हुआ। सम्बन्धों में कढ़वाहट आई। कारण यह है कि इन वर्षों में अनेक परिवर्तन हुए जिनकी प्रतिक्रिया स्वरूप आज के पति–पत्नी परिवार गत समाज में दाम्पत्य की चरम सीमा के दो बिन्दु नहीं है। अब वे किसी समानान्तर जिन्दगी के उपभोक्ता है। साठोत्तरी कहानीकार ने इस जटिल स्थिति का चित्रण बड़ी गम्भीरता से किया है।

हमारे सामाजिक दृष्टिकोण में बड़ा विरोधाभास है और वही विरोधाभास नारी स्वतन्त्रता की विचारधारा में भी है। घर की महत्ता आज भी नारी की दृष्टि में सर्वोपरि है। उसका ताज संभाल उसी का क्षेत्र है, उसमें कोई सहयोग नहीं देना चाहता। अतः घर बाहर दोनों का काम जो स्त्री के लिए निर्धारित है उसे करना पड़ता है। इस दोहरी भूमिका में कार्यभार अधिक हो जाने के कारण जब उसका निर्वाह नहीं होता, तो घर परिवार अस्त व्यस्त हो जाता है। इसका एक मात्र कारण सामाजिक सोच की अस्वस्थता है।

नारी परिवार की धुरी ही नहीं, मेरी समझ में पूरे समाज की धुरी है। अतः उसकी स्वतन्त्रता हेतु समाज के बदलते हुए दृष्टिकोण ने पारिवारिक जीवन में एक उथल पुथल मचा दी है। नारी की प्रगति से बोलबाला पुरुष समाज उससे भरपूर आर्थिक सहयोग तो चाहता है, किन्तु अपनी सहयोगिनी नहीं समझ पाता। वैचारिक स्तर पर यह भेद जाने–अनजाने पुरूष को नारी के प्रति असहनशील और आक्रामक बनाये रखता है। फलस्वरूप नारी का शोषण पुरूष–समाज के हाथों अब भी हो रहा है।

षष्टम अध्याय

स्वतन्त्रता के उपरान्त हिन्दी कहानीकारों में सर्वप्रथम कहानी को पूर्ण प्रतिबद्धता के साथ यथार्थ से जोड़कर सामाजिक निकटता प्रदान की। इसमें अपनी पूर्ववर्ती कहानी की भांति पात्रों की तलाश नहीं, यथार्थ की तलाश थी। उसका उद्देश्य पात्रों के माध्यम से यथार्थ की अभिव्यक्ति करना था। यह कहानी जीवन मूल्यों से सम्बद्ध होकर युगीन सत्यों की स्थापना के लिए संघर्षशील थी।

स्वतन्त्रयोत्तर नये हिन्दी कथाकार ने मानवीय संकट बोध के इस महान यथार्थ को एक मकान चुनौती के रूप में ग्रहण करते हुए शिष्टाचार के ऊपरी खोलों को हटाकर मनुष्य को केवल मनुष्य के रूप में ही चित्रित किया। उसने आलोचकों की चिन्ता किये बिना सत्य को सत्य के रूप में ही देखा। मोहन राकेश– 'जख्म' व 'आन्द्रा', राजेन्द्र यादव, 'तलवार पं0 हजारी कमलेश्वर 'बांस का दरिया' 'भारती' 'हरिनाकुश का बेटा' व 'यह मेरे लिए नहीं' निर्मल वर्मा, 'परिन्दे अमरकान्त' जिन्दगी और जोक' मार्कण्डेय 'धुन', भीष्म साहनी 'बीए की दावत' उषा प्रियम्बदा– 'जिन्दगी और गुलाब के फूल', मन्नू भण्डारी यही तय है', कृष्णा सोबती– 'बादलों के घेरे' रघुवीर सहाय– 'मेरे और नंगी औरत के बीच' कहानियां इस तथ्य के प्रमाण के लिए पर्याप्त है। साठोत्तरी कहानी का मूल स्त्रोत ही यथार्थ जीवन है। 'रक्तपात' 'आत्महत्या', 'सुख', वे दोनों एक पति के नोट्स आवाजें फिर भी आ रही थी, 'जीम हुई झील' 'नौ साल छोटी पत्नी' नया सम्बन्ध, 'कील', अनायक, कहानियों में यथार्थ चमत्कार विहीन है। उन्नाव वहां उन्नाव की तरह है। कहानी के बदलाव को रेखांकित करने वाला एक महत्वपूर्ण चिन्ह है। इनका यथार्थ कहानियों की भांति गढ़ा हुआ प्रतीत नहीं होता। इनको देखकर तो लगता है मानो यथार्थ से ही कहानी बनी है। संक्षेप में आज की कहानी का यथार्थ रूढ़ यथार्थ न होकर आत्म चेतना पर केन्द्रित यथार्थ है।

पिछले बीस बाईस वर्षों की व्याख्या के बाद यह स्वीकारा जाने लगा है कि स्वातन्त्रयोत्तर हिन्दी कहानी प्रमाणिक कहानी है। इसमें मध्य धर्म और निम्न मध्य वर्ग की सामाजिक स्थिति का चित्रण है और हमारा अधिकांश लेखक इसी वर्ग से

आया है। उसने इस वर्ग की हुई जटिलता, हर पीड़ा और संत्रास को स्वयं भोगा देखा और परखा है। वस्तुतः सृजनात्मक स्तर पर उसने अपनी कहानियों में जिस चित्र को उपस्थित किया है। निर्विवाद रूप से वह प्रामाणिक ही है। स्वातन्त्रयोत्तर कहानीकार ने युग के सारे विराट को गतिशील सामाजिक मूल्यों को, संस्कारों और संक्रमण को, व्यक्ति समूह की चेतन धारा में और कभी–कभी चेतना के अनेक स्तरों में एक साथ पकड़ने की सफल चेष्टा की है। इसलिए स्वातन्त्रयोत्तर कहानी मानव नियति और अन्तर्द्वन्द्व की मार्मिक अभिव्यक्ति है।[167]

व्यक्ति की समस्यायें ही समाज की समस्या है और नारी का संघर्ष ही मूलतः समाज का संघर्ष है। डॉ0 राधेश्याम गुप्त के कथनानुसार स्त्री के समस्त भाव पीड़ा, कुण्ठा एवं अभाव, जो आज कथ्य के रूप में अनायास ही मुखरित होते हैं, उनका जन्म अनायास न होकर समाज के धरातल से ही हुआ है। इसलिए वे समस्त वैयक्तिक स्वर सामाजिक चेतना से सहमत होकर ही कहानी साहित्य से अंकुरित हुए है।[168]

स्वातन्त्रयोत्तर कहानी का हर में और वह आधारभूत सामाजिक परिवर्तनों के ही सूचक है वह 'क' जो हार गया है, वह 'ख' जो घुट–घुट कर बिखर रहा है, वह 'ग' जो आस–पास की हर पवित्रता, आस्था नैतिकता, विश्वास की रूढ़ियां तोड़ देना चाहता है, यह 'ध' जो दुराचारी है, भ्रष्ट है, चोर है वह 'प' जो रिश्वत लेता है, आपरेटर टाइपिस्ट लड़की की मजबूरी भोगता है, वह 'त' जो धोखा देती है, वह 'न' जो व्यर्थ जिन्दगी में कही भी तन और मन से सुख का एक–एक पल नोच लेना चाहती है... 'वह' कोई भी हो, 'मैं' हूँ 'मैं' ही हूँ शायद हम सब है।[169]

डॉ0 नायदर सिंह के शब्दों में 'स्वातन्त्रयोत्तर' पीढ़ी के कहानीकारों में मानवीय मूल्यों के संरक्षण, जीवनी शक्ति के परिप्रेषण एवं सामाजिक नवनिर्माण की उत्कष्ट प्यास है।[170] यह प्यास ही स्वातन्त्रयोत्तर कहानी की सामाजिक यथार्थ ज्वलंत प्रमाण से। प्रेमचन्द्रोत्तर युग के कहानीकारों की कहानियां वैचारिकता एवं

---

[167] नई कहानी की भूमिका, कमलेश्वर, पृ.सं.–144
[168] प्रेमचन्दोत्तर कहानी साहित्य, डॉ0 राधेश्याम गुप्त, पृ.सं.–25
[169] एक दुनियां, समानान्तर, सं. राजेन्द्र यादव, पृ.सं.–71
[170] कहानी, नयी कहानी, डॉ0 नायदर सिंह, पृ.सं.–25

कलात्मकता की दृष्टि से महत्वपूर्ण होने के साथ–साथ यथार्थ परकता की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक, पौराणिक, ऐतिहासिक तथा मनोवैज्ञानिक कहानियों की प्रवृत्तियों में इसे स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है, इस युग के कहानीकारों में इलाचन्द्र जोशी के 'दीवाली और होली, 'रोमांटिक छाया' तथा 'खण्डहर की आत्माएं' आदि संग्रह प्रकाशित हुए है। इनमें मध्यवर्गीय समाज की अहम् भावना, कुण्ठा और मानसिक विकृतियों का चित्रण हुआ है। श्रीमती होमवती देवी की कहानियों में 'धरोहर' 'स्वप्न भंग' तथा 'अपना बर' प्रमुख है। जिनमें पारिवारिक एवं सामाजिक जीवन का विशद चित्रण किया गया है। समकालीन लेखकों की भांति इनका दृष्टिकोण भी आदर्शवादी होते हुए यथार्थ के प्रति आग्रहशील है। इनकी कहानियों में नारी शोषण, कुप्रथाओं और अन्धविश्वासों का सुधारवादी दृष्टिकोण से चित्रण हुआ है।

भगवती चरण वर्मा के प्रतिनिधि कहानी संग्रहों में 'इस्टालमेंट' 'दो बांके' 'राज और चिन्गारी' तथा 'खिलते फूल' प्रमुख है। इनकी कहानियों में तत्कालीन सामाजिक व नैतिक भावनाओं के प्रति विद्रोही की भावना मिलती है। उन्होंने यह संकेत किया है कि जब तक सामाजिक रूढ़ियां, कुरीतियां, अन्ध विश्वास और मिथ्या प्रदर्शन आदि दोष दूर नही होंगे, तब तक नारी अथवा समाज का सुधार नहीं हो सकता।

इस युग के यथार्थवादी कहानीकारों में यशपाल का नाम प्रमुख है। 'ज्ञानचन्द्र' अविशप्स', 'धर्मयुद्ध' तथा चित्र का वार्षिक उनके प्रमुख कहानी संग्रह है। पारिवारिक जीवन के विभिन्न पक्ष, सामाजिक नैतिकता, आर्थिक विषमता आदि इनकी कहानियों के प्रमुख विषय है। 'जैनेन्द्र की कहानियां' शीर्षक से दस भागों में जैनेन्द्र की समस्त कहानियां प्रकाशित हुई है। इनके मध्यम वर्गीय पारिवारिक जीवन, नारी शोषण, मनोवैज्ञानिक समस्याएं, बौद्धिक समस्याएं, स्वच्छन्छ प्रेम की समस्या तथा रूढ़ियों का व्यंग्यात्मक चित्रण किया गया है।

वाचस्पति पाठक की 'द्वादशी' में संग्रहीत कहानियां आदर्श वादी दृष्टिकोण प्रधान है। इनमें अधिकांशतः निम्न वर्ग के पात्रों की संवेदनाओं और अनुभूतियों का मनोवैज्ञानिक चित्रण हुआ है। चन्द्रगुप्त विद्याशंकर की 'वापिसी' तथा 'चन्द्रकला' में

संग्रहीत कहानियों में आधुनिक जीवन का यथार्थ चित्रण मिलता है। रामवृक्ष बैनीपुरी की कहानियों में समाज की निम्न वर्ग के शोषण का चित्रण है। इनकी कहानियों में नारी जीवन के शोषण एवं सुधार विषयत संकेत भी मिलते है। कमलादेवी चौधरी के 'उन्नाव' 'यात्रा तथा बेलपत्र' शीर्षक कहानी संग्रहों में नारी हृदय की सूक्ष्म अभिव्यंजना मिलती है। पारिवारिक जीवन, सामाजिक यथार्थ आदि का मनोवैज्ञानिक चित्रण इनकी कहानियों की विशेषता है।

इसी युग के कहानीकारों ने गुप्त का नाम भी उल्लेखनीय है। इनकी अधिकांश कहानियों में सामाजिक वर्गों की आर्थिक विषमता का चित्रण हुआ है। उपेन्द्र नाथ 'अश्क' की प्रतिनिधि कहानियां 'अंकुर' 'उदास' आदि संग्रहों में मिलती है। समाज में व्याप्त नैतिक मूल्यों की अर्धहीनता के साथ–साथ नारी शोषण तथा रूढ़िगत विचार एवं परम्परागत संस्कार की ओर भी संकेत किया है। इनकी कहानियों में सामाजिक यथार्थ के प्राप्त व्यंग्यात्मक दृष्टिकोण मिलता है। विष्णु प्रभाकर की प्रतिनिधि कहानियां आदि और अन्त तथा 'संघर्ष' के बाद आदि संग्रहों में मिलती है। नारी शोषण तथा संवेदनशीलता इनकी कहानियों की प्रमुख विशेषता है तथा मुख्यतः आदर्शोन्मुख यथार्थवादी दृष्टिकोण इनकी कहानियों में मिलता है।

राधा कृष्ण की प्रतिनिधि कहानियां 'कटेसर' शीर्षक संग्रह में प्रकाशित हुई है। विभिन्न सामाजिक वर्गों की आर्थिक तथा पारिवारिक समस्याओं का यथार्थपरक चित्रण उनकी कहानियों में मिलता है। मध्यम वर्गीय समाज में गृहस्थ जीवन कितना कष्टमय है और प्रत्येक ओर से नारी का कितना शोषण होता है, जीवन की कुण्ठायें उसे निरीह बनाये रखती है फिर भी वह संघर्ष में रस रहती है।

स्वातन्त्रयोत्तर युग के अनेक जागरूक कहानीकारों ने कलात्मक और वैचारिक दृष्टि से महत्वपूर्ण कहानियां लिखी। अमृतलाल नागर ने सामाजिक यथार्थ कटू व्यंग्यात्यकता राष्ट्रीय भावना आर्थिक विषमता, शोषण तथा हास्य व्यंग्य प्रधान कहानियां लिखी है। 'तुलाराम शास्त्री' 'वाटिका' और 'एटमाम' इनके कुछ कहानी संग्रह है। महादेवी वर्मा ने भी 'स्मृति की रेखाऐं' और अतीत के चलचित्र शीर्षक संग्रहों में संस्परणात्मक शैली में उध्व मध्य तथा निम्न वर्ग के जीवन का यथार्थ

चित्रण किया है। इनमें सामाजिक विकृतियों, वर्तमान में परवश नारी और बल मनोविज्ञान का चित्रण हुआ है।

भैरव प्रसाद गुप्त ने 'मंजिश', 'फरिश्ते', 'सुल्तान' तथा 'सपने का अन्त' आदि कहानी संग्रहों में सामाजिक जीवन के विभिन्न पक्षों का यथार्थ परक चित्रण किया है। स्वरूप कुमार वख्शी के संग्रह 'कोढ़ियों का नाग' तथा 'रेडियम के अक्षर' की कहानियों में अधिकांश वर्ग के पात्रों का यथार्थ परक चित्रण किया गया है। सामाजिक जीवन के विभिन्न पक्षों का चित्रण कुल की 'पगडण्डी और परछाइयां' तथा 'सपनों का टुकड़ा' शीर्षक संग्रहों की प्रतिनिधि कहानियों में मिलता है। अमरकान्त ने सामाजिक जीवन की विरूपताओं एवं कटुयथार्थ का चित्रण 'जिन्दगी और जॉक' शीर्षक संग्रह की कहानियों में किया है।

शान्ति मेहरोत्रा के दो संग्रहों 'सुरपाव के घर' तथा 'खुला आकाश मेरे पंख' की कहानियों में पारिवारिक व सामाजिक जीवन की अनुभूतियों के यथार्थपरक चित्रण मिलते हैं। बलवन्त सिंह के कहानी संग्रह में जरूर रोऊँगी, तथा डॉ0 शिवप्रसाद सिंह के संग्रह 'इन्हें भी इन्तजार है' में समाज के विभिन्न पक्षों का यथार्थपूर्ण चित्रण है। राजेन्द्र अवस्थी के 'मकड़ी के जाल' 'निर्मल वर्मा के 'परिन्दे राजेन्द्र यादव के 'जहाँ लक्ष्मी कैद है' तथा 'किनारे से किनारे तक' संग्रहों में समाज के विभिन्न वर्गों में व्याप्त कुण्ठाओं और विरूपताओं का यथार्थ परक चित्रण मिलता है। मन्नू भण्डारी की प्रतिनिधि कहानियां 'मैं हार गई' तथा 'तीन निगाहों की तस्वीर' संग्रहों में प्रकाशित हुई है जिनमें नारी मन के सूक्ष्म विश्लेषण तथा पारिवारिक जीवन के यथार्थ चित्र को रूपाचित किया गया है।

इस युग की कहानियों में मनोवैज्ञानिक दृष्टि के साथ सामाजिक युग चेतना कुण्ठा भावना, पलायनवृत्ति आदि का चित्रण अनेक रूपों में मिलता है। मोहन राकेश इस युग के प्रतिनिधि कहानीकार माने जाते हैं। इनकी कहानियां 'इन्सान के खण्डहर' 'नए बादल' तथा 'जानवर और जानवर' आदि संग्रहों में प्रकाशित हुई है। कमलेश्वर के प्रमुख कहानी संग्रह 'कस्बे का आदमी' तथा 'खोई हुई दिशाएं' में तथा राकेश के संग्रहों में आधुनिक मध्य वर्गीय समाज के विभिन्न वर्गों का यथार्थपरक एवं मनोवैज्ञानिक चित्रण किया गया है। उषा प्रियम्बदा के 'जिन्दगी और गुलाब के

फूल' संग्रह की कहानियों में नारीयन का सूक्ष्म विश्लेषण समाज के यथार्थ जीवन की पृष्ठभूमि में किया गया है।

हिन्दी कहानी का वर्तमान स्वरूप अनेक नवीन वैचारिक आन्दोलनों से प्रभावित है। वर्तमान कहानीकारों में जगदीश चतुर्वेदी की 'मुर्दा औरतों की झील' तथा मानवता की ओर 'कहानियों' में आधुनिक नागरिक जीवन के यथार्थ स्वरूप का चित्रण मिलता है। सेवक राम यात्री की 'थोड़ा', 'नीति रक्षा' तथा 'नदी प्यासी थी' कहानियों में आज के जीवन में व्याप्त निराशा तथा अकुलाहट का मनोवैज्ञानिक चित्रण मिलता है ये कहानियां मध्यवर्गीय जीवन की आधारशिला पर टिकी हुई खोखली जिन्दगी के चित्रण को प्रस्तुत करती है। डॉ0 प्रताप नारायण टण्डन की प्रतिनिधि कहानियों के 'बदलते इरादे' तथा 'शून्य की पूर्ति' दो कहानी संग्रह हैं जिनमें आधुनिक सामाजिक जीवन के प्रति लेखक के यथार्थपरक दृष्टिकोण की झलक मिलती है। रमेश वख्शी के 'मेज पर टिकी कुहनियां' में सामाजिक यथार्थ का, ज्ञान रंजन की 'बुद्धि जीवी' सीमाएं तथा 'ललांग' कहानियों में मानव जीवन के विभिन्न वर्षों का, गंगा प्रसाद विमल की 'सिर्फ एक दिन' 'दफ्तर' जैसी कहानियों में आधुनिक सामाजिक जीवन की पृष्ठभूमि में जटिल मानवीय सम्बन्धों का चित्रण मिलता है।

भीष्म साहनी की कहानियों में आर्थिक विषमता, अन्तर्विरोध तथा कटुता आदि का यथार्थ चित्र मिलता है। नारी जीवन की वर्तमान गति एवं यथार्थता को शशि प्रभा शास्त्री ने 'गहराइयों में गूंजते प्रश्न' तथा 'दो कोणों वाला एक बिन्दु' कहानियों में नवीन संदर्भों में चित्रित किया है। ममता अग्रवाल की प्रतिनिधि कहानियां 'एक अकेली तस्वीर' 'रोग का निदान' तथा 'छुटकारा' में नारी जीवन के विविध पक्षों का सूक्ष्म दृष्टि से अवलोकन किया गया है। आधुनिक नारी नवीन परिवर्तनों के कारण अपने को समय के अनुरूप न ढाल कर दुविधा में जी रही है।

वर्तमानकाल के कहानीकारों में 'रक्तपात' 'रीछ' के लेखक दूधनाथ सिंह, 'एक पति के नोट्स' के महेन्द्र भल्ला, 'लाशें और काउन', 'जिन्दगी एक पंचहीन' के लेखक सुरेन्द्र मल्होत्रा, 'अविवाहित पृष्ठ' 'बगैर तराशे हुए', एक सेण्टीमेंटल डायरी की मौत की लेखिका सुधा अरोड़ा, 'उसका अपना आप' तथा 'चरागाहों के बाद' की

अनीता औलक आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इनकी कहानियों में समाज के सभी पक्षों की कुण्ठाओं, विरूपताओं, आर्थिक दबावों से उत्पन्न घुटन एवं कटुता आदि का यथार्थपरक चित्रण मिलता है जिनमें नारी जन की अन्तर्व्यथाओं, आर्थिक विषमता से उत्पन्न अन्तर्विरोधों की एवं परिवार तथा समाज के वाह्य परिवेश के बीच सामंजस्य स्थापित करने की चेष्टा में छटपटाती हुई नारी के शोषण की अभिव्यक्ति की गई है।

सामाजिक संस्कृति परिवर्तन या प्रगति का कोई महत्वपूर्ण कदम तभी उठता है जब कोई भिन्न समुदाय मिलकर एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। आक्रमण कारी विजेता जातियों में से जिन्होंने अपनी भिन्न संस्कृति हम पर थोपने में जबरदस्ती की, उसी उद्देश्य से कुछ, चारवाह, स्त्री अपहरण जैसे अत्याचारों का सहारा लिया, उन्हें अपने को, अपने धर्म को, संस्कृति को बचाने के लिए हमने अपने जातीय, धार्मिक बन्धन और कठोर कर लिए। स्त्रियों को घर में बन्द कर और सुरक्षित कर लिया।

इस युग में सामन्तवाद का अवसान और औद्योगीकरण के फलस्वरूप पूंजीवाद का उदय हुआ। स्वातन्त्रयोत्तर युग भारत में ऐतिहासिक, राजनैतिक एवं सामाजिक दृष्टि से क्रान्तिकारी परिवर्तन का युग रहा है। एक लम्बी विदेशी दासता के उपरान्त भारत ने स्वतन्त्रता के वातावरण में सांस ली। नई कल्पनाएं जागी, प्रगति की नई योजनाएं बनी। औद्योगिक विकास के प्रयत्न होने लगी। परन्तु नई चेतना, शिक्षा महत्वाकांक्षाएं विदेशी संस्कृति का प्रभाव नवीनीकरण तथा आर्थिक संकटों के फलस्वरूप सामाजिक परिवर्तन का ऐसा दौर चला जिसकी व्यापकता और गहराई ने भारतीय समाज का मोह भंग कर दिया जिस सामाजिक नैतिक व्यवस्था से हम सदियों से जुड़े थे, छिन्न भिन्न हो गई।

स्वातन्त्रयोत्तर काल की कहानियों के माध्यम से समकालीन व्यक्ति के अन्तर्मन एवं वाह्य जीवन में हर सूक्ष्म और स्थूल परिवर्तनों, अन्तर्द्वन्द्वों और द्वन्द्वों का सहज रूप से अध्ययन किया जा सकता है। स्वाधीन भारत के व्यक्ति, समाज और राष्ट्रीय जीवन में अनेक परिवर्तन हुए है। नगर जीवन तनाव से भर गया है। सामाजिक और सांस्कृतिक संघर्ष बढ़ गए है। डॉ0 शिव प्रसाद सिंह कहते हैं, 'आज

हमारे नगरों में सांस्कृतिक और सामाजिक संघर्ष इतना तीव्र है, उतना अधिक गांवों में नहीं। प्रत्येक व्यक्ति के भीतर नए–पुराने के प्रति सैकड़ों संस्कार शुद्धरत है। जीवन बहुत व्यस्त और मशीनी होता जा रहा है, बाहर और मन में सैकड़ों तरह के प्रभाव एक दूसरे से टकरा रहे हैं।'[171]

स्वातन्त्रयोत्तर हिन्दी कहानीकारों ने इस यांत्रिकता से उत्पन्न संघर्ष, प्रतिस्पर्धा के परिणाम स्वरूप व्यक्ति की निरन्तर असुरक्षा की भावना का चित्रण किया है। शिव प्रसाद सिंह की 'प्रायक्ति' 'कमलेश्वर की बोई हुई दिशाएं' के पात्र अजनवीपन से तृप्त है। उनमें आत्मीयता की भूख इतनी प्रबल है कि अजनवीपन के माहौल में भी अनजाने चेहरे से समायोजित होने की चेष्टा करता है। वह इतना निराश, भयभात है। स्वतन्त्रता के उपरान्त नगरों तथा महानगरों की इस प्रकार की मानसिक स्थिति का चित्रण निर्मल वर्मा की 'लन्दन की एक रात', मोहन राकेश की 'आद्रा', राजेन्द्र यादव की 'टूटना' और 'प्रतीक्षा', मन्नू भण्डारी की 'वय', कृष्णा सोबती की 'यारों के यार' आदि कहानियों में किया गया है।

कहानीकारों ने ये स्पष्ट किया है कि स्वतन्त्रता के पश्चात भारतीय व्यक्ति के हाथ में स्वामित्व आने से उसकी मानसिकता में पर्याप्त परिवर्तन हुआ है। नगर की समस्याओं में जूझते व्यक्ति अपने विभाजित व्यक्तित्व की यन्त्रणा और संसार की नियति को भोग रहे हैं। नगरों के साथ–साथ ग्रामों के सामाजिक जीवन में भी पहले की अपेक्षा अधिक उन्मुक्ता दिखाई देती है। स्वतन्त्रता के पश्चात् सदा से व्याप्त सामूहिकता की भावना ग्रामों से लुप्त हो रही है। शिक्षा के प्रसार एवं नगरीकरण से ग्रामीण समाज में धर्म और रूढ़ियों की अवहेलना होने लगी है। विविध कहानीकारों ने ग्रामीण जीवन के परम्परागत पारिवारिक सम्बन्धों को टूटता हुआ दिखाया है।

भारतीय सामाजिक व्यवस्था में स्त्री और पुरूष समान रूप से समाज रूपी नारी के दो पहिए माने गए है। पुरूष के अभाव में नारी का अस्तित्व अधूरा है। नारी जहां एक ओर समाज में पुत्री, बहन, पत्नी और माता के रूप में कर्तव्यों का निर्वाह करती है वहीं पुरूष भी पुत्र, भाई, पति और पिता के रूप में अपने

[171] आधुनिक परिवेश और नवलेखन, डॉ0 शिव प्रसाद सिंह, पृ.सं.–14

उत्तरदायित्व के निर्वहण में पीछे नहीं रहा है। स्वातन्त्रयोत्तर कहानीकारों ने आर्थिक दृष्टि से स्वतन्त्र पुरूष का चित्रण किया है जो अपने वर्तमान से इतना बंधा है कि अपने भविष्य तथा अतीत दोषों से पूरी तरह से कटा हुआ है। आर्थिक दृष्टिकोण से नारी के आत्मनिर्भर होने से पुरूष की प्रभुता विभिन्न हुई है और इस आर्थिक अन्तराल से पुरूष को यह आभास करा दिया है। किनारी पर उसका एकाधिकार नहीं कहा। परिणामतः स्वातन्त्रयोत्तर पुरूष विविध वात्सल्य परिस्थितियों में अभाव तथा परिवार के अन्तर अपने आप को समायोजित करने में असमर्थ है।

बदली हुई सामाजिक व्यवस्था तथा सामाजिक सम्बन्धों का वर्तमान परिवारों पर स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। सभ्यता की उन्नति तथा समाज के स्तर में सुधार होने से वर्तमान में सुख सुविधा के साधन अधिक प्रभावशाली हो गए है, जिनको प्राप्त करने की चेष्टा में परिवार ने अपने महत्व को वो दिया है। आर्थिक और वैवाहिक विषमता परम्परागत जीवन मूल्यों का पुनर्मल्यांकन नयी और पुरानी पीढ़ी के संघर्ष, आवास की कमी, आवश्यकताओं में भिन्नता जैसी अनेक समस्याओं में संयुक्त परिवार की व्यवस्था के स्थान पर एकल परिवार को बढ़ावा दिया है। समाज के परिवर्तनों का प्रतिबिम्ब कथा–साहित्य के क्षेत्र में प्रेमचन्द्र के समय की कहानियों में उतर आया। उन्होंने 'शान्ति' 'बड़े घर की बेटी' और 'शंखनाद की संयुक्त परिवार की परम्परा निर्वाह के स्थान पर 'सुजान भगत' और 'सवा सेर गेहूँ' परिवार के टूटते हुए रूप को स्वीकार किया है। अज्ञेय और यशपाल की कहानियों में नए आकर्षण युवकों को भटकाव की और ले जा रहे हैं। इन कहानियों में नारी सामाजिक पिछड़ेपन और अशिक्षा के कारण परम्परागत मर्यादाओं में बंधी हुई है।

स्वतन्त्रता के पश्चात् परिस्थितियों में परिवर्तन आने से पुनः 'नयी कहानी' में बदलाव आया। इनमें पारिवारिक विघटन के साथ–साथ स्त्री–पुरूषों के सम्बन्धों में परिवर्तन का संकेत है। शिक्षित तथा सभ्य दम्पतियों के बीच भी अवशाप की स्थिति आ गई है और बदलते हुए सामाजिक प्रयत्न ऊपर से तो आधुनिक बनाने में लगे है और अन्दर से कही पुराने परिवारों में टूटन की स्थिति आ गई है। रिश्तों के टूटने के साथ मन भी टूट गये हैं तथा दिखावे में प्रसन्न अपने आप को समायोजित करने में असमर्थ है।

बदली हुई सामाजिक व्यवस्था तथा सामाजिक सम्बन्धों का वर्तमान परिवारों पर स्पष्ट रूप से दिखाइ देता है। सभ्यता की उन्नति तथा समाज के स्तर में सुधार होने से वर्तमान में सुख सुविधा के साधन अधिक प्रभावशाली हो गए हैं, जिनको प्राप्त करने की चेष्टा में परिवार ने अपने महत्व को खो दिया है। आर्थिक और वैवाहिक विषमता परम्परागत जीवन मूल्यों का पुनर्मुल्यांकन नयी और पुरानी पीढ़ी के संघर्ष, आवास की कमी, आवश्यकताओं में भिन्नता जैसी अनेक समस्याओं ने संयुक्त परिवार की व्यवस्था के स्थान पर एक परिवार को बढ़ावा दिया है। समाज के परिवर्तनों का प्रतिबिम्ब कथा साहित्य के क्षेत्र में प्रेमचन्द्र के समय की कहानियों में उतर आया। उन्होंने 'शान्ति' 'बड़े घर की बेटी' और 'शंखनाद की संयुक्त परिवार की परम्परा निर्वाह के स्थान पर 'सुजान भगत' और 'सवा सेर गेहूँ' परिवार से टूटते हुए रूप को स्वीकार किया है। अज्ञेय और यशपाल की कहानियों में नए आकर्षण युवकों को भटकाव की ओर ले जा रहे हैं। इन कहानियों में नारी सामाजिक पिछड़ेपन और अशिक्षा के कारण परम्परागत मर्यादाओं में बंधी हुई है।

स्वतन्त्रता के पश्चात् परिस्थितियों में परिवर्तन आने से पुनः 'नयी कहानी' में बतलाव आया। इनमें पारिवारिक विघटन के साथ–साथ स्त्री पुरूषों के सम्बन्धों में परिवर्तन का संकेत है। शिक्षित तथा सभ्य दम्पतियों के बीच भी अलगाव की स्थिति आ गई है और बदलते हुए सामाजिक प्रभाव बलपूर्वक ऊपर से तो आधुनिक बनाने में लगे है और अन्दर से वही पुराने परम्परागत भारतीय रूढ़ियों की जकड़ अत्यन्त तीव्र है। फलस्वरूप परिवारों में टूटन की स्थिति आ गई है। रिश्तों के टूटने के साथ मन भी टूट गये हैं तथा दिखावे में प्रसन्न दिखता हुआ व्यक्ति भी अपने भीतर छाये अवसाद और कुण्ठा की पर्त को धो नहीं पाता और धीरे–धीरे उसके अन्दर मानसिक विकृतियाँ पनपने लगती है। पहले जहाँ संयुक्त परिवारों में स्त्रियों के अधिकार सीमित अवश्य थे फिर भी कामकाजी अथवा गृहिणी, विधवा या परित्वक्ता परिवार में सभी को संरक्षण मिलता था आज बदली हुई परिस्थितियों में परिवार के टूटने पर या परिवार में रहते हुए कामकाजी होने पर अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। उसकी तथा कथित स्वतन्त्रता ने उसे और अधिक उत्तरदायित्वों में जकड़ लिया है।

पति–पत्नी के सम्बन्धों के साथ अन्य पारिवारिक सम्बन्धों में भी स्वार्थवश खिचाव उत्पन्न हुआ है। पुत्र अपनी माँ को चीफ को दी गई दावत के समय घर का कूड़ा साफ कर एक कमरे में बंद कर देता है।[172] राजेन्द्र यादव की 'तलवार पंच हजारी' में पारिवारिक मूल्यों की प्रतीक पंच हजारी तलवार को बेटा रोष में तोड़ देता है। परिवारों में आधुनिक परिस्थितियों में वृद्धपनों की स्थिति पहले से कहीं अधिक सोचनीय तथा दयनीय हो गई है। आधुनिक संस्कारों में जकड़ी नयी पीढ़ी के साथ समायोजन करने में वे असमर्थ है। मोहन राकेश की कहानी 'आर्द्रा'[173] की माँ तथा उषा प्रियम्बदा की 'वापसी'[174] के पिता दोनों ही इसी असमायोजन के शिकार है। इन बदलते हुए संदर्भ में विजय मोहन सिंह लिखते हैं, 'संवेदना में परिवर्तन का सबसे पहला और गहरा प्रभाव सम्बन्धों पर होता है, इसलिए पिछले वर्षों की कहानी मूलतः सम्बन्धों की कहानियां है। 'सम्बन्ध' चित्रण में लेखक सबसे ईमानदार होता है और अधिक आत्मविश्वास पूर्ण। इस सम्बन्ध में परिवर्तन के अनेक स्तर और दिशाएं हैं। हमारे तमाम सम्बन्ध अचानक संदिग्ध और सवाल बन गए है।[175] वास्तव में व्यक्ति व्यक्ति के बीच सम्बन्धों के नाम पर बहुत तेजी से परिवर्तन हो रहा है।

नारी के स्वतन्त्र आर्थिक अर्जन में पति–पत्नी के सम्बन्धों के बीच संशय का विष घोल दिया है। आज की नारी ने शिक्षा के प्रचार और प्रसार के कारण घर की चहारदीवारी के बाहर के अनेक सार्वजनिक क्षेत्रों के कार्य अपने ऊपर के लिए है। पाश्चात्य प्रभाव के कारण नारी स्वाधीन होने की चेष्टा में नौकरी व व्यवसाय को अपना रही है, लेकिन उसके कार्यक्षेत्र में विरोधाभास उत्पन्न हो गया है। सामाजिक परिस्थितियां भले ही बदल गई हैं, घर की महत्ता आज भी नारी के लिए सर्वोपरि है। उसके कार्य में कोई अन्य सहयोग नहीं देना चाहता और उसकी भूमिका का सही ढंग से निर्वाह न होने के कारण घर–परिवार अस्त–व्यस्त होने लगता। उसकी स्वतन्त्रता तथा बदलते हुए दृष्टिकोण ने पारिवारिक जीवन में उथल–पुथल मचा दी

[172] चीफ की दावत, भीष्म साहनी।
[173] आर्द्रा, रोये रेशे, संग्रह मोहन राकेश, पृ.सं.–21
[174] वापसी, जिन्दगी और गुलाब के फूल, संग्रह
[175] समकालीन कहानी, दिशा और दृष्टि, सम्पादक डॉ0 धनंजय

है। परिणाम स्वरूप आधुनिकता में स्त्री–पुरूष सम्बन्धों के दृष्टिकोण भी बदल गए है। समाज की परम्परागत मान्यताओं, रूढ़ियों तथा घिसे–पिटे मूल्यों को चुनौती देते हुए आधुनिकता के संदर्भ में यौन स्वप्सन्दता, विद्रोह, अस्तित्व चेतना आदि मूल्य नारी को तथाकथित रूप से सशक्त बना रहे हैं जबकि परिणाम रूप में निराशा, कुण्ठा और संत्रास मात्र ही उसके हाथ लग सके है और भौतिकवाद तथा भोगवाद का व्यामोह आज लगभग टूटने की स्थिति में आ गया है। वह आधुनिकता एवं परम्परागत मूल्यों के दोराहे पर असमंजस की स्थिति में है।

स्वातन्त्रयोत्तर युग की एक महत्वपूर्ण घटना है नारी जागरण। अब वह कहीं कोने में पड़ी रहने वाली गठरी नहीं रह गयी। यू ंतो नर–नारी की सामाजिक असमानता एवं दोहरे मानदण्डों से वैसे प्रबुद्ध नारी का मन असन्तोष से भरा था, परन्तु विशयतः देश के विभाजन की उथल–पुथल में जिस पशुता, बर्बरता, तिरस्कार एवं उपेक्षा का व्यवहार उसे पुरूष वर्ग एवं समाज से गिला उसकी प्रतिक्रिया स्वरूप नारी मन विद्रोह, वैषम्य एवं कुण्ठा से भर गया और उसने अपना पथ स्वयं बनाने के लिए आचरण बढ़ा लिए। उसके अन्दर एक व्यक्तिवादी दृष्टिकोण का उभरना स्वाभाविक था, जिसने उसके व्यक्तित्व को नये अन्याय दिये। हर धरातल पर नारी अपने स्वत्व के उन्मीलन के प्रयत्न में लग गयी। परम्परा से चले आ रहे पुरूष सत्तात्मक समाज के नैतिक मूल्यों में सहसा बदलाव आने लगा। कमलेश्वर के शब्दों में औरतें अब औरतें हैं, वे झूठी सती या वैश्यायें नहीं।

सच यह है स्वातन्त्रयोत्तर काल में नारी ने अपनी गरिमा और सम्मान के साथ उपस्थित होकर नई संज्ञा प्राप्त की है। अनेक कानून बनाकर नारी को नर के समान स्तर पर लाने का प्रयास किया गया है परन्तु इस तथ्य से भी इन्कार नहीं किया जा सकता कि इस परिवर्तन ने एक ओर नारी को नयी चेतना, नयी वैचारिकता एवं अधिकार बोध प्रदान किया है, वहीं कुछ नयी समस्याएं भी उत्पन्न कर दी है। समय की शिला पर वे सहज अपना परिवर्तन नहीं चाहती। अतः नैतिक मर्यादाओं की अवहेलना ने नारी जीवन को अनेक समस्याओं, विषमताओं, विसंगतियों, द्वन्द्वों एवं संघर्षों से भर दिया है जिसके कारण नारी के स्वरूप तथा नर–नारी सम्बन्धों में उल्लेखनीय परिवर्तन आया है।

बीसवीं सदी को महिला जागरण का युग कहा जाता है। महिलाओं के संगठित आन्दोलन हर दिशा में हो रहे हैं। अपने अधिकारों के लिए वे लड़ रही है। समाज और परिवार में सुरक्षित स्थिति के लिए, रोजगार और आत्मनिर्भरता के लिए, महिलाओं कर्मचारियों की आर्थिक सुरक्षा के लिए कानून पास करवाए जा रहे हैं। घरों और बच्चों की सुरक्षा के लिए विनाशक युद्धों के खिलाफ और विश्व शान्ति के पक्ष में आवाज उठायी जा रही है। परिवार कल्याण और बाल कल्याण की योजनायें चलायी जा रही है। पीड़ित नारियों के लिए संरक्षणात्मक उपाय काम में लाए जा रहे हैं। राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं के समाधान में स्त्रियों की भागीदारी बढ़े इसके लिए सन् 1975 का वर्ष 'अन्तर्राष्ट्रीय महिला' वर्ष के रूप में मनाया गया और सन् 1985 तक महिला उत्थान के विशेष कार्यक्रमों के लिए 'अन्तर्राष्ट्रीय महिला दशक' मनाया गया। परन्तु विडम्बना है कि एक ओर ये कार्यक्रम है, दूसरी ओर समाज में महिलाओं की स्थिति फिर से असुरक्षित होती जा रही है तथा उनका शोषण किसी न किसी रूप में विद्यमान है। इसलिए कि महिलाओं ने जो लड़ाई जीती है, वह केवल वैधानिक स्तर पर अधिकार प्राप्त भर है। यूं इस उपलब्धि के फलस्वरूप आज शासन, राजनीति, विज्ञान, शिक्षा, समाज कल्याण, संस्कृति, उद्योग, व्यापार, नौकरियां, ट्रेड यूनियन तक सभी जगह न केवल स्त्रियों की पहुंच है, परन्तु वो महत्वपूर्ण पदों पर आसीन है और उन्होंने इन सभी क्षेत्रों में अपनी प्रतिभा योग्यता का परिचय देकर युगों पुरानी मान्यताओं को बदल दिया है कि नारी पुरूष से हीन मानसिक स्तर की या दूसरे दर्जे की नागरिक मानी जाये, पर यही कुछ गलत हो गया एक ओर नारी अचानक ये अधिकार पाकर अधिकार के साथ जुड़े उत्तरदायित्व से भटक गयी, दूसरी ओर परम्परागत श्रेष्ठता की भावना को आघात लगने से पुरूष का अहं नारी की इस प्रगति को एकाएक गहन नहीं कर सका। इसीलिए दूसरी लड़ाई शेष है वह है सामाजिक भेदभाव और सामाजिक अन्याय को दूर करने की लड़ाई। संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रस्तावों और अन्तर्राष्ट्रीय क्रम संगठनों के नियमानुसार स्त्रियों को सभी क्षेत्रों में समान अधिकार है और सभी जगह भेदभाव समाप्त हो गए है। अब यदि व्यवहार में ये भेदभाव उपस्थित है तो ये स्त्री–पुरूष सहयोग से ही संभव है प्रतिद्वन्द्वता और .... दोषारोपण से नहीं। नारी शोषण को

समाप्त करने के लिए अपनी सामाजिक स्थिति में सुधार के लिए स्वयं स्त्रियों को पहल करनी होगी।

पिछले दशक में नारी मुक्ति आन्दोलन की चर्चा विश्वभर की प्रबुद्ध महिलाओं की जिवहा पर रही। शायद ही कोई पत्र–पत्रिका बची हो जिसने इस आन्दोलन के चित्र तथा विवरण न छाये हों, परन्तु पश्चिम और भारत की नारी में अन्तर है। पश्चिम की नारी प्राचीन काल से ही शोभित रही। वह माँ के रूप में पूजित नहीं रही, पत्नी व प्रेवसी के रूप में पह भोग्या पहले हैं। इस प्रकार सामाजिक विकृतियों के प्रति विद्रोह के रूप में और स्वतन्त्र अस्तित्व की मान्यता के लिए पश्चिम में नारी–मुक्ति आन्दोलन ने जन्म लिया।

मनोवैज्ञानिक वैसूदी पुत्रवचन ने अपनी पुस्तक 'द पेथगिन मिस्टिक' या 'नारी रहस्य कथा' में आँकड़े, जुटा कर वे सिद्ध किया कि पुरूष, प्रधान समाज ने दबाव डाल कर स्त्रियों को माँ अनने, ग्रहणी तथा रमणी की भूमिकायें ही स्वीकार करने के लिए विवश किया है। इसके स्त्रियों की मौलिक प्रतिमा कुण्ठित हुई है तथा समाज में उच्छू जनता और अस्थिरता बढ़ी है। चेट्टी प्रवहन की यह पुस्तक इतनी चर्चित व लोकप्रिय हुई कि पश्चिम में इसने नारी मुक्ति आन्दोलन को जन्म दिया और वे आन्दोलन पुरूष विरोधी मोर्चे में बदल गया और जिसने 'सोसाइटी फार कटिंग अप मैन' जैसी संस्थाओं को जन्घ दिया, परन्तु वे आन्दोलन असिवाद, प्रति क्रियावाद एवं बूचड़ सैक्सी मोर्चे पर उतर मान मूल उद्देश्य से भटक गया। जहाँ तक भारत की स्थिति है, मुक्ति आन्दोलन की पश्चिमी धारना से तुलना नहीं की जा सकती क्यों कि किसी भी आन्दोलन को प्रति द्वन्द्वता की भावना से नहीं, सहयोग की भावना से ही सफल बनाया जा सकता है, फिर पूर्व और पश्चिम की स्थितियां भिन्न है। भारतीय स्त्रियों और पश्चिमी स्त्रियों का अधिकार प्राप्ति का प्रतिहाल भिन्न है। भारतीय स्त्रियों ने कभी किसी युग में भी पुरूष के विरुद्ध बड़े होकर अधिकारों की लड़ाई नहीं लड़ी, उन्हें इसकी आवश्यकता ही नहीं पड़ी।

यहाँ नारी–शोषण का इतिहास मध्यकालीन विदेशी आक्रमणो की देन है। यहाँ नारी तभी परतन्त्र हुई जब हमारा सारा जातीय सन्तुलन बिगड़ा। हमारे समाज में जो भी बन्धन नारी पर लगे, ये उन नियमों की देन थे, जो भारतीय मनीषियों

द्वारा नारी के दमन के लिये नहीं, उनकी तत्कालीन सुरक्षा के लिये बनाये गये थे। उत्तरदायित्व की भावना उनमें निहित थी। ये भावना आज भी भारती पुरूषों में कम नहीं देखी जाती। यह अलग बात है कि कालान्तर में ये नियम शक्तिशाली पुरूषों के हाथ में असीमित अधिकार केन्द्रित करते हुये नए और घरों में बना अशिक्षित नारी इसे अपनी नियति मान स्वीकारती चली गयी। पर सुरक्षा के साथ संरक्षण और आजादी के साथ उत्तरदायित्व सहज ही जुड़ा होता है, यह नहीं भूलना चाहिए। भारतीय नारी को पूर्व, मध्यकालीन व वर्तमान स्थितियों को समय संदर्भ में देखना समझना चाहिए।

अगर भारतीय सन्दर्भ में देखे तो पुरूष वर्ग नारी के लिये कभी प्रतिद्वन्द्वी नही रहा। नारी जागरण का प्रश्न हो नारी अधिकारों का या राष्ट्रीय कार्यों में नारी की भागीदारी का पुरूषों ने आगे बढ़कर उसका आवाहन किया है और दोनों कहां से कहां मिलाकर आजादी की लड़ाई और समाज सुधार कार्यों में भाग लिया। पुर्न काल में नारी–जागृति और नारी उत्थान के लिये आवाज उठाने वाले राजा राम मोहन राय, स्वामी दयानन्द, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, महात्मा गान्धी, आचार्य जैसे महान नेता व सुधारक ही थे। नई स्थितियों में भी समय समय पर महिला असन्तोष की आवाज उठती है तो सभी परिवर्तन कामी पुरूष विचारक नेता और चम्पादहन केवल उसका स्वागत करते हैं परन्तु अपने प्रयत्नों से उसे बल प्रदान करते हैं।

परन्तु यह सत्य है कि बराबरी के वैधानिक अधिकार नारियों को प्राप्त है लेकिन समाज क्षेत्र में उनका कार्यान्वयन अभी ठीक से नहीं हो पाया है। सामाजिक मान्यता उन्हें नहीं मिली है। इसलिये पद, सुविधा से सम्पन्न मुट्ठी भर महिलाओं को छोड़कर औसत स्त्री के साथ सामाजिक भेदभाव और सामाजिक अन्याय अभी यथावत है। कानूनी अधिकारों को सामाजिक अधिकारों में परिवर्तन होने में समय लगता है। शीघ्र लक्ष्य प्राप्ति के लिए कालावधि को सुविचारित, सुनियोजित प्रयत्नों से छोटा करना होगा। प्रगति को एक दिशा देनी होगी। हमारी राष्ट्रीय सामाजिक नीति में कोई कमी रही हो, लेकिन प्रश्न यह है कि महिलाओं ने उसके लिए क्या किया। स्त्रियों को स्वतन्त्र भारत की स्वतन्त्र चेता नारी की पहचान बनानी है, अपनी खोई हुई शक्ति फिर से प्राप्त करनी है। महिलायें मानव जाति से अलग नहीं

हैं, समाज से अलग नहीं है। मनुष्य जाति के समाज के विकास के साथ ही उनकी स्थितियों में सुधार होता है और किसी देश की संस्कृति के आधार से भी इस विकास को अलग नही किया जा सकता। प्राकृतिक भिन्नता के बावजूद नारी पुरूष से कमजोर है, ये धारणा गलत है। भारतीय मनीषियों के अनुसार शारीरिक दल के ऊपर नैतिक दल लेकर और पुरूष का मातृ पद पाकर नारी पुरूष से ऊंची तथा श्रेष्ठ ठहरती ही है, आधुनिक मेडिकल सर्वेक्षणों ने इसे शारीरिक रूप से पुरूषों से अधिक सशक्त सिद्ध कर दिया। प्रत्येक परिस्थिति में नारी की स्वभावगत दुर्बलता ही उसे समस्याग्रस्त और पतनोन्मुख बनाती है। पूर्ण स्वतन्त्रता किसी नारी को सन्तुष्ट नहीं कर पायी। भय और असुरक्षा की भावना लिए जब तक वह पुरुष से सहायता मांगती रहेगी तब तक श्रेष्ठतव और हीनत्व भावना से मुक्ति असम्भव है। सहारा देने और लेने के अन्तर को मिटाया नहीं जा सकता। नारी का कामिनीभाव अब तक उसमें विद्यमान है। नारी–मुक्ति आन्दोलन का कोई अर्थ नहीं है बल्कि उसे नारी से मानवीय होने के लिए उसे बौद्धिक स्तर पर विकास करना होगा, तर्कशील वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाना होगा। अपने पूर्वाग्रहों से उठकर एक स्वतन्त्र और उदार व्यक्तित्व लेकर नारी–पुरूष सम्बन्धों में सहज मैत्रीभाव विकसित करना होगा, अधिकारों के साथ जिम्मेदारी भी गहन करनी होगी।

भारतीय संस्कारों वाली स्त्री पुरूष की प्रतिर्द्वद्विता की नहीं उसके सहयोग की चान्हा रखती है। आज आवश्यकता है कि पुरूषों में हीनभाव उत्पन्न करने के स्थान पर नारी अपने हीन भाव को छोड़ कर आगे बढ़े तथा समाज में पुरूषों का सहारा स्वयं प्राप्त करें, तिरस्कार नहीं। इसके लिये नारी को अपनी कमजोरियों से मुक्ति पानी होगी। नारी ही नारी के रास्ते का रोड़ा है, उसे अपनी ईर्ष्यालु प्रवृत्ति त्याग कर नारी मात्र की प्रगति में आगे बढ़ना चाहिए जिससे समाज में उसे सम्माननीय स्थान प्राप्त हो सके। परन्तु इसके विपरीत स्थिति आज यह हो गई है कि पुरूष से प्रतिरोध रूप में नारी बदला लेने के लिये तत्पर है। इसका प्रतिबिम्ब अनेक कहानीकारों की कहानियों में झलकता है। कई महिला कहानीकारों में विवाह नामक संस्था की व्यर्थता को व्यक्त किया है। आठवें दशक की महिला कथाकारों ने 'विवाह' संस्था की ओर अधिक विशुद्ध यथार्थ की दृष्टि से विश्लेषित किया है।

मृदुला गर्ग अपनी 'तुक' कहानी में विवाह और प्रेम को पूर्ण असंगत और व्यर्थ सिद्ध करती है। कथा नायिका पहले तो अपने को उन मूर्ख औरतों में से एक मानती है जो अपने पति को प्यार करती है वह पति, विवाह और संस्था को अति पूर्णास्पद स्थिति से देखती है। वह पति, विवाह और संस्था को अति घृणास्पद स्थिति से देखती है। पति का होना उसके लिए एक तरह से व्यवसाय से जिसके माध्यम से उसे पैसा और व्यवस्तता दोनों मिलते है। विवाह के बारे में सोचना ही मूल्यहीनता तथा व्यर्थहीनता है।

निरूपमा सेवती की दृष्टि में विवाह व्यक्तित्व का हनन करता है, अपने स्वरूप को मिटाता है। जिसके लिए आधुनिक नारी किंचित भी तैयार नहीं है कितना बड़ा शोषण है किसी व्यक्तित्व के लिए।

माँ बनने की कामना को नारी अपने अंतःस्तल में संजोती आयी थी, परन्तु आज नारी बच्चों की किच–किच से परेशान नजर आती है मानो वह मातृत्व से त्राण पाना चाहती है। इस मनः स्थिति का वर्णन भी रिश्तों की टूटन में है। निरूपमा सेवती की 'तल कलाहट' की नारी भी मातृत्व को भार समझती है। सिम्मी हर्षिता की 'वक्र भोग' में विवाह और मातृत्व के प्रति ऐसी ही विरक्ति प्रगट हुई है। आज आधुनिक नारी ने पाप, नैतिकता, धर्म के अंकुश को अस्वीकार कर दिया है। मन्नू भण्डारी की 'यही सच है' मैं दीपा के बारे में यही घोषित किया है। दीप्ति खण्डेलवाल की 'हहन्या' में प्रेम के पुराने आदर्शों को थोथर कह कर उड़ा दिया और नये को आधुनिकता का लेखन चिपका कर नवीन चेतना का झंडा गाड़ दिया है। इन कहानियों में रूढ़िवाद पर करारी चोट हैं, मगर सम्बन्धों की टूटन से क्या व्यक्ति बनेगा या समाज। स्त्री–पुरूष के सम्बन्धों को पारिवारिक स्तर पर न देखा जाय तो भी इनमें तनाव और परिवर्तन है।

यदि समकालीन तथा लेखिकाओं की कहानियों के आधार पर नारी शोषण देखा जाय तो उसमें सिर्फ विद्रोह, क्रान्ति, शोषण, कुण्ठा, घुटन, तनाव, संत्रास, अब, भीड़, अकेलापन, भय, व्यर्थता, संघर्ष, स्वार्थ, टूटन, टकराहट, आक्रोश, व्यर्थताबोध, खालीपन, विघटन, नये आधुनिक पैंधान की शब्दावली का प्रयोग अधिकतम है। इन

इन शब्दों से उबरने की जरूरत महसूस होती है। शायद आज नारी खण्डित मूल्यों से निस्तार पा सके।

इस देश में नारी हमेशा से दलित, शोषित और पीड़ित थी यह बात बिलकुल झूठ है। प्राचीन साहित्य अथवा प्राचीन इतिहास का थोड़ा सा ज्ञान इस झूठ को स्पष्ट कर देगा। वास्तव में समाज में स्त्री की अवनति प्राचीन काल और प्राचीन जाति संगठन की विशेषता नहीं रही, बल्कि सर्वत्र मध्य वर्ग के साथ जुड़ी रही। आज कल पढ़े लिखों का नारी आन्दोलन भी यही समझता है। पश्चिमी सभ्यता ने भी हमें यही सिखाया है कि परम्परा के प्रति विद्रोह करिए और विद्रोह का यह रूप बहादुरी मान लिया जाता है। प्रचार माध्यमों द्वारा और स्त्री वर्ग में बढ़ती साक्षरता के कारण राजनीतिक चेतना भी बढ़ती जा रही है। फलतः नारी मुक्ति आन्दोलन नारी संगठनों की सक्रियता आदि चारो बड़े शहरों से कस्बों और छोटे शहरों तक फैलती चली गयी है। इन सबका असर है कि नारी और नारी सुरक्षा का प्रश्न बहुत अर्थपूर्ण हो उठा है। एक बात का बार–बार कहने से उसका प्रभाव पड़ता ही है। वह सारी टकराहट भारतीय और पश्चिमी दृष्टि की है ये सारी समस्या मुस्लिम आक्रमणों के बाद पर्दाप्रथा और एक दूसरे प्रकार के पुरूष प्रधान सांस्कृतिक मूल्य संरचना के समाज से 'आमना–सामना' होने पर पैदा हुआ और तीव्र भी बनी उन्नीसवीं शताब्दी में ब्रिटिश राज सत्ता के जड़ जमाने के बाद क्यों कि इन बाहर से आये विचारों को हमने ज्यों का त्यों अपनाना चाहा जाति–जाति और प्रदेश–प्रदेश भिन्न होते चले गए। केरल के मात्र सत्तर परिवार के स्त्री–पुरूष, नागालैण्ड के आदिवासियों के सम्बन्ध और राजस्थान व हरियाणा के स्त्री–पुरूष सम्बन्ध एक से नहीं, फिर हम भारतीय दृष्टि किसको कहें। स्त्री–पुरूष सम्बन्धों की सामाजिक मान्यताओं के बारे में सहिष्णुता–असहिष्णुता के स्तर अलग–अलग है।

औद्योगिक उपभोक्ता संस्कृति और पश्चिमी प्रभाव की अपरिहार्यता के साथ–साथ कामकाजी औरतें बढ़ेग, मर्द–औरते एक साथ काम करेगी। चरित्र हनन, अशलील साहित्य का प्रचार–प्रसार होना। क्योंकि नारी समाज से बाहर नहीं है। नारी पर सबसे ज्यादा अत्याचार नारी ही करती है बेशक यह सब तो संस्कारों के सम्मोहन के कारण करती है, उसी सम्मोजन से उसे मुक्ति पानी है लेकिन मुक्ति

का अर्थ आन्दोलन या स्वच्छन्दता नहीं, स्वयं जीने का अधिकार पाना है यह अधिकार अधिक दायित्व की अपेक्षा करता है यानी मुक्ति का अर्थ दायित्व पूर्ण जीवन ही है।

महिलाओं में ऐसी चेतना का संवार करना होगा कि वे अपने मौलिक अधिकारों और कर्तव्यों को समझने की कोशिश करे, आज महिलायें अपनी समस्याओं को मात्र उजागर न करे वरन् जीवन से जुड़ी अध्यायों के निराकरण एवं प्रतिकार के लिये भी कोई दिशा देनी होगी। दहेज के विरोध में जब तक महिलायें स्वंय संगठित नहीं है तब तक दहेज प्रथा को समाप्त नहीं किया जा सकता जो नारियों के शोषण का मुख्य आधार है।

नारी जब प्रत्येक स्तर पर समाज की बनाई पारस्परिक मान्यताओं को तोड़कर अपनी अस्मिता को पाना चाहती है। सृष्टि के आरम्भ में आज तक नारी को लेकर जो कुछ सोचा, विचारा निर्धारित किया गया उन सब के आइने में आज की स्वतन्त्र और मुक्त नारी को अपनी छवि बनानी होगी। संवेदनशील औरत को परम्परा से प्राप्त अपनी सारी परिभाषाएं अमूर्त, परस्पर विरोधी और एकांगी लगती है। समाज में कभी नारी को केवल श्रद्धा कहा गया कभी साक्षात पतन का गति कहा गया। कोई उसे आंचल में दूध और आँख में पानी भरे हुये अवला कहता है। कोई महाशक्ति कहकर पूजता है। मातृशक्ति के रूप में वह सृष्टि को विस्तार भी करती है और काल रात्रि या माया बनाकर उससे बंधने के उपाय भी बताये हैं। लगता है कि स्त्री–स्त्री न होकर अंधों का हाथी हो गई। व्यक्तित्व का जो पक्ष देखा उसे ही उसका सम्पूर्ण रूप कह दिया गया। जब चाहा असूर्यवश्या पतिव्रता आमरण पति पिता पुत्र की रचिता बना दिया। जब चाहा नारी को पाँच पुरूषों की पत्नी बनवा दिया नियोग करवा दिया। यह परस्पर विरोधी मानदण्ड आखिर कौन से मुद्दों पर टिके हैं। इन विसंगतियों को देखने समझने के बाद बहुत भिन्नता होती है। औरत मर्यादा की सलीव उठाये परिवार के लिये मसीहा बनी रहे। सेवा में तनम न जुटा दे। सब बनने का मित्र लिये तो पारिवारिक तथा वैयक्तिक रिश्तों को उसका खून पीने में बड़ी सुविधा होती है। आत्म ग्रस्तता, हीनताबोध, दब्बूपन, मानसिक निष्क्रियता आपसी शंका और ईर्ष्या भौतिक सुरक्षा के लिये, अतिरिक्त

आग्रह आदि ऐसे गुण है जो स्त्रियों को ही नहीं किसी भी लम्बे अर्से से दबी हुई कॉम में पति स्थिति यज्ञ आ जाते हैं। इनका सम्बन्ध जैविक नियमों से नहीं वर्ग विशेष की हानि तथा पराजयी सामाजिक आर्थिक स्थितियों से होता है।

आधुनिक औरत इनत माम बनी बनायी रूढ़ियों को नकार कर अपनी अर्द्धमानव स्थिति को अस्वीकार कर सम्पूर्ण मानव बनने और चेतना को संघर्षरत रखने के लिये प्रयत्नशील है। स्त्री का यह नया रूप उसके मानवता का अनिवार्य और पूरक भी बनाना चाहता है। समाज में अपनी अहम् भूमिका के साथ स्थापित होना चाहता है। स्वतन्त्रता के बाद भारतीय समाज में नारियों का एक वर्ग अपेक्षित है असहाय है, क्योंकि वे आर्थिक दृष्टि से पिता, पति अथवा पुत्र पर आश्रित है। दूसरा वर्ग शिक्षित, आर्थिक दृष्टि से सुरक्षित अहम् से गर्वोन्नत नारियों का तीसरा वर्ग उन नारियों का है जो पाश्चात्य सभ्यता से प्रभावित है जो भोग विलास तथा स्वच्छन्दता को अपना जीवन समझने लगी है। चौथा वर्ग है विद्रोहिणी नारी का जो पुरूष के शोषण के विरोध में आवाज उठाती है उसके प्रति आक्रोश प्रकट करती है, चौके चूल्हे की चारदीवारी को व्यर्थ समझ पुरूष के समान अपना स्थान चाहती है। नारी शोषण का प्रश्न आज में किसी वर्ग का है न वर्ग संघर्ष का। धीरे–धीरे पकती स्थितियों का यह विस्फोट पूरे सामाजिक परिवेश की उपज है। औद्योगिक उपभोक्ता संस्कृति एवं पश्चिमी प्रभाव अपने के कारण कामकाजी स्त्रियां और अधिक आयेगी तथा विभिन्न प्रकार के पुरूषों के साथ कार्य करेगी। नारी शोषण रोकने के कुछ उपाय आधुनिक परिवेश में कारगर सिद्ध हो सकते हैं–

1. बालक–बालिकाओं को यौन शिक्षा देने की व्यवस्था होनी चाहिये इसेस यौन के प्रति 'रहस्यमय' आकर्षण कुछ कम होगा।
2. बालिकाओं को अपनी आत्मरक्षा करने के लिये कुछ ऐसे व्यायाम सीखना चाहिये जिससे वह अवांछित लोगों से अपनी रक्षा कर सके।
3. समाज में नारी के प्रति आदर की भावना चाहिये। साहित्य द्वारा आदर्श पत्नी, अगिनी के चरित्र सामने आने चाहिये। प्रचार माध्यवर्ग द्वारा नारी का शोषण विज्ञापनों द्वारा समाप्त किया जाना चाहिये।

4. बालक–बालिकाओं को किसी रचनात्मक आदर्श की ओर प्रेरित करना चाहिये।

5. पतिताओं के प्रश्न को पुनः नई दृष्टि से देखना चाहिये। अवांछित बच्चों की भ्रूण हत्या रोकी जानी चाहिये।

6. यौन से सम्बन्धित पाप धारणा मन से निकाल देनी चाहिये। जीवन के अन्य व्यापारों की तरह ग्रहस्थ जीवन भी एक महत्वपूर्ण सामाजिक संस्था है। यह शिक्षा देना अति आवश्यक है।

7. समाज में प्रतिष्ठा प्राप्त लोग जो बच्चों नारी के साथ अन्याय करते हैं एवं माने जाने चाहिये। मुक्त घोनाघार की भावना को समाप्त किया जाना चाहिये।

8. स्त्री में मातृत्व की भावना रहती है। अतः वह प्रकृति तथा स्वभाव से ही आत्म रक्षा अधिक रहती है। उसका परिणाम है कि पुरूष अधिक उक्त बना है। स्त्री संगठन एक दिशा में अच्छा कार्य कर सकते हैं। दुर्भाग्य से नारी शोषण को रोकने हेतु नारियों द्वारा जो नारी आन्दोलन चलाये जा रहे हैं। इनके पीछे सिवाय शिकायत करने तथा अपने को शोषित कहने के अलावा कोई वैवाहिक शक्ति नहीं होती। जिस दिन स्त्रियों के आन्दोलन में वैचारिक शक्ति होगी उस दिन से वे केवल नारी शोषण के आन्दोलन ही नहीं रह जायेगे।

आज स्त्री की आर्थिक और बौद्धिक स्वतन्त्रता उसकी सामाजिक और राजनीतिक स्वतन्त्रता का आधार स्तम्भ हो सकती है। इसके लिये देश के नेतृत्व चिन्तकों, लेखकों और स्त्री संगठनों को मिलकर स्थिति में परिवर्तन लाना होगा। माता लड़का–लड़की में भेद न करें, पठन–पाठन तथा धनोपार्जन के समान अवसर हो छोटी आयु में विवाह न हो, स्वेच्छा से दी गई सहमति से ही दहेज का प्रश्न न उठे, पैतृक सम्पत्ति में पुत्री का समान अधिकार हो। कानून और समाज दोनों स्त्री के शोषण के प्रति जागरूक रहे। स्वयं स्त्री भी अपने को पराधीन न होने दे। सिनेमा, नाटक, मॉडल किसी भी रूप में अपनी नग्नता को व्यवसाय का साधन न

बनाये। पुरुष के दुर्व्यवहार के प्रति उसका सामना करने की सामर्थ्य रखे। यदि स्थिति न सुधरे तो अकेले अपने कन्धों पर अपनी संतान का बोझ लेकर चले। स्त्री यह कभी न भूले कि दुर्बल को सभी सताते हैं। मानसिक, शारीरिक, चारित्रक तथा आर्थिक इन चार स्तम्भों पर बल उपार्जित करके आज की नारी शोषित होने से बच सकती है तथा सभ्य एवं स्वस्थ्य जीवन बिता सकती है तथा धीरे धीरे उसकी उन्नति हो सकती है।